"सामाजिक व्यवस्था का न्यायिक प्रक्रिया पर प्रभाव"

(अहस्तक्षेपीय अपराधों के सन्दर्भ में तुलनात्मक अध्ययन)

समाजशास्त्र में डॉक्टर ऑफ फिलासफी की
उपाधि के निमित्त प्रस्तुत शोध - प्रबन्ध
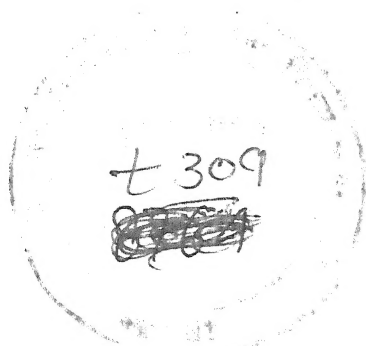
शोध निर्देशिका

डॉ० गार्गी
प्राचार्या एवं अध्यक्ष
समाजशास्त्र विभाग
आर्यकन्या स्नातकोत्तर विद्यालय, झांसी
बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी (उ० प्र०)

द्वारा

जिनेन्द्रकुमार जैन
बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी (उ० प्र०)

• • •

1985

प्रमाण-पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि श्री जिनेन्द्र कुमार जैन द्वारा प्रस्तुत शोध प्रबन्ध "सामाजिक व्यवस्था का न्यायिक प्रक्रिया पर प्रभाव" (अहस्तक्षेपीय अपराधों के सन्दर्भ में तुलनात्मक अध्ययन), एक मौलिक शोधकार्य है।

यह भी प्रमाणित किया जाता है कि वर्तमान शोध प्रबन्ध पूर्ण अथवा आंशिक रूप से अन्य संस्था में किसी भी उपाधि की अपेक्षा से प्रस्तुत नहीं किया गया है।

शोधकर्ता द्वारा वर्तमान शोधकार्य बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी की नियमावलि के अनुरूप मेरे निर्देशन में किया गया है।

शोधकर्ता
जिनेन्द्र कुमार जैन 17/8/05
जिनेन्द्र कुमार जैन
बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय
झाँसी (उ०प्र०)

शोध निर्देशिका
डा० गार्गी
प्राचार्या एवं अध्यक्ष
समाजशास्त्र विभाग
आर्य कन्या स्नातकोत्तर विद्यालय
बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय
झाँसी (उ०प्र०)

विषय-सूची

		पृष्ठ संख्या
प्राक्कथन	... ...	i - iii
तालिका सूची	... ...	iv - vi
चित्र सूची	... ...	vii
अध्याय 1.	प्रस्तावना	1-61
	1. साहित्य का पुनावलोकन ...	1-52
	2. बुन्देलखण्ड क्षेत्र के संदर्भ में सामाजिक एवं न्यायिक व्यवस्था ...	52-55
	3. वर्तमान शोध समस्या की विवेचना एवं उपयोगिता	56-60
	4. वर्तमान शोध अध्ययन के उद्देश्य	60-61
अध्याय 2.	अध्ययन पद्धति	62-92
	1. अध्ययन क्षेत्र	62-78
	2. संग्रहित तथ्यों की व्याख्या ...	78
	3. आदर्श आकार	78-85
	4. तथ्यों को एकत्र करने की विधियां	86-88
	5. सामग्री स्रोत	88
	6. सामाजिक यांत्रिकी ...	89
	7. तथ्यों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण	89-90
	8. वर्तमान शोध कार्य का पुर्वानुमानित उपयोग	90-91
	9. वर्तमान शोध अध्ययन की सीमायें	91-92

अध्याय 3.	न्याय प्रणाली एवं सामाजिक व्यवस्था	93-127
	1. सामान्य विवरण ...	93
	2. जाति एवं न्यायिक प्रक्रिया ...	93-104
	3. शिक्षा एवं न्यायिक प्रक्रिया ...	105-113
	4. आयु एवं न्यायिक प्रक्रिया ...	113-123
	5. विश्लेषण	123-127
अध्याय 4.	न्याय प्रणाली एवं अर्थ व्यवस्था ...	128-151
	1. सामान्य विवरण ...	128
	2. आर्थिक कारक ...	128-149
	3. विश्लेषण	149-151
अध्याय 5.	न्याय प्रणाली एवं राजनयिक व्यवस्था	152-172
	1. सामान्य विवरण ...	152-156
	2. जाति पर आधारित राजनैतिक गतिविधियाँ	156-159
	3. शिक्षा पर आधारित राजनैतिक गतिविधियाँ	159-162
	4. आयु पर आधारित राजनैतिक गतिविधियाँ	162-164
	5. व्यवसाय पर आधारित राजनैतिक गतिविधियाँ	164-168
	6. विश्लेषण	168-172
अध्याय 6.	न्याय प्रणाली एवं सम्बन्धित कारक	173-184
	1. सामान्य विवरण ...	173-180
	2. पुलिस प्रशासन	180

	3. अहस्तक्षेपीय अपराधों का स्वरूप	180-181
	4. न्याय प्राप्ति	181-182
	5. दलाल	182-184
	6. विश्लेषण	184-194
अध्याय 7.	व्यक्तिगत अध्ययन ...	195-243
	1. पीड़ित	195-212
	2. अपराधी	212-227
	3. साक्षी	227-243
अध्याय 8.	उपसंहार	244-268
	1. समीक्षा	244-251
	2. निरीक्षण	252-262
	3. संस्तुति	262-268
	संदर्भ ग्रन्थों की सूची ...	269-281
परिशिष्ट	साक्षात्कार अनुसूची का प्रारूप ...	282-284

=:=

:=:

प्राक्कथन

वर्तमान समय में विभिन्न समाज-वैज्ञानिकीय शोध क्षेत्रों में तीव्र गति से प्रतिस्पर्धा दृष्टिगोचर होती है । विकसित देशों में विभिन्न समाजशास्त्रीय मूल्यों का जो प्रारूप प्रारम्भिक समय में विद्यमान था उसका वर्तमान समय में लोप होता जा रहा है । यह अनुमान विभिन्न समाजशास्त्रीय शोध कार्यों के द्वारा प्रतिपादित व्याख्याओं से स्पष्ट होता है । भारत-वर्ष जैसे प्रजातान्त्रिक देश में विभिन्न सामाजिक मूल्यों के सन्दर्भ में निश्चित रूप से जो जटिलता उत्पन्न हुई है वह स्पष्ट रूप से औद्योगिक विकास की प्रक्रिया का परिणाम है । इस दृष्टि से यह आवश्यक है कि सामाजिक व्यवस्था एवं न्याय प्रक्रिया से संबंधित विभिन्न तथ्यों का निरूपण समाजशास्त्रीय शोधकार्य की सहायता से किया जाये ।

उपर्युक्त पृष्ठभूमि में वर्तमान शोध कार्य भारत वर्ष के उत्तर प्रदेश प्रांत में स्थित जनपद झाँसी में किया गया है । स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात आज भी तकनीकी विकास एवं सामाजिक उत्थान के क्षेत्रों में यह जनपद पिछड़ा हुआ है । परम्परागत रूप से भूमि विवाद इस जनपद की सबसे गंभीर समस्या है । भूमि से संबंधित विवाद परोक्ष एवं अपरोक्ष रूप से सामाजन्यायिक व्यवस्था को प्रभावित करते हैं । इसी तथ्य को वर्तमान शोध कार्य के लिये परिकल्पना का आधार निर्धारित करते हुये, विभिन्न समाजन्यायिक तथ्यों को विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है । यह शोध कार्य भारतीय दण्ड संहिता में वर्णित अहस्तक्षेपीय अपराधों के सन्दर्भ में किया गया है । वर्तमान शोध कार्य समाजशास्त्रीय क्षेत्रों में निश्चित रूप से जनपदीय प्रारम्भिक सूचनायें प्रदान करने में एक उपयोगी कड़ी सिद्ध होगा ।

वर्तमान शोध कार्य डा० गार्गी, पी एच०डी० प्राचार्य, आर्य कन्या स्नातकोत्तर विद्यालय, झाँसी एवं वरिष्ठ समाजशास्त्री, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झाँसी के निर्देशन में किया गया है । शोध प्रबन्ध के सम्पूर्ण निर्माण के लिये प्राप्त निरन्तर उपयोगी सुझाव एवं स्नेहपूर्ण मार्गदर्शन द्वारा ही यह गुरुतर कार्य सम्पन्न हो सका है । इस दिशा में प्राप्त रचनात्मक एवं उत्प्रेरक सुझावों के अभाव में शोध प्रबन्ध वर्तमान संरचना प्राप्त नहीं कर सकता था । मैं व्यक्तिगत रूप से इस अकथनीय सहयोग के लिये अपना आभार शब्दों में व्यक्त करने में आजीवन असमर्थ रहूँगा ।

वर्तमान शोध प्रबन्ध की विषय वस्तु, अध्ययन पद्धतियाँ एवं तथ्यों के विश्लेषण के लिये विभिन्न क्षेत्रों से जो उपयोगी सुझाव प्राप्त हुये हैं उनके प्रति मैं अपना आभार हृदय से व्यक्त करता हूँ । इस दिशा में डा० एन० के० गौराहा, अध्यक्ष समाज-शास्त्र विभाग, सागर विश्वविद्यालय सागर, डा० अशोक श्रीवास्तव, प्रवक्ता, मनोविज्ञान विभाग, एम०डी० विश्वविद्यालय, रोहतक, एवं डा० आर० जी० सिंह रीडर, समाजशास्त्र विभाग, भोपाल विश्वविद्यालय भोपाल से अविस्मरणीय सहयोग प्राप्त हुआ है ।

वर्तमान शोध प्रबन्ध की सम्पूर्णता हेतु मैं डा० अरूण कुमार शुक्ला समाजमानवशास्त्री का हृदय से आभारी हूँ जिन्होंने वांछित सहयोग एवं परामर्श द्वारा इस कार्य को सम्पन्न कराने में योगदान किया है ।

वर्तमान शोध कार्य को प्रारम्भिक प्रेरणा प्रदान करने में डा० हुकुम चन्द्र जैन का जो प्रयास प्राप्त हुआ है उसके प्रति मैं आभार व्यक्त करता हूँ ।

संग्रहीत तथ्यों की प्राप्ति एवं समायोजन के लिये जिला जज झाँसी, जिलाधीश, झाँसी, वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक झाँसी, समस्त न्यायिक मजिस्ट्रेट, झाँसी अभिलेख अधिकारी झाँसी, अभियोजन अधिकारी झाँसी अभियोजन अधिकारी उरई, एवं सभी सम्बन्धित लिपिकगणों के प्रति आभारी हूँ । इस शोध कार्य हेतु अनेकों वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी, पुलिस अधिकारी, न्यायाधीश एवं अधिवक्तागण के सुझाव उपयोगी रहे हैं । मैं व्यक्तिगत रूप से अपना आभार प्राप्त स्नेह के लिये व्यक्त करता हूँ ।

वर्तमान शोध कार्य के लिये विभिन्न पुस्तकालयों से सूचनायें एकत्र की गयी हैं । इस सन्दर्भ में, मेरा यह परम कर्तव्य होगा कि पुस्तकालयाध्यक्ष, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झाँसी; सागर विश्वविद्यालय सागर एवं दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली के प्रति आभार व्यक्त करूं ।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध निश्चित रूप से विभिन्न व्यक्तियों द्वारा प्रदत्त सहयोग से घिरा हुआ है एवं समस्त व्यक्तियों को यहाँ समायोजित करने में असमर्थता सी प्रतीत हो रही है । इस दिशा में मैं अपनी पत्नी श्रीमती कुसुम जैन एवं बच्चों का उल्लेख आवश्यक रूप से करना चाहूँगा । इन सदस्यों द्वारा स्थापित पारिवारिक सौम्य वातावरण एवं प्रदत्त प्रेरणा के प्रति मैं अपना आभार व्यक्त करता हूँ ।

॥ जिनेन्द्र कुमार जैन ॥

तालिका सूची

क्रम संख्या	विवरण	पृष्ठ संख्या
1.	जनपद झाँसी में उत्पादित होने वाली फसलों की औसत उपज	66
2.	जनपद झाँसी के सम्पूर्ण क्षेत्रफल का विभिन्न कार्यों हेतु वर्गीकरण	67
3.	जनपद झाँसी में विभिन्न परिवारों के अधिकार में भूमि का वितरण ‡ वर्ष 1981 ‡ ...	72
4.	जनपद झाँसी में प्रमुख पशुओं की किस्मों का वर्गीकरण ‡ वर्ष 1978 ‡	75
5.	वर्ष 1971-81 में कृषकों का तुलनात्मक अध्ययन ...	77
6.	जनपद झाँसी में विभिन्न कार्यरत व्यक्तियों का वर्गीकरण ‡वर्ष 1981 ‡	79
7.	भारतीय दण्ड प्रक्रिया संहिता में वर्णित अहस्तक्षेपीय अपराधों का विवरण	80
8.	वर्तमान शोधकार्य में साक्षात्कार अनुसूची एवं व्यक्तिगत अध्ययन प्रणाली द्वारा अध्ययन किये गये व्यक्तियों का विवरण	85
9.	जाति व्यवस्था के आधार पर उपलब्ध व्यक्तियों का वर्गीकरण	94
10.	अहस्तक्षेपीय अपराधों में अपराधी की जाति के सापेक्ष साक्षियों की जाति के आधार पर उनके साक्ष्य का वर्गीकरण	100
11.	वर्तमान अपराधों में पीड़ितों का शिक्षा के आधार पर वर्गीकरण	106

12. अहस्तक्षेपीय अपराधों में पीड़ितों का शिक्षा के आधार पर न्यायालय में साक्ष्य 108

13. शिक्षा के आधार पर साक्षियों में पीड़ितों का समर्थन या विरोध करने का वर्गीकरण 112

14. अहस्तक्षेपीय अपराधों में पीड़ितों, अपराधी एवं साक्षियों का आयु के अनुसार वर्गीकरण 115

15. विभिन्न आयु समूह के पीड़ितों के विरूद्ध अपराधियों का आयु समूह के आधार पर वर्गीकरण 118

16. वर्तमान अध्ययन में पीड़ितों की आयु के आधार पर उनके साक्ष्य का वर्गीकरण 120

17. साक्षियों का आयु के आधार पर साक्ष्य का मूल्यांकन 122

18. अध्ययनरत व्यक्तियों का व्यवसायिक वर्गीकरण ... 129

19. ऐसे अहस्तक्षेपीय वाद जिनमें अपराधी कृषक हैं उनमें पीड़ितों द्वारा दण्ड दिलाने का विवरण-व्यवसाय पर आधारित ... 131

20. ऐसे वाद जिनमें अपराधी का व्यवसाय खेती था-साक्षियों का व्यवसाय के आधार पर वर्गीकरण 134

21. ऐसे वाद जिनमें अपराधी का व्यवसाय कृषि था -साक्षियों का पीड़ितों के सापेक्ष व्यवसायिक वर्गीकरण ... 135

22. ऐसे अहस्तक्षेपीय वाद जिनमें अपराधी कृषि व्यवसायी हैं एवं पीड़ित भी कृषि व्यवसायी है-साक्षियों का व्यवसाय के आधार पर वर्गीकरण 136

23. ऐसे अहस्तक्षेपीय वाद जिनमें अपराधी कृषक था एवं पीड़ित मजदूर-साक्षियों का व्यवसाय के आधार पर वर्गीकरण ... 138

24. ऐसे अहस्तक्षेपीय वाद जिनमें अपराधी कृषक एवं पीड़ित मजदूर था-साक्षियों का व्यवसाय के आधार पीड़ित के समर्थन या विरोध की प्रवृत्ति 139

25. यदि अपराधी कृषक है और पीड़ित नौकरीवाला है-साक्षियों की उपलब्धता 140

26. अहस्तक्षेपीय वादों में जिन में अपराधी कृषक हैं एवं पीड़ित नौकरी करता है-साक्षियों में पीड़ित के समर्थन या विरोध की प्रवृत्ति - व्यवसाय के आधार पर वर्गीकरण 142

27. ऐसे अहस्तक्षेपीय वाद जिनमें अपराधी नौकरी करता था-पीड़ित को दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति-व्यवसाय के आधार पर ... 143

28. ऐसे अहस्तक्षेपीय वाद जहाँ अपराधी मजदूर था उनमें पाये गये पीड़ितों का व्यवसाय के आधार पर वर्गीकरण ... 146

29. ऐसे अहस्तक्षेपीय वाद जिनमें अपराधी मजदूर था, पीड़ितों का व्यवसाय के आधार पर दण्डित कराने की प्रवृत्ति का वर्गीकरण 147

30. जाति के आधार पर ग्रामीण नेतृत्व से सम्बद्धता ... 157

31. वर्तमान अध्ययन में उपलब्ध पीड़ित, अपराधी एवं साक्षियों का शैक्षिक स्तर के आधार पर स्थानीय राजनीति से संबन्ध... 160

32. वर्तमान अध्ययन में उपलब्ध पीड़ितों, अपराधियों एवं साक्षियों का आयु के आधार पर ग्रामीण राजनीति से संबन्ध ... 163

33. वर्तमान अध्ययन में उपलब्ध पक्षकारों के आर्थिक स्तर पर ग्रामीण राजनीति से सम्बद्धता 166

34. प्राचीन भारत वर्ष की दण्ड संहिता का संक्षिप्त विवरण ... 174

35. जनपद झाँसी में अहस्तक्षेपीय अपराधों के कारणों का वर्गीकरण 187

36. वर्तमान अध्ययन में पीड़ितों से प्राप्त मत के आधार पर समझौते के कारणों का विश्लेषण 191

37. व्यक्तिगत अध्ययन पर आधारित वर्गीकरण ... 242

:=:=:=:=:=:=:=:=:=:=:

चित्र-सूची

क्रम संख्या	विवरण	पृष्ठ संख्या
1.	अध्ययन क्षेत्र	62 के बाद

अध्याय - 1

प्रस्तावना

१. साहित्य का पुर्नावलोकन
२. बुन्देलखण्ड क्षेत्र के सन्दर्भ में सामाजिक एवं न्यायिक व्यवस्था
३. वर्तमान शोध समस्या की विवेचना एवं उपयोगिता
४. वर्तमान शोध अध्ययन के उद्देश्य

मानव से सम्बन्धित आचरणों, व्यवहारों, सामाजिक व्यवस्थाओं एवं सामाजिक नियंत्रणों के संदर्भ में, उदविकास की प्रक्रिया के फलस्वरूप निश्चित रूप से जटिलता आई है । क्रमिक विकास की सम्पूर्ण अवधि में विश्व के विभिन्न भागों में वितरित जाति के चित्रण प्रस्तुत करने वाले बहुत से शोधपत्र एवं मोनोग्राफ उपलब्धं हैं । समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से आदर्श समाज की कल्पना मुख्य रही है । आदिम समाज से सम्बन्धित अभिलेखों की पुनार्विलोकन करने से स्पष्ट होता है कि सामाजिक व्यवस्थायें एवं न्याय प्रणाली, आर्थिक व्यवस्थाऐं एवं न्याय प्रणाली, राजनैतिक व्यवस्थाऐं एवं न्याय प्रणाली ऐसी सच्चाई हैं जो बहुत क्लिष्टता के साथ एक दूसरे से जुड़ी हुई हैं । इनमें से मात्र एक इकाई विशेष का अस्तित्व सम्भव नहीं हैं । परिकल्पना के दृष्टिकोण को शोध कार्यों में उचित स्तर देने की जो परम्परागत व्यवस्था है, उसी के अनुरूप वर्तमान शोध विषय के लियेइस परिकल्पना को आधार बनाया गया है कि"सामाजिक व्यवस्थाओं का न्यायिक प्रणाली के ऊपर क्या प्रभाव है" एवं इसके विपरीत पहलू का निरूपण एवं तर्क संगत तथ्यों का विवरण, वर्तमान शोध विषय को प्रोत्साहित करता है ।

1. साहित्य का पुनार्विलोकन

वर्तमान शोध विषय से तत्संबंधित ऐतिहासिक प्रलेखों समाज वैज्ञानिकीय प्रकाशनों एवं अन्य उपलब्ध पत्र पत्रिकाओं का पुनार्विलोकन किया गया एवं इससे जो निष्कर्ष एवं दिशा विकसित हुई उसका विवरण यहां दिया जा रहा है । प्रस्तुत शोध विषय स्वतः में एक नई अध्ययन पद्धति एवं निर्देशन लिये होने के कारण, अधिकांशतः उपलब्ध साहित्य की आंशिक सम्बद्धता वर्तमान शोध

विषय में उल्लेखनीय है । निश्चित रूप से यह वर्णित किया जा सकता है कि वर्तमान शोध संदर्भ में शत-प्रतिशत योगदान रखने वाला कोई शोध पत्र भी उपलब्ध नहीं हो सका है । इस अंश के अन्तर्गत विभिन्न समाजशास्त्रीय व्याख्याओं को संकलित किया गया है । जिससे यह स्पष्ट हो सके कि मानव समुदायों के विकास के साथ-साथ सामाजिक नियंत्रणों की आवश्यकता क्यों प्रतीत हुयी । विभिन्न सामाजिक मूल्यों में पारस्परिकता की स्थापना करते हुये यह प्रयास किया गया है कि समाजशास्त्रीय नियमों का वर्तमान में कैसा प्रादुर्भाव है । विधि का समाजशास्त्र निःसंदेह रूप में एक विकसित विषय है, फिर भी क्षेत्रीय अध्ययनों की उपयोगिता को उपेक्षित नहीं किया जा सकता है । इन अध्ययनों के माध्यम से नियमों के समाजशास्त्र को सरलीकृत किया जा सकता है । इसी श्रृंखला में वर्तमान शोध कार्य को प्रस्तुत किया जा रहा है ।

स्वतः मानव पर्यावरण में उपलब्ध सभी कारकों के बीच संबंध स्थापित करने के लिये उत्सुक रहा है । जिसका कि उसके आचरण विशेष से निश्चित रूप से सम्बन्ध है । यही नहीं कि मनुष्य अपने आदर्शात्मक पहलू के लिये सचेत रहा हो, अपितु सामाजीकरण की प्रक्रिया के फलस्वरूप, मनुष्य ने अपने आचरण को वर्णित भी किया है । प्रारम्भिक किवदंतियों की व्याख्याओं से दृष्टिगोचर होता है कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और उसकी सामाजिकता पर्यावरण के विभिन्न कारकों पर निर्भर करती है । सभ्यता के उद्विकास से सम्बन्धित अभिलेखों का पुनर्विलोकन करने से यह स्पष्टीकरण प्राप्त होता है कि मनुष्य विकास की कई दशाओं से गुजरा है । मानव विकास एवं सामाजिक संदर्भ में विशेष जटिलता लिये हुये होने के कारण, समाजशास्त्रियों, मानवशास्त्रियों, जीवशास्त्रियों, दार्शनिकों एवं मनोवैज्ञानिकों का शोध विषय का केन्द्र रहा है ।

भौतिक इकाई के रूप में मानव निश्चित रूप से अपने आदि रूपों में यथा बन्दरों या आदिमानवों से भले ही समता रखता है किन्तु इसका वर्तमान सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन उसे इनसे भिन्न कोटि में रखता है । सामाजिक कार्य समाज-व्यवस्था से कभी अलग नहीं हो पाया और इसके अतिरिक्त इस संदर्भ में सामाजिक नियंत्रण को उपर्युक्त सम्पूर्ण कारकों से विलग नहीं किया जा सकता । सामाजिक परिवर्तन किसी एक कारक पर आधारित नहीं है । इस संदर्भ में मात्र आर्थिक विकास या तकनीकी विकास को सामाजिक परिवर्तन का आधार नहीं बनाया जा सकता है । अन्य कई और ऐसे कारक यथा परम्परागत उच्च स्तरीय से निम्नस्तर की ओर वर्गीकृत रहने के तरीके को भी सामाजिक परिवर्तन के लिये बहुत उपयोगी माना जा सकता है । सामाजिक परिवर्तन को एक दूरगामी प्रक्रिया के रूप में देखा जा सकता है । मनुष्यों के बीच आपस में होने वाली अन्तःक्रियाओं को भी देखा जा सकता है । प्रत्येक व्यक्ति व्दारा दूसरे व्यक्तियों को प्रोत्साहित या हतोत्साहित करने की प्रक्रिया को भी सामाजिक व्यवस्था में देखा जा सकता है । सामाजिक पर्यावरण की इकाई के रूप में व्यक्ति की संवेदनशीलता ही सामाजिक परिवर्तन का आधार है । इस प्रकार की अन्तर्क्रियाओं के अभाव में सामाजिक जीवन का होना नितान्त असम्भव सा प्रतीत होता है । व्यक्तिगत पारस्परिकता स्थापित करने के लिये संचार व्यवस्था को आवश्यक माना गया है । इसीलिये संचार प्रत्येक सामाजिक जीवन का एक महत्वपूर्ण कारक बनता है । संचार सम्वेदनशीलता एवं भावों के बीच उत्पन्न क्रियाओं का ही एक नाम है । सामाजिक प्रक्रिया व्यक्तित्व के विकास के साथ एक घनिष्ठ समझौता किये हुये है और ऐतिहासिक विवरणों से यह निश्चित होता है कि सामाजिक

परिवर्तन की यह प्रक्रिया आधुनिक नहीं है ।

डारविन । 1809-82 । के अनुसार विभिन्न विशिष्ट प्रजातियों का क्रमिक विकास हुआ है इसमें कोई संदेह नहीं है कि विकास की प्रक्रिया के माध्यम से मानव व्यक्तित्व के अनेक पहलुओं का विश्लेषण करने में सुविधा होती है । पारसन्स । 1965 । जो कि एक संरचना वादी है, सामाजिक परिवर्तन के आधार में सामाजिक प्रक्रिया को माना है । संरचना समय के साथ-साथ परिवर्तित होती रहती है । सामाजिक संरचना एक प्राकृतिक निरंतर गतिशील व्यवस्था है ।

नेडेल । 1965 । की समाजिक संरचना की व्याख्या में समाज में विभिन्न व्यक्तियों के व्दारा प्रस्तुत कार्यों को सामाजिक परिवर्तन का आधार कहा गया है । स्मेलसर ।1970 । ने भी अपने तुलनात्मक अध्ययनों के आधार पर सामाजिक संरचनाओं, सामाजिक परिवर्तनों एवं सामाजिक प्रक्रियाओं की व्याख्या की है । सामाजिक व्यवहार निःसंदेह रूप से सामाजिक नियंत्रणों एवं मान्यताओं पर आधारित है ।

जॉनसन । 1966 । ने सामाजिक परिवर्तन के कई आधार माने है । मुख्य रूप से 3 आधार प्रमुख हैं । ।अ। सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत प्रजनन क्रिया की भाँति सामाजिक परिवर्तन का होना, ।ब। सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत सामाजिक पर्यावरण व्दारा सामाजिक परिवर्तन. ।स। सामाजिक परिवर्तन किसी असामाजिक पर्यावर्णीय कारक व्दारा ।

समाज अपने शैशवकाल में निरंकुश एवं स्वेच्छाचारी था। उसका कार्य एवं व्यवहार स्वविवेक से परिचालित होता था। किसी तरह जीवित बने रहने के लिये संघर्ष करना ही आदि मानव का मुख्य कार्य था। धीरे-धीरे जन संख्या में वृद्धि हुई और असुरक्षा से सुरक्षा की ओर व्यक्तियों का ध्यान गया। व्यक्तियों में समुदायिक भावना का विकास हुआ। भौगोलिक परिस्थितियों के कारण प्रत्येक समुदाय के समान हित हो गये और उनकी प्राप्ति समुदाय से ही होना प्रारम्भ हुई। जटिल जीविकोपार्जन के साधन एवं उनकी पूर्ति के लिये समुदायों में संघर्ष होने लगा और धीरे-धीरे भौगोलिक क्षेत्र बँट गये। समुदायों की संख्या बढ़ने के साथ-साथ प्रत्येक समुदाय के सदस्यों की संख्या में वृद्धि होती रही। समुदायों के विकास के कारण जीविकोपार्जन धीरे-धीरे केन्द्रित होता गया तथा व्यक्ति वाह्य आक्रमण से सुरक्षित होते गये क्रमशः लोगों में संग्रह की प्रवृत्ति पैदा हुई और सम्पत्ति को लेकर समुदाय के भीतर ही संघर्ष होने लगे। इन आंतरिक संघर्षों एवं वाह्य सुरक्षा को मजबूत करने की आवश्यकता के अनुरूप धीरे-धीरे समुदायों के भीतर कुछ व्यवस्थायें स्वतः निर्मित हो गईं। इस व्यवस्था के अन्तर्गत कुछ कार्यों को सामाजिक स्वीकृति एवं अस्वीकृति प्रदान कर दी गई। इसके साथ ही साथ निर्मित व्यवस्था के पालन हेतु दण्ड या पुरुस्कार भी निर्धारित किये गये। दण्ड या पुरस्कार देने हेतु प्रत्येक समुदाय में विभिन्न संस्थायें बना दी गईं और यहीं से राज्य की उत्पत्ति मानी जा सकती है।

समाज अनन्त युगों एवं विभिन्न परिस्थितियों से गुजरते हुये उपयुक्त सामाजिक व्यवस्था का निर्माण करता रहा। समाज को नियंत्रित करने के लिये प्रत्येक युग में विभिन्न प्रकार के कारण, शारीरिक,

मानसिक, आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं दण्ड के पहलुओं को निर्धारित करते रहे एवं इनके माध्यमसे समाज को नियंत्रित किया जाता रहा है । सामाजीकरण की व्यवस्था द्वारा व्यक्ति के मस्तिष्क में पुण्य-पाप एवं अगले जन्म में ईश्वरीय दण्ड आदि के प्रति जागरूकताका विकासहुआ । वर्तमान सामाजिक व्यवस्था दीर्घ युगों से गुजरी हुई व्यवस्था है । इस व्यवस्था की संस्कृति में युगों के अनुभव, उतार एवं चढ़ाव समायोजित हैं ।

विज्ञान एवं प्राद्य ोगिकी के विकास ने मानव के चिंतन एवं उसके व्यवहार को प्रभावित किया है । समुदायों के क्षेत्र एवं स्वरूप परिवर्तित हुये हैं । इसके अनुसार शासन प्रणालियां भी परिवर्तित हुई हैं । इन परिस्थितियों में समाज को नियंत्रित करने वाले उदण्ड एवं पुरूस्कार के रूप भी निश्चित रूप से परिवर्तित दृष्टिगोचर होते हैं ।

ईलियट एवं मैरिल ।1950। का मत है कि सामाजिक संगठन वह दशा या स्थिति है जिसमें विभिन्न संस्थायें अपने पूर्व निर्धारित मान्य उद्देश्यों के अनुसार कार्य कर रही होती है । सामाजिक व्यवस्था बनाये रखने के लिये समाज के सदस्यों द्वारा व्यक्तिगत स्थिति तथा भूमिका के अनुसार कार्य करना आवश्यक होता है । समाज की इकाईयां या सदस्य जिस सीमा तक मान्य अथवा स्वीकृत आचरण करते हैं, उतनी ही सक्षम सामाजिक संरचना होती है । सामाजिक संगठन एक ओर इन संस्थाओं, रीतिरिवाजों, रूढ़ियों तथा कानूनों के बीच सामन्जस्य स्थापित करता है और दूसरी ओर समाज के सदस्यों या समूह द्वारा निर्धारित विशिष्ट पदों तथा कार्यों को स्वीकार कर लेने की इच्छा व तत्परता को

नियंत्रित करती है । जब समाज के सदस्य अपने परम्परागत पदों तथा कार्यों को स्वीकार करने में अनिच्छा प्रदर्शित करते हैं वहीं सामाजिक संगठन विघटन की ओर अग्रसारित होता है ।

स्थिति तथा भूमिका का सामाजिक व्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान होता है "स्थिति" व्यक्ति का वह पद होता है जो वह यौन भेद, आयु, जन्म, विवाह, शारीरिक गुण, कृतियाँ तथा कर्तव्यों से प्राप्त करता है । इसके समकक्ष "भूमिका" वह कार्य है जो एक व्यक्ति किसी विशेष स्थिति में आकर करता है । स्थिति के दो मानक हैं : प्रदत्त व अर्जित ।।

प्रदत्त स्थिति व्यक्ति को जन्म से प्राप्त होती है और इसे प्राप्त करने के लिये किसी प्रयास की आवश्यकता नहीं होती है । इसके विपरीत अर्जित स्थिति को गुण, क्षमता तथा प्रयास के अनुसार प्राप्त किया जा सकता है । सम्पूर्ण समाज में स्थितियों का वितरण एवं भूमिका का निर्वाह सामाजिक नियंत्रण के लिये उत्तरदायी है ।

सामाजिक नियंत्रण की दो विधायें हैं : औपचारिक तथा अनौपचारिक । औपचारिक साधनों के अन्तर्गत कानून तथा अनौपचारिक साधनों में विश्वास, धर्म, रूढ़ियाँ, प्रथायें, जाति शिक्षा, व्यवसाय एवं आयु आदि कारकों का महत्वपूर्ण स्थान होता है ।

भारत वर्ष में जाति का सामाजिक नियंत्रण में महत्वपूर्ण योगदान रहा है । वस्तुतः जाति व्यवस्था का निर्माण समाज को सुचारू रूप से चलाने के लिये ही हुआ था । कालान्तर में इसकी

व्याख्या व्यक्तियों ने निजी स्वार्थ के रूप में करके इसमें अनेकों बुराइयों को समाहित कर दिया है । जाति व्यवस्था के संदर्भ में हट्टन ॥1983॥ का मत है कि "अपनी स्वयं की सामाजिक व्यवस्था तथा परम्पराओं को बनाये रखते हुये विभिन्न समुदाओं को एक राजनैतिक इकाई में एक साथ रहना एवं विकसित होना, जाति व्यवस्था से ही सम्भव हो सका है"। भारत वर्ष में करीब 3 हजार जातियाँ विद्यमान हैं । प्रत्येक जाति अपने आप में एक सामाजिक इकाई है । और इनमें अनेक असमानतायें हैं । इन जातियों में जन्म लेने वालों को जाति की श्रेष्ठता क्रम के अनुसार ही सामाजिक स्थिति स्वतः प्राप्त होती है । ब्राह्मणों की सामाजिक स्थितियाँ अन्या जातियों की तुलना में उच्च होती है । जाति से आंशिक समानतायें रखाती हुई सामाजिक संस्थायें अन्यत्र भी पाई जाती हैं । विभिन्न युगों के प्रत्येक समाज में सामाजिक नियंत्रण का कोई साधन अवश्य रहा है । समाज द्वारा स्वीकृत एवं मान्यताप्राप्त मूल्यों के विपरीत आचरण करने वाले सदस्यों को दण्ड की व्यवस्था भी प्रत्येक समाज में हमेशा विद्यमान रही है । सामाजिक मान्यतायें कोई स्थिर धारणा नहीं है । भारत वर्ष में बाल विवाह एवं सती प्रथा आदि को सामाजिक मान्यता प्राचीन समय में प्राप्त थी, किन्तु वर्तमान समय में इसको सामाजिक मान्यता प्राप्त नहीं है । इसी तरह जो कार्य भारत वर्ष में अपराध हैं, वह निश्चित रूप से किसी अन्य देश में भी अपराध होगा, ऐसा तर्कसंगत नहीं है । भारत वर्ष में जन्म से प्राप्त स्थिती का प्रभाव सामाजिक व्यवस्था के सन्दर्भ में अनुभव किया जा सकताहै ।

इसमें संदेह नहीं है कि भारतीय जाति व्यवस्था में अव्यवस्थायें रहीं हैं, किन्तु इसने भारत वर्ष को एक स्थाई समाज बनाया है । अनुमानतः 3 हजार वर्षों से सभी सैनिक तथा राजनैतिक परिवर्तनों के बाद भी जाति व्यवस्था अस्तित्व में रही है । इसे विस्मृत नहीं किया जाना चाहिए कि इस व्यवस्था का भारतीय समाज

के एकीकरण तथा स्थाईकरण में अपना मुल्य है । इसके अभाव में यह संभव नहीं था कि जो जातिय एवं सांस्कृतिक तत्व आज विद्यमान हैं, उनका अस्तित्व होता । इसमें संदेह नहीं कि जाति व्यवस्था का सामाजिक नियंत्रण में महत्वपूर्ण योगदान रहा है, किन्तु इसमें व्याप्त अव्यवस्थाओं का निराकरण आवश्यक है । जिस जाति व्यवस्था का निर्माण समाज के समुचित उत्थान के लिये किया गया था, वह राष्ट्रीय प्रगति में बाधक प्रतीत होती है । इस व्यवस्था में जातिगत हितों की सर्वोपर्य प्राथमिकता, सीमित दृष्टिकोण एवं छुआछूत आदि अनेकों बुराइयाँ व्याप्त हैं । उत्तराधिकार में प्रत्येक समाजको बहुत सी महत्वहीन एवं प्रतिकूल परिस्थितियाँ उपलब्ध होती है । इसके सापेक्ष प्रबुद्ध समाज आने वाली पीढ़ी को अपनी समस्त उपलब्धियाँ न देकर केवल वही अंश प्रदान करता है, जो भविष्य के लिये कल्याणकारी हो ।

भारतीय समाज का दलित वर्ग शताब्दियों से पीड़ित तथा शोषित रहाहै, और अनेकों धार्मिक, राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक निर्योग्यताओं के कारण इस वर्ग का विकास नहीं हो सका है । इस वर्ग के विकास एवं उद्धार की महती आवश्यकता समाज सुधारकों तथा विव्दानों ने अनुभव की है । जिस प्रकार परिवार में माता-पिता बच्चों का समान स्नेह से लालन-पालन करते हैं, किन्तु बीमार बच्चे पर वह कुछ अधिक ध्यान देते हैं, इसी तरह समाज में यह अपेक्षित होता है कि कमजोर वर्ग के साथ कुछ वरीयता का व्यवहार करके उसका पोषण किया जाये । इसकी पूर्ति हेतु वर्तमान समय में एक उचित सामांजस्य की अपेक्षा की जा रही है जिसके फलस्वरूप वांछित सामाजिक स्तर अर्जित किया जा सके ।

भारतीय जाति व्यवस्था के बारे में घुरिये (1932) ने कहा है कि " इसमें संदेह है कि जाति व्यवस्था समग्र रूप से हमारे शासन के लिये असहयोगी है "। तात्पर्य यह है कि यदि हम बुद्धिमानी

ते कार्य करें तो यह व्यवस्था हमारे पक्ष में हो सकती है। देसाई (1982) के मतानुसार ब्रिटिश आधिपत्य को सुरक्षित रखने के लिये जाति व्यवस्था बनाये रखने की संस्तुति की गई थी। प्रथम बार व्यक्ति स्वेच्छा अथवा परिस्थिति से बाध्य होकर रेलवे एवं, मोटर आवागमन तथा यातायात से परस्पर सम्पर्क में आये।

मिडिलटन, जनगणना अधीक्षक (1921) ने पंजाब में जाति व्यवस्था पर ब्रिटिश शासन के प्रभाव पर टिप्पणी की थी की "व्यवसायिक जातियों के वर्गीकरण के विरुद्ध भारी क्रान्ति है," वस्तुतः जातियाँ बड़े स्तर पर ब्रिटिश सरकार द्वारा प्रोत्साहित तथा सुरक्षित की गई है। गणराज्य भारत में नागरिकों को समान अधिकारके प्रदान किये गये हैं तथा जाति धर्म, व्यवसाय के आधार पर पूर्व प्रचलित सभी निर्योग्यताओं को समाप्त कर दिया गया है। इसके साथ कमजोर एवं पिछड़े वर्ग के नागरिकों की उन्नति के लिये विशेष उपबंध संविधान में सम्मिलित किये गये हैं।

बौद्धिक ज्ञान के क्षेत्र में शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान रहा है/ शिक्षा समाज का एक मूलभूत आधार बनी। प्राचीन शिक्षा पद्धति में ब्राहमण अब्राहमण के अधीन अध्ययन कर सकता था किन्तु वह उन दैनिक सेवाओं से मुक्त था जो सामान्यतया एक शिष्य, गुरु के लिये करने को बाध्य था। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह थी कि अध्ययन पूर्ण होने के बाद भी ब्राहमण शिष्य, अब्राहमण गुरु के सदैव श्रद्धा से नतमस्तक होता था। विद्याध्ययन का अधिकार समाज के सभी सदस्यों को समान रूप से प्राचीन भारत में उपलब्ध नहीं था। कौटिल्य कालीन भारत का सम्पूर्ण समाज 4 वर्गों: ब्राहमण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्रों में विभक्त था तथा सभी के कार्य निर्धारित थे। व्यक्ति के जीवन को 4 आश्रमों

में विभक्त किया गया था : ब्राह्मचर्याश्रम, 2. गृहस्थाश्रम 3. वानप्रस्थाश्रम एवं 4 सन्यासाश्रम । प्रथम आश्रम में शिक्षा अध्ययन का कार्य करना होता था । वस्तुतः प्राचीन भारत में शिक्षा व्यवहारिक थी और वर्ग के अनुसार गुरुकुलों में दी जाती थी । प्रत्येक युग में शिक्षा या ज्ञान द्वारा समाज को दिशा प्रदान करने तथा सामाजिक नियंत्रण स्थापित करने में महत्वपूर्ण योगदान रहा है ।

भारतवर्ष में आधुनिक शिक्षा का प्रवेश ब्रिटिश काल में हुआ है । आधुनिक शिक्षा का प्रवेश ब्रिटिश सरकार का उन्नतिशील कार्य था । भारतवासियों के लिये जो शिक्षा प्रणाली ब्रिटिश शासन के माध्यम से प्रारम्भ की गई उसका उद्देश्य कम वेतन पर लिपिकों को प्राप्त करना था इसके फलस्वरूप पाश्चात्य संस्कृतियों को भारत वासियों पर थोपा गया (दुबे, 1971)

आधुनिक शिक्षा के अनेकों दुष्परिणाम भारतवर्ष में दृष्टिगोचर हुये हैं । मध्यकालीन भारतवर्ष की कठोर जाति व्यवस्था से निकलकर व्यक्तियों ने जब पश्चिम की उन्मुक्तता देखी तो भारतीयता को नकारने लगे और न तो पश्चिम की पूर्ण अच्छाइयों को सीख सके और न ही भारतीय आदर्शों का पालन कर सके । आधुनिक शिक्षा को भारतीय सामाजिक परिवेश में जोड़ा गया । हिन्दू तथा मुस्लिम व्यक्तियों के नामों पर शिक्षण संस्थायें खोली गई राजाराम मोहन राय भारत में आधुनिक शिक्षा के प्रणेता थे । इसके बाद ब्रह्म समाज, आर्यसमाज, रामकृष्ण मिशन, अलीगढ़ आन्दोलन तथा व्यक्तिगत स्तर से देशमुख, चिपलंकर, अगरकर, भगनबाई, करमचन्द्र, कारवे, तिलक, गोखले, गांधी, मालवीय आदि ने शिक्षा के विकास के लिये काम किया ।

इस शिक्षा के प्रसार में प्रमुख बुराई यह रही कि शिक्षित लोग भारतीय सभ्यता से दूर हो गये तथा उनमें भारतीयों के प्रति विद्वेश पैदा हो गया। प्रसारित शिक्षा व्यवस्था में सबसे गंभीर त्रुटि यह रही कि इससे अंग्रेजी भाषा का महत्व बढ़ गया तथा शिक्षित एवं अशिक्षित भारतीयों में खाई पैदा हो गई। यह शिक्षा भारतीय समस्याओं तथा राष्ट्रीय उन्नति से बहुत दूर थी। अंग्रेजो की नीति इस देश के आम नागरिक को शिक्षित नहीं बनाना चाहती थी। उनका उद्देश्य मात्र अंग्रेजी शासन की जड़े मजबूत करना था था तथा ब्रिटिश शासन के पक्षधर तैयार करना था अंग्रेजो की नीति आँग्ल भाषा की जानकारी देना थी। ब्रिटिश शासन की शिक्षा नीति इन आँकड़ों से स्पष्ट की जा सकती है कि 1. वर्ष 1931 में सम्पूर्ण भारतवर्ष में साक्षरता मात्र 8 प्रतिशत थी एवं 2. वर्ष 1934-35 में मात्र 4.5 प्रतिशत बच्चे ही प्राथमिक तथा माध्यमिक विद्यालयों में जाते थे। इनमें से मात्र पाँचवा भाग ही अंतिम कक्षा तक शिक्षा प्राप्त करने में सफल होता था।

डेविस । 1981 । की मान्यता यह रही कि यदि कोई विज्ञान मानव में रुचि रखता है तो निश्चित रूप से वह उस गूढ़ रसायन विधि में रुचि रखता है जिसके द्वारा मानवीय प्रायमेट मानव में रूपान्तरित होता है। सामाजिक निर्माण में सामाजीकरण को सबसे महत्वपूर्ण प्रक्रिया माना जाता है। सामान्यतः व्यक्तित्व दो कारकों का परिणाम होता है प्रथम वंशानुक्रम एवं द्वितीय सामाजीकरण। व्यक्ति के जन्म से पूर्व की सामाजिक परिस्थितियाँ

जीवन को ही सम्भव नहीं बनाती है, किन्तु बहुत सीमा तक यह निर्धारित करती है कि वह किस प्रकार का जीवन यापन करेगा । समाजीकरण प्रत्यक्ष रूप से जन्म लेने के बाद ही प्रारम्भ होता है । सामाजीकरण वह प्रक्रिया है जो एक बच्चे को समाज का उपयोगी सदस्य बनाती है तथा उसे समाजिक परिपक्वता प्रदान करती है ।

भारतवर्ष की संस्कृति में आयु का विशेष सम्मान रहा है । अपने से बड़े की मर्यादा रखना भारत की संस्कृति रही है । भारतवर्ष की प्राचीन आश्रम व्यवस्था विश्व में अनूठी संस्था है । विद्याध्ययन इसी व्यवस्था के कारण प्राचीन भारत में बाल अपराध या किशोर अपराध जैसी कोई समस्या उपलब्ध इतिहास में दृष्टिगोचर नहीं होती है । आयु का, कार्यों से घनिष्ठ सम्बन्ध है आयु के साथ व्यक्ति के अनुभव बढ़ते जाते हैं । इसके साथ ही शारीरिक क्षमतायें भी घटती बढ़ती रहती है । अतः यह स्वाभाविक है कि व्यक्ति एक विशिष्ट आयु पर जो सामाजिक मूल्यों के अनुकूल या विपरीत कार्य कर सकता है वह दूसरी आयु पर नहीं कर सकता है ।

सामान्यतः आम व्यक्तियों का समर्थन तथा विरोध भी सामाजिक संदर्भ में घटता बढ़ता रहता है । इस सामाजीकरण की प्रक्रिया का प्रभाव भारतीय निश्चित रूप से न्यायिक व्यवस्था पर दृष्टिगोचर होता है । उदाहरणार्थ वृद्ध व्यक्ति को मृत्यु दण्ड न देना जमानत देना अथवा अपेक्षाकृत सरल दण्ड देना, बालकों द्वारा

किये गये अपराधों को अलग से सहानुभूति पूर्वक विचारण एवं सजा की अपेक्षा सुधारात्मक दण्ड आदि अनेक व्यवस्थाओं का आपराधिक न्याय प्रशासन में समावेश आयु के आधार पर ही किया गया है ।

प्रत्येक मानव अपनी जीविकोपार्जन के लिये किसी प्रकार का व्यवसाय अवश्य करता है । प्राचीन भारत में व्यक्ति क्या कार्य करेगा, वह उसके जन्म से निर्धारित रखता है । प्रारम्भ में उस व्यवसाय के विभाजन का उद्देश्य समाज में व्यवस्था बनाये रखना ही था । कौटिल्य की वर्ण व्यवस्था कार्य के बटवारे के अलावा कुछ नहीं थी । कौटिल्य ने शूद्रो का धर्म केवल द्विजों की सेवा करना और उसके पुरुस्कार स्वरूप जीविका का साधन प्राप्त करना ही नहीं माना है, अपितु कृषि, पशुपालन और वाणिज्य जैसे मुख्य जीविका साधनों के प्रति सजग रहना स्पष्ट किया है । इसके अतिरिक्त दस्तकारी मनोरंजन और सांस्कृतिक कार्यों पर उनका अधिकार समझा जाता था । कालान्तर में शस्त्रधारी जातियों के हाथों में शक्ति संचय होता गया, जिसके फलस्वरूप पैदावार के सभी साधन उनके हाथों में सिमटते चले गये । क्षत्रियों के लिये जीविका का मुख्य साधन शस्त्र धारण करना तथा कृषि करना वैश्यों का मुख्य धंधा बताया गया है । कौटिल्य काल तक शूद्र इतने साधनहीन नहीं थे जैसा कि कालान्तर में में सामंतवाद का विकास एवं शक्ति संचय होते-होते देखने को मिलता है दीपंकर [1968]। उपलब्ध इतिहास के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि व्यवसायों का वर्गीकरण आमतौर पर था किन्तु इस स्थिति में समय-समय पर परिवर्तन होते रहे हैं और विभिन्न जातियों के व्यक्तियों

ने विभिन्न व्यवसाय सम्पादित किये हैं । ऐतिहासिक तथ्यों से विदित है कि उत्तर वैदिक काल में जाति व्यवस्था अधिक स्पष्ट हुई है । ब्राहमण को अनेकों सुविधाऐं प्राप्त थी यथा कर मुक्त, उपहार लेना, धर्म विस्तार एवं निमंत्रण स्वीकार करना आदि ब्राहमण किसी भी जाति का व्यवसाय कर सकते थे किन्तु इसके विपरीत व्यवस्था नहीं थी । हिन्दू राज्यों के अन्त तथा तुर्कों के प्रारम्भ काल को संक्रमण काल कह सकते हैं । इस युग ।1000से 1300। तक की व्यवसायिक व्यवस्था के बारे में स्पष्ट उल्लेख है कि कुछ ब्राहमण ऐसे व्यवसाय करते थे जो सामान्यतया क्षत्रियों के लिये निर्धारित थे । व्यवसायिक वर्गीकरण अत्याधिक कठोर नहीं था । शूद्रों को उच्च जाति के व्यवसाय करने की मना ही थी । कायस्थ नवमी शदी के अंतिम समय में ।950। के वाद प्रमुख हो गये । ग्यारहवी शताब्दी तथा इसके वाद इन्होनें उच्चमत पद प्राप्त किए । सामान्यतया शूद्रो के प्रति समाज का दृष्टिकोण क्रूर रहा । धोबी जाति के व्यक्ति चमड़े के कार्य एवं मछली मारना आदि किया करते थे । मध्ययुगीन भारत में मुस्लिम शासक युद्धों में इतने व्यस्त रहे कि उन्हें सामाजिक सुधार से कोई सरोकार नहीं रहा । मुस्लिम संस्कृति एवं सभ्यता मुख्य शहरों में केन्द्रित रही तथा ग्रामीण अंचलों से इनका सम्बन्ध नहीं रहा । ब्राहमण पवित्र कार्यों के साथ कृषि कार्य भी करते थे । सम्भवतया मुस्लिम द्वारा मन्दिरों का नष्ट करना इसका कारण था । शूद्रो को इस युग में मांस, नमक आदि कुछ चीजें बेचने की सुविधा प्रदान कर दी गयी थी जो कि इससे पूर्व में नहीं थी । अन्य नियोग्यताऐं पूर्ववत: जारी रही । व्यापारी ।सेत्ती। बुनकर ।चमड़ा बनाने वाला। कुशल श्रमिक।कलाकार । नाई आदि की स्थिति ब्राहमणों के वाद की थी ।। बहादुर, 1979 । ।

भारत वर्ष हमेशा से कृषि प्रधान देश रहा है तथा कृषि, सम्पूर्ण अर्थ-व्यवस्था की जड़ रही है । प्राचीन भारत में भूमि स्वामित्व का रूप इस प्रकार था कि राजा उपहार के रूप में राजकर लिया करता था, किन्तु वह भूमि का मालिक नहीं था । भूमि व्यक्ति तथा परिवार के स्वामित्व में थी और इसका स्वामित्व परिवार के मुखिया के रूप में पिता में निहित रहता था । कृषि से सम्बन्धित भूमि सावधानी पूर्वक नापी जाती थी । इससे प्रतीत होता है कि व्यक्तिगत स्वामित्व निश्चित ही अस्तित्व में रहा होगा । पुत्र के विवाहोपरान्त उसे एक जमीन का हिस्सा दे दिया जाता था । जिससे वह अपनी पत्नी के साथ रह सके । पिता की मृत्यु के पश्चात भूमि उसके पुत्रों को हस्तान्तरित होती थी । ऋग्वेद में इस तथ्य के अनेकों संकेत हैं ।

परम्परागत साधारण उपकरणों की हस्तकला, अंग्रेजों के पूर्व के भारतवर्ष की मौलिक विशेषता थी । वस्तुतः भारतवर्ष सदैव से ग्रामीण क्षेत्रों का देश रहा है तथा ग्रामों की आर्थिक व सांस्कृतिक गतिविधियाँ आकर्षण का केन्द्र रही है । जमींदार तथा कृषक दो नये वर्ग भारतवर्ष में प्रथम बार ब्रिटिश काल में उत्पन्न हुये । इसका प्रयोग बंगाल में किया गया । उद्योग पति तथा श्रमिक वर्ग भी ब्रिटिश शासन में उत्पन्न हुये और इनका प्रारम्भ बंगाल तथा बम्बई में जूट तथा सूती उद्योगों की स्थापना से हुआ । भारतीय ग्रामों के संदर्भ में घुरिये (1932) ने कहा है कि मौलिक आर्थिक इकाई के रूप में, स्वयं ग्राम शताब्दियों से भारतवर्ष में रहे हैं। थोड़े से परिवर्तनों के साथ ब्रिटिश शासन तक उनका अस्तित्व राजनीतिक, धार्मिक परिवर्तनों एवं अनेकों युद्धों के बावजूद भी स्थापित रहा है। राज्यों का उदय तथा अस्त होता रहा, किन्तु स्वयं में पूर्ण

ग्रामीण क्षेत्र अस्तित्व में रहे हैं। ग्राम समुदाय छोटे गणतंत्र हैं। प्राय: सभी वस्तुयें इन ग्रामों में उपलब्ध होती हैं।

सभी विदेशी सम्बन्धों से यह ग्राम स्वतंत्र हैं। राजतंत्रों के परिवर्तन क्रान्ति, हिन्दू, पठान, मुगल, मराठा, सिक्ख एवं अंग्रेज शासकों के बदलते रहने से भी ग्रामीण समुदाओं के आधार-भूत रूप में विशेष अन्तर नहीं आया।

वर्तमान समय में वस्तुत:, सम्पूर्ण विश्व में सामाजिक स्तर धन से निर्धारित होता है। सामाजिक वर्गीकरण, धनिक एवं निर्धन दो वर्गों में किया जा सकता है। विज्ञान एवं तकनीकी के विकास ने जीवन के हर क्षेत्र की मान्यताओं को प्रभावित किया है। गरीब तथा अमीर के बीच का अन्तर पूर्व की अपेक्षा कई गुना अधिक बढ़ गया है। मालिक तथा मजदूर के बीच की दूरी एवं उनके जीवन स्तर में भिन्नता स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर है। बेराजगारी निराकरण, उच्श्रृंखलता आदि विज्ञान तथा तकनीकी के दुष्प्रभाव हैं। यह कहना अधिक तर्क संगत होगा कि तकनीकी के क्षेत्र में मानव का एक पक्षीय विकास होता है।

विधि विषयक विचारों एवं सिद्धांतों की समाजशास्त्रीय दृष्टि-कोण से विवेचना विधि के समाजशास्त्र की मुख्य विषय वस्तु है। होबल ।1932। लिखते हैं कि "कानून के अध्ययन में पाश्चात्य मस्तिष्क को पिछले दो हजार वर्षों से चुनौती दी है, तो यह किस प्रकार सम्भव हो सकता है कि इस विषय पर कुछ कहा जाये। वास्तविकता यह है कि हम कानून की प्रकृति व कार्यप्रणाली के बारे में बहुत थोड़ा जानते हैं। कानून के विभिन्न पहलू हैं, इसकी जड़े व शाखाएं सामाजिक अंगों को इस प्रकारसे ढक चुकी हैं कि कानून का पूर्णस्वरूप में अध्ययन करना कठिन प्रतीत होता है"। फिर भी समाजशास्त्रियों एवं मानवशास्त्रियों ने इस विषय पर

पर्याप्त प्रकाश डाला है । इसमें कोई सन्देह नहीं है कि समाजशास्त्र कानून के अर्थ तथा महत्वको समझने में काफी सहायता कर सकता है । वास्तव में आधारभूत मानव सम्बन्धों व संस्थाओं का गहरा ज्ञान स्वयं ही कानूनी सिद्धांतों के आधारों को ढूढने का रास्ता खोज निकालता है । कानून के विद्यार्थी के लिए यह सामग्री स्वयं ही अध्ययन का विषय बन गयी है । वर्तमान जटिल समज में समाजशास्त्री व विधि शास्त्री दोनों एक दूसरे के संपर्क की अपेक्षा करने लगे हैं । यही कारण है कि समाजशास्त्र के विस्तृत अध्ययन क्षेत्र में विधि का समाज शास्त्र अपने आप में भी एक विस्तृत अध्ययन बनता जा रहा है । वस्तुतः कानून को सामाजिक पर्यावरण से भिन्न नहीं किया जा सकता क्योंकि सामाजिक नियंत्रण, सामाजिक व्यवस्था, सामाजिक परिवर्तन व सामाजिक विकास के सन्दर्भ में विधि शास्त्र की भूमिका महत्वपूर्ण बनती जा रही है । प्रत्येक समाज में, चाहे वह आदिम हो या आधुनिक, विधि-विधान या कानूनी समाज की प्रक्रियाओं के एक माध्यम के रूप में काम करता है। यह बात अलग है कि राजनीतिक व्यवस्था एवं शासनतंत्र के आधार पर विधि व्यवस्था का स्वरूप अपने आप में विशिष्ट हो सकता है ।

समाज एक अखण्ड व्यवस्था नहीं है । इसके अन्तर्गत अनेक भाग तथा उपभाग क्रियाशील रहते हैं । जिनसे सम्बन्धित अनेक सदस्य होते हैं जो कि अपने-अपने हितों की पूर्ति के लिए प्रयत्न करते हैं । अगर इनमें से प्रत्येक को अपनी इच्छानुसार या मनमाने ढंग से काम करने की स्वतंत्रता दे दी जाये तो उस समाज की संरचना शीघ्र ही नष्ट-भ्रष्ट हो जायेगी । इतना ही नहीं, प्रत्येक समाज चाहे वह आदिकालीन हो या नगरीय, उसे बाहरी एवं आंतरिक आक्रमणों से सामाजिक संरचना, शांति एवं सुव्यवस्था की रक्षा हेतु कानून, न्याय तथा सरकार की व्यवस्था

आवश्यक है । अतः प्रत्येक समाज कानून द्वारा अपने सदस्यों के लिये व्यवहार के कुछ निश्चित मानदण्डों को प्रतिपादित करता है । जो लोग इन नियमों व कानूनों को तोड़ने या उल्लंघन करते हैं तो उन्हें दण्डित किया जाता है । इसी तरह कानून सामाजिक नियमों एवं आदर्शों के पालन करने वालों के हितों की रक्षा भी करता है । संक्षेप में, कहने का तात्पर्य यह है कि कानून और समाज का अत्यधिक घनिष्ठ सम्बन्ध है । संगठित कानून का विकास सामुदायिक दायित्व की भावना से हुआ जिसने न्यायिक व्यवस्था की नींव पड़ी ।

ऐतिहासिक दृष्टि से "विधि का समाजशास्त्र" अन्य सामाजिक विज्ञानों की तरह अति प्राचीन है । इसकी जड़ें अरस्तू, हॉब्स, स्पिनोजा और माण्टेस्क्यू आदि के साहित्य में खोजी जा सकती हैं । अरस्तु ने अपनी कृतियों "इथिक्स" और "पॉलिटिक्स" में सकारात्मक कानून के प्रकारों का वर्णन किया है । अरस्तु के अनुसार सभी प्रकार के कानून सक्रिय सामाजिक व्यवस्था के निर्माण के लिये आवश्यक है । अरस्तु के बाद, प्रयोगिक विज्ञानों का विकास बड़ी तेजी से हुआ है । अतः "सोशल-फिजिक्स ऑफ ला" नामक एक स्वतन्त्र शाखा के विकास की दिशा में प्रयास किये गये । इस तरह के प्रयासों का उल्लेख हॉब्स और स्पिनोजा की कृतियों में मिलता है । इस तरह विधि का समाजशास्त्र पहली बार डॉगमैटिक प्रवृत्तियों से मुक्त हो सका ।

गुरविच (1942) के अनुसार विधि के समाजशास्त्र का विकास समाजशास्त्र की चार मुख्य अवधारणाओं के आधार पर हुआ :-

1. समाजशास्त्रीय सापेक्षवाद ;
2. प्रकृतिवाद ;
3. व्यवहारवाद ; एवं
4. औपचारिकवाद ।

प्रथम के बारे में उन्होंने लिखा है कि कॉम्ट ने समाजों की

विशिष्टताओं को ठुकरा दिया था तथा सिर्फ गति व स्थिरता के तत्वों को समाजशास्त्र का क्षेत्र माना था । कॉम्ट कानून के विरोधी थे और उसे वे बेकार व अनैतिक समझते थे । किंतु उनके इन विचारों को बाद के समाजशास्त्रियों ने स्वीकार नहीं किया । उन्नीसवीं शदी के अन्त तक के अनेक समाजशास्त्रियों कानून की सत्यता नहीं मानते हैं । वार्ड के विचार में कानून एक मनमानी चीज है ।

गुरविच ने अपनी पुस्तक का आधा भाग कानून के समाजशास्त्र के समर्थकों व संस्थापकों के बारे में विस्तृत जानकारी देने में लगाया है । उन्होंने यूरोप में कानून के समाजशास्त्र के विकास से सम्बन्धित बौद्धिक अभिरूचियों का विश्लेषण किया है । उनके अनुसार अनेकों विचारकों में से दुर्खीम ही एक ऐसे व्यक्ति थे जो सही अर्थों में समाजशास्त्री थे । गुरविच की दृष्टि में फ्रांस के चार लेखकों- दुरखीम, डुग्मेट, लेवी व ह्येसयों में से दुरखीम के अलावा बाकी तीन ऐसे विधिशास्त्री थे जो समाजशास्त्रीय अध्ययनों में रूचि लेने लगे । विधि के समाजशास्त्र के आस्ट्रियन संस्थापक यूजीन एहार्लिक रोमन कानून के प्रोफेसर थे । इनके अलावा मैक्स वेबर भी जर्मनी में प्रारम्भिक रूप से कानून के अध्यापक थे । गुरविच के अनुसार अमेरिका में होम्स, पाउन्ड, कारदोजो, लेलविलियन व आर्नोड विधि के समाजशास्त्र के प्रमुख संस्थापक हैं ।

दुरखीम ने सामाजिक स्वीकृतियों व सामाजिक गठन की धारणाओं के आधार पर विधि के समाजशास्त्री की नींव डालने में योगदान दिया है । वे उन प्रचलित स्वीकृतियों जो कि नैतिक नियमों को बढ़ावा देती हैं तथा संगठित स्वीकृतियों में भेद करती हैं । संगठित स्वीकृतियों को वे दो प्रकार का बतलाते हैं : प्रथम, दबाने वाली जो कि दण्डात्मक कानून की मदद करती है तथा समाज को गठन तथा एकता को बढ़ावा

देती हैं । द्वितीय, कानून की मदद करने वाली वे स्वीकृतियाँ जो सावयवीय गठन संपादित होती हैं और जो विकसित श्रम-विभाजन पर आधारित हैं ।

एहर्लिक । 1913 । ने सर्वप्रथम जर्मन भाषा में "कानून का समाजशास्त्र" नामक पुस्तक प्रकाशित की जिसकी बाद में काफी चर्चा हुई एवं 1936 में इसका अंग्रेजी अनुवाद हुआ । इस पुस्तक के पूर्व 1922 में हार्वेडला रिव्यू" में उनके एक लेख "सोशियोलोजी आफ ला" का अनुवाद भी छप चुका था । सैवाइनी के आधार पर उन्होंने यह मत प्रस्तुत किया था कि कानून आत्मस्वीकारोक्ति पर निर्भर करता है और हर समूह अपना क्रियाशील कानून बनाता है जो कि स्वयं सक्रिय सामाजिक शक्ति है । इनका मत है कि राज्य ही कानून का स्रोत नहीं है। इसके प्रमाण में एहर्लिक ने ऐतिहासिक सामग्री व बारबार घटित होने वाली घटनाओं को प्रस्तुत किया । पाउन्ड के अनुसार एहर्लिक के विश्लेषण का आधार ऐतिहासिक है । एहर्लिक ने विधि सम्बन्धी जानकारी के दो स्रोत प्रस्तुत किए:- सामाजिक जीवन का प्रत्यक्ष अवलोकन और कानूनी दस्तावेज । उन्होंने स्पष्ट किया कि जीवन की अनेक घटनाएं अदालतों तक नहीं पहुंच पाती हैं । विधि के गहन अध्ययन के लियेवास्तविक घटनाओं के अध्ययन के नये तरीके अपनाये जाने चाहिये । यद्यपि एहर्लिक की कानून की परिभाषा इतनी विस्तृत नहीं है कि वह सामाजिक नियंत्रण की सम्पूर्णता को अपने में सम्मिलित कर सके किन्तु वह राज्य-कानून की परिभाषा से काफी विस्तृत हैं । वे फैशन, नैतिक नियम, व्यवहारों आदि में भी भेद करते हैं । इनके अनुसार " क्रियाशील कानून" ही जीवन की सम्पूर्णता पर छाया रहता है और यही कानूनी व्यवस्था का आधार है, चाहे उसे राज्य द्वारा मान्यता प्राप्त हो या न हो ।

तिमोशेफ ने अपने समाजशास्त्रीय विधिशास्त्र सम्बन्धी भाषाओं के माध्यम से अपनी पुस्तक की प्रथम रूप रेखा 1916-20 के दौरान तैयार की थी । रूस छोड़ने के लिये वे विवश होकर हार्वर्ड पहुँचे और सन् 1939 में अपनी पुस्तक "एन इन्ट्रोडेक्शन टू द सोशियोलोजीआफ ला" प्रकाशित की । इनका यह विश्लेषण" कानून सामाजिक साम्राज्य का एक स्वरूपहै"- इस वाक्य से शुरू होताहै। वे कानूनी नियमों की अपेक्षा कानूनी ढांचों के अध्ययन पर मुख्य जोर देते हैं । इनका कहना है कि यदि समाज में लघु समूह शक्ति के केन्द्र है तो सामंजस्य आदेशात्मक प्रकार का होता है और ऐसा सामंजस्य नैतिक नियमों, भय व सुविधा आदि पर आधारित होता है । तिमाशेफ की पुस्तक के चार भागों में से एक भाग नीति शास्त्र की भूमिका तथा अन्य तीन भाग शक्ति या अधिसत्ता के बारे में हैं । एहलिक की तरह तिमाशेफ भी कानून की परिभाषा राज्य कानून से विस्तृत मानते हैं परन्तु सामाजिक नियंत्रण से नहीं । उनका विधि के समाजशास्त्र के अध्ययन का तरीका आलोचनात्मक तथा प्रयोगात्मक है । उनके अनुसार विधि के अध्ययन की सामग्री मानवशास्त्र, तुलनात्मक विधि शास्त्र, विधि का दर्शन और इतिहास आदि विषयों से ली जा सकती है किन्तु इसकी समाजशास्त्रीय सार्थकता हो ।

गुरविच ने अपनी पुस्तक "सोशियोलाजी आफ ला" (1942) अमेरिका में प्रकाशित की । इन्होंने ऐतिहासिक सामग्री का विश्लेषण किया और वेबर के वर्गीकरण को अपनाने की चेष्टा की है जिसे जेम्स डेविस व उनके सहयोगियों ने अपनी पुस्तक" सोसायटी एण्ड द ला" में एक संकुचित व अप्रामाणिक चेष्टाबतलाया है । गुरविच के अनुसार विधि के समाजशास्त्र की तीन समस्याएं हैं :

1- कानून की सामाजिकता के स्वरूपों व स्तरों का अध्ययन,

2- विशेष समूहों व अन्तर्निहित समाजों में कानूनी व्यवस्था के प्रकारों का अध्ययन, एवं

3- एक विशिष्ट समाज में कानून के विकास व परिवर्तन का अध्ययन ।

गुरविच भी राज्य को कानून का स्रोत नहीं मानते और वह कानून की परिभाषा को समूह के नियमों के समान विस्तृत मानते हैं । गुरविच " संगठित कानून" शब्द का प्रयोग सरकारी कानून की जगह करते हैं । उनका कहना है कि संगठित कानून स्वविकसित कानून पर ऊपर से थोपी गई बेकार वस्तु है । विधि की मूलभूतता के आधार पर वे कानून की किस्मों का उल्लेख करते हैं ।

विधि के क्षेत्र में वेबर के " कानूनी हैसियत" के सिद्धान्त का प्रभाव विशेषता महत्वपूर्ण रहा है । समाजशास्त्रियों का एक बड़ा वर्ग वेबर के विचारों से काफी प्रभावित रहा है । वेबर के विचार में कानून की परिभाषा उसके लागू करने के तरीकों के आधार पर होना चाहिए । उनके विचार में कोई आदेश एक कानूनहै- बशर्ते कि उनके लागू करने की सम्भावना किसी समूह के ऐसे लोगों पर निर्भर हो जो जरूरत होने पर शारीरिक व मानसिक दबाव का प्रयोग कर सकें । यहां दबाव से मतलब राजनीतिक सत्ता से है । इस प्रकार वे राज्य कानूनों को अपनी परिभाषा में सम्मिलित करते हैं । अनौपचारिक सामाजिक नियंत्रण को छोड़ देते हैं तथा नियमों के लागू करने के औपचारिक नियंत्रण तक ही विधि को सीमित रखते हैं । वेबर का अध्ययन मुख्यतः तुलनात्मक विधि के इतिहास का अध्ययन है ।

बीसवीं शती में विधिशास्त्र में तीन मुख्य विचारधाराओं का प्रवेश हुआ: ।अ। समाजशास्त्रीय विधिशास्त्र, ।ब। विधिशास्त्रीय वास्तविकतावाद तथा ।स। दार्शनिक विधिशास्त्र । मानव व्यवहार व आचरण में प्रथम दो विचारधाराओं का अध्ययन वैज्ञानिक ढंग से किया जा सकता है । पाउन्ड समाजशास्त्रीय विधिशास्त्र की सराहना करते हुए लिखते हैं कि सामाजिक नियंत्रण की विस्तृत प्रक्रियाओं को कानून से सम्बन्धित करने

तथा कानून की सीमाओं को निर्धारित करने में उसने काफी योगदान किया है।

अमेरिका में होम्स के लेखों ने विधिशास्त्रीय विचारधारा पर दो मुख्य प्रभाव डाले। उनके अनुसार "कानून की जीवनधारा तर्कशास्त्र नहीं वरन् अनुभव है" जो विधिशास्त्र में समाजशास्त्रीय दृष्टि के प्रवेश की सूचक है। उन्होंने न्यायिक प्रक्रिया के संबंध में कहा है कि अपने स्वरूप में कानून तार्किक है परन्तु अदालत के निर्णय हमेशा विधायक होते हैं। क्योंकि वे इस बात पर आधारित होते हैं कि जनता के लिए अच्छी नीति क्या हो। होम्स ने कहा कि विधिवेत्ताओं को समाज वैज्ञानिकों द्वारा किये जाने वाले सामाजिक वास्तविकता के वस्तुनिष्ठ अध्ययनों को समझने का प्रयास करना चाहिए। वास्तव में होम्स ने सामाजिक-दर्शन-शास्त्रीय विधि शास्त्र को अपनाने की कोशिश की तथा अन्त में रौस व एल्वियन स्माल से प्रभावित होकर समाज शास्त्रीय दृष्टिकोण अपनाया।

कारदोजों के बारे में पाउण्ड लिखते हैं कि इन्होंने "न्यायिक प्रक्रिया" शब्द का प्रयोग करके एक भ्रान्ति को काफी दूर कर दिया है। उन्होंने विधिशास्त्रीय साहित्य में कानून शब्द का तीन विभिन्न अर्थों में प्रयोग होने से उत्पन्न भ्रान्ति कोकाफी दूर कर दिया है। कारदोजों का विधिशास्त्र न्यायिक प्रक्रिया से काफी सम्बन्धित है।

ललविलियन के बारे में पाउन्ड का मत है कि प्रारम्भ में वह कानूनी वास्तविकवाद के मानने वाले थे। किन्तु बाद में उनको समाजशास्त्रीय विधि-शास्त्र ने आकर्षित किया। उन्होंने विधि और सामाजिक नियंत्रण के पारस्परिक संबंध को महत्व प्रदान किया। मानव व्यवहार के विद्यार्थियों तथा समाजशास्त्र के समर्थकों के रूप में ललविलियन व होबल ने अपनी पुस्तक "दी ला वेज आफ चैयनी इन्डियन्स" में आदिवासियों के न्यायिक तरीकों के अध्ययन के आधार पर सामाजिक विज्ञान के अध्ययनोपयोगी सामग्री प्रस्तुत की है। इन लोगों का विश्वास है कि गहरे झगड़े विपत्ति

की हालत में कानून व संस्कृति के सम्बन्धों को स्पष्ट करते हैं । आदिम तथा आधुनिक कानून के अध्ययन के सम्बन्ध में उनका मत है कि समाज - शास्त्रियों व मानवशास्त्रियों को विधि के अध्ययन में समाज विज्ञानों के अनुसंधान की आधुनिक प्रविधियों को अपनाना चाहिए ।

केहिल की दृष्टि में समाजशास्त्रीय विधिशास्त्र एक ऐसा सामान्य कानूनी सिद्धांत है जो कि परिवर्तन व सापेक्ष सरकारी कृत्यों को मान्यता देता है । इस विचारधारा में अदालतों को सामाजिक नीति लागू करने तथा उनका मूल्यांकन करने का एक आधार तथा विषय बना दिया है । केहिल का मत है कि न्यायपालिका की बढ़ी हुई शक्ति सरकार का नियंत्रण कम करती है ।

समाजशास्त्रीयविधि शास्त्र के बारे में विचार करने के साथ तुलना-त्मक विधि शास्त्र का उल्लेख करना भी आवश्यक है । मेन ने सन् 1861 में "ऐनसियन्ट ला" नामक पुस्तक प्रकाशित करके तुलनात्मक विधि शास्त्र के अध्ययन की ओर ध्यान आकर्षित किया था । विग मोर्स के विचार में, तुलनात्मक विधि शास्त्र ही विधि के विस्तृत क्षेत्र के प्रश्नों को सही प्रकार उठाता है और उन दशाओं का जिनमें कानूनी व्यवस्थाएं उत्पन्न होती, बदलती और समाप्त होती है । अध्ययन करता है । उनके अनुसार कभी-कभी कानूनी व्यवस्था बिना राजनैतिक व्यवस्था के भी चल सकती है । तुलनात्मक अध्ययन से तात्पर्य, विग मोर्स के अनुसार, तीन बातों से है :-

1. विभिन्न कानूनी व्यवस्थाओं के तथ्यों का तुलनात्मक विवेचन ।
2. विधि सम्बन्धी नीतियों व विभिन्न कानूनी तरकीबों व नियमों का ठोस अध्ययन ; एवं
3. संसार के कानूनी विचारों का अध्ययन ।

विग मोर्स ने कानूनी व्यवस्थाओं तथा कानूनी तरकीवों व नियमों को भी खोजने का काम किया इनकी व्याख्या वर्तमान व ऐतिहासिक कानूनी व्यवस्थाओं के बारे में काफी सामग्री प्रदान करती है ।

सिम्पसन व स्टोन । 1948 । में "केसेज एण्ड रीडिंग्स ऑन ला एण्ड सोसाइटी" में कानून व समाज विज्ञान को परस्पर निकट लाने का प्रयास किया । प्रथम चार विभिन्न समाजों के ऐतिहासिक व मानवशास्त्रीय मानूनी दस्तावेजों के बारे में है जिसमें चार स्थितियां बतलायी है : -

1. रक्त संगठन,
2. राजनैतिक आवश्यकता
3. व्यावसायिक क्रांति, एवं
4. औद्योगिक क्रांति ।

द्वितीय पुस्तक अमेरिका में बदलती हुई सामाजिक दशाओं का कानूनी पर प्रभाव तथा तृतीय पुस्तक आधुनिक प्रजातांत्रिक व समष्टिवादी समाजों में कानूव व स्वतन्त्रता के सम्बन्ध के बारे में प्रकाश डालती है ।

यद्यपि विधि के अध्ययन में सामाजिक नियंत्रण का सिद्धांत पहले ही प्रतिपादित किया जा चुका था परन्तु रौस । 1901 । ने इसे समाजशास्त्र की शब्दावली में इस प्रकार प्रस्तुत किया कि उनके समकालीन अन्य समाजशास्त्रीय विधिवेत्ताओं का ध्यान आकर्षित हुआ । रोस्को पाउड भी रौस के विश्लेषण से प्रभावित हुए । रौस के विचार में समाज द्वारा नियंत्रण का सबसे विशिष्ठ व सुदृढ़ तरीका कानून है । सामाजिक नियंत्रण को इन्होंने समाज द्वारा व्यक्ति पर स्थापित किया जाने वाला प्रभुत्व माना है ।

कूले । 1908 । का "सामाजिक नियंत्रण का सिद्धांत समाज मनोविज्ञान के क्षेत्र से सम्बद्ध था, और विशेषकर समाजीकरण की प्रक्रिया में उनकी प्रमुख

रूचि थी इसी कारण। विधि के नियंत्रणात्मक महत्व पर उन्होंने विशेष बल नहीं दिया।

लेन्डिस ने ‖ 1939 ‖ ने यह स्पष्ट करने का प्रयास किया कि समाज के बदलते हुए मूल्यों का नियंत्रण की प्रक्रिया पर क्या प्रभाव पड़ सकता है। वे औपचारिक और अनौपचारिक नियंत्रणों में भेद करते हैं तथा इनके विचार से आज का कानून आधुनिक समाज की स्थितियों से समंजित नहीं है। इसलिए यह बेकार और शक्तिहीन हैं। बर्नार्ड ‖1939‖ में प्रथा व कानून के बारे में लिखा है कि कानूनी नियंत्रण में व्यवस्था कायम रखने की विशेषता है। उन्होंने नियंत्रण को निर्माणकारी तत्व भी माना है। होलिंगशेड ने नियंत्रण के ऊपर जोर देना उचित नहीं समझा है। इनका कहना है कि इसके कारण सामाजिक ढांचे की तरफ ध्यान कम दिया जाता है। कूले के विचार से सहमत होने वाले समाजशास्त्रियों ने या तो व्यक्तित्व के विकास पर ध्यान दिया या सामाजिक नियंत्रण के सिद्धांत को विस्तृत स्वरूप दिया। वस्तुतः समनर ‖1907‖ की तरह सामाजिक संगठन का समग्र वर्णन सामाजिक नियंत्रण की दृष्टि से अध्ययन करने वाले समाजशास्त्रियों ने नहीं किया है उनका विचार है कि सामाजिक संगठन के तरीकों, सामाजीकरण व मूल्यों के विश्लेषण पर ध्यान दिया जाना चाहिए। एच0 सी0 ब्रियर्ली का भी विश्वास है कि कूले, रौस व समनर की पद्धतियां एक दूसरे की पूरक हैं। एडविन एम0 लेमार्ट इस बात से सहमत हैं कि सामाजिक नियंत्रण को समझने के तरीके बहुत सीमित है। इनके अनुसार आदर्श नियम जब व्यक्ति की चेतावनी को दबाते हैं तो लोग निष्क्रिय या अप्रत्यक्ष नियंत्रण को ही देखते हैं और सक्रिय नियंत्रण को नहीं। इनके विचार में व्यवहार को नियंत्रित करने वाले तरीकों व नियमितताओं को पहचाना जाना चाहिए और यह भी देखना चाहिए कि नियमित करने के कौन से तरीके अपनाये गये हैं। इनके विचार में विश्वास, आदर्श, नियम, व लोकरीतियां

उन सीमाओं को बतलाते हैं जिनके अन्तर्गत नियंत्रण की प्रक्रिया चलती है, लेकिन ये स्वयं नियंत्रण के तरीके नहीं है ।

रूसेक, 1947 में संकलित सामाजिक नियंत्रण के ग्रन्थ में इस समस्या पर विचार किया । रूसेक का मत है कि आज के आणविक युग में सामाजिक नियंत्रण के अध्ययन व मूलभूत ज्ञान को बहुत आवश्यकता है । इसी ग्रन्थ के एक लेख में रिएली लिखते हैं कि सामाजिकनियंत्रण का क्षेत्र इतना विस्तृत है कि यह यह समाजशास्त्र व सामाजिक मनोविज्ञान की सीमाओं को भी लांघ जाता है । लापियेर ने सामाजिक नियंत्रण की परिभाषा इस प्रकार की है : सामाजिक नियंत्रण व्यक्ति को सामाजिक स्तर की जिम्मेदारियों से बाँधे, रखने के लिए प्रेरित व उत्साहित करता है । नियंत्रण के अधीन व्यक्ति इसलिए रहता है कि उसे भय रहता है कि कहीं उसका स्तर या अधिकार कम न हो जाय । इसी आधार पर उन्होंने ग्रामीण व शहरी जीवन के भेदों को सिर्फ संख्या का अन्तर ही माना है । इनके अनुसार सामाजिक नियंत्रण लघु समूह के द्वारा ही लागू होता है, चाहे खेत में काम करने वालों के बीच हो या कारखानों में काम करने वालों के बीच । लापियेर सामाजिक स्तर को व्यक्ति के कानूनी स्तर से ऊपर मानते हैं और औपचारिक कानून को बहुत कम महत्व देते हैं । उपरोक्त वर्णन से यह स्पष्ट हो जाता है कि विधि के महत्व को सामाजिक नियंत्रण के संदर्भ में देखने की दिशा में अभी बहुत ही अस्पष्टताएं बाकी है । सामाजिक नियंत्रण के सिद्धांत का विकास इस दृष्टि से बहुत धीमा हुआ है ।

सामाजिक व्यवस्थाओं में व्यक्तिगत मतभेद मुख्य रूप से व्याप्त रहा है । समाज के विभिन्न वर्गों में इस असमानता के कारण तनाव एवं गंभीर घटनाएं महत्वपूर्ण अंग रही है । स्थाई सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत इन मतभेदों को संस्था द्वारा निर्मित नियमों के आधार पर हल किया गया है । वर्तमान समाज के विधायक एवं न्यायालयों में इस प्रकार के संघर्षों को हल करने की व्यवस्था है ।

हावेल ॥1937॥ का मत है कि नीति निर्धारण की सामान्य सी व्यवस्था में सामाजिक परिवर्तन अवश्यम्भावी है। इंग्लैण्ड में 1688 की क्रान्ति के बाद स्वतंत्र न्यायालयों की स्थापना हुई। इस व्यवस्था के अन्तर्गत राजा को यह अधिकार था कि वह अपने मंत्रियों एवं सांसदों की नियुक्तियां करे। सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत विवाद एवं रूचि पर पारिस्थितिकी का प्रभाव आवश्यक रूप से पड़ता है। विवादों के संदर्भ में कुछ मुख्य कारक उत्तरदायी होते हैं, और यह कारक कुछ सीमा तक प्रत्येक सामाजिक व्यवस्था में व्याप्त है। पारसेंस ॥1949॥ ने इस दिशा में महत्वपूर्ण मार्ग निर्देशन किया है :- शक्ति के उपयोग में निश्चित रूप से विरोध होता है, व्यक्तियों के शोषण के संदर्भ में शक्तियों का दुरूपयोग होता है, शक्तियों के उपयोग से सांस्कृतिक मूल्यों का ह्रास होता है, एवं सामान्यतया प्रत्येक समाज में प्रतिस्पर्धात्मक व्यवस्थाएं हैं। इन प्रतिस्पर्धाओं के के फलस्वरूप कुछ व्यक्ति विजयी होते हैं एवं कुछ पराजित होते हैं। जो व्यक्ति पराजित होते हैं उनमें, प्रति स्पर्धा की पध्दति के प्रति अविश्वास हो जाता है, 5. उद्देश्य विशेष को समान रूप से प्रत्येक व्यक्ति अर्जित कर पाता है, 6. समाजीकरण की प्रक्रिया पर उप संस्कृतियों का प्रभाव पड़ता है।

सामाजिक नियंत्रण को स्थापित रखने के लिये दण्ड एक महत्वपूर्ण व्यवस्था है। सामाजिक मूल्यों के विपरीत आचरण करने वाले को दण्ड देकर हतोत्साहित किया जाता है। अपराध एक ऐसा व्यवहार है जो समाज के कल्याण के लिये हानिकारक होता है।

इलियट एवं मेरिल ॥1950॥ के अनुसार अपराध का अभिप्राय: सामाजिक सम्बन्धों में एक विघ्न है और वह विघ्न क्या है, उसके सम्बन्ध में एक सामाजिक परिभाषा से हैं। प्रत्येक अपराध का एक सामाजिक पक्ष होता है उसे पूर्ण रूप से ध्यान में रखे बिना अपराध की अवधारणा को सही अर्थों में नहीं समझा जा -

जा सकता है। सामाजिक दृष्टिकोण से अपराध एक ऐसी अवस्था है, जो स्थापित सामाजिक सम्बन्धों की व्यवस्था को नष्ट करती है, किन्तु इस अवस्था को कम अपराधी अवस्था कहा जायेगा। अपराधी आचरण का निर्धारण उन सामाजिक मूल्यों द्वारा होता है, जिन्हें वृहत्तर समूह आवश्यक समझता है। अपराध की परिभाषा प्रत्येक समाज में समाज में समय समय पर परिवर्तित होती रहती है। अपराधों को नियंत्रित करने के लिये प्रत्येक समाजमें आवश्यक कानूनों का विकास किया गया है। कानून वह सामाजिक मूल्य है जिन्हें राज्य की स्वीकृति,प्राप्त होती है, और राज्य द्वारा प्रतिपादित कानूनों के उल्लंघन करने वाले को राज्य दण्ड देता है। इस दण्ड देने की व्यवस्था को न्यायिक व्यवस्था कहा जाता है। राज्य का यह कर्तव्य है कि वह अपराधी को दण्ड दे और वास्तविक अपराधी का पता लगाने के लिये प्रशासनिक एवं न्यायिक व्यवस्था की स्थापना करे।

इसी समीक्षा के अन्तर्गत अपराधिक प्रवृत्ति के विकास के सन्दर्भ में स्पष्टीकरण प्रदान किया गया है किसामान्य रूप से 20 से24 वर्ष की आयु के व्यक्ति सबसे अधिक अपराध करते हैं। आयुके अनुसार अपराध के प्रकार बदलते रहते हैं। इसका कारण यहहै कि आयु के साथ साथ शारीरिक रचना तथा क्रियाओं में परिवर्तन प्रतीत होने लगते हैं। अतः व्यक्ति के दृष्टिकोणों मनोवृत्तियों,रुचियों, हितों एवं अन्ततः सम्बन्धों के परिवर्तन होते रहते हैं। यह परिवर्तन कभी कभी व्यक्ति को अपराधी व्यवहार की दिशा में क्रियाशील करते हैं।

सदरलैंड (1931) ने विभिन्न आयु के व्यक्तियों में विभिन्न अपराधों का अध्ययन किया है। इनके अनुसार डकैती,गबन, जालसाजी, बलात्कार, आवारागर्दी आदि अपराध 20 से 24 वर्ष के व्यक्ति अधिकतर करते हैं। हत्या तथा अन्य यौन अपराध 20 से 29 वर्ष की आयु में अधिकतर होतेहैं, जबकि नशा, जुआ, आदि अपराध 35 से 39 वर्ष की आयु में अधिक पाये जाते हैं।

भौगोलिक सीमाओं से जुड़े हुये देशों में भी अपराधों में भिन्नता पाई जाती है । हिंसक अपराध साधारणतया युवकों द्वारा ही किये जाते हैं । जिन बच्चों का शारीरिक विकास उनकी आयु की तुलना से अधिक हो गया है उनमें प्रथम अपराध की आयु साधारण बच्चों से कम होती है । सामान्यतः अपराध की दरें आयु व्यतीत होने के पश्चात क्रमशः कम होती जाती हैं । इस व्याख्या ने सार्वजनिक न्याय के साधन के रूप में दण्ड की अवधारणा के दो तत्वों को महत्व दिया है प्रथम दण्ड एक समूह द्वारा सामूहिक रूप से समूह के ही किसी एक सदस्य को दिया जाता है, द्वितीय दण्ड के द्वारा किसी पूर्व निश्चित ढंग या सामाजिक मूल्यों द्वारा समर्थित ढंग से सदस्य को कष्ट या यातना प्राप्त होती है ।

दण्ड सामाजिक प्रतिकार के रूप में वह कष्ट या यातना है जो एक समूह के ही अपराधी सदस्य को उसके अपराध के फलस्वरूप न्यायालय द्वारा दी जाती है । भारतवर्ष में प्राचीन काल से बहुत समृद्ध न्याय व्यवस्था रही है /इस देश में न्याय को लौकिक ही नहीं पारलौकिक से भी सम्बन्धित माना गया है । दुबे, 1971 ।

मनु स्मृति में वर्णित दण्ड की व्याख्या में राजा का कार्य चलाने के लिये, ईश्वर ने सब जीवों के रक्षक ब्रहमतेज से सम्पन्न धर्म रूप दण्ड को सर्वप्रथम बनाया है । जिस दण्ड के भय से सब चराचर जीव ... सुख प्राप्त करते हैं, और स्वधर्म से विचलित नहीं होते है । राजा का कार्य है कि वह देशकाल, दण्ड शक्ति एवं अपराधानुसार शास्त्रीय ज्ञान का तत्वपूर्वक विचार करके अपराधियों के लिये यथायोग्य दण्ड निश्चित करें । यथार्थ में वही दण्ड शासक है । दण्ड सब प्रजाओं का शासक और रक्षक है । इसलिये विद्वजन दण्ड को ही धर्म कहते हैं ।

मनुस्मृति के अनुसार" विचार प्रदत्त दण्ड प्रजाओं की प्रसन्नता देता है किन्तु अविचार युक्त दण्ड सभी प्रकार से नाश करता है । सम्पूर्ण विश्व दण्ड के अधीन है एवं दण्ड के उचित प्रयोग न होने से सभी वर्ग दूषित हो जायेंगे । भारतवर्ष में आदि काल से यह विचार प्रभावी रहा है कि दण्ड का प्रयोग उचित रूप से किया जाये अन्यथा सामाजिक विघटन का प्रभाव बढ़ेगा । मनुस्मृति के अनुसार दण्ड ही महान तेज है एवं अज्ञानी उसे कठिनाई से धारण कर सकता है । जो राज्य मंत्रियों एवं सहायकों से रहित, मूर्ख, लोभी, शास्त्र-विहीन और विषयासक्त है, वह दण्ड का प्रयोगान्यायपूर्वक नहीं कर सकता है ‖ गौतम, 1982 ‖, पौराणिक, 1982 ‖ । पौराणिक ने मनुस्मृति के आधार पर कहा है कि राजा को राज्य में जनता को पीड़ित करने वाले तत्वों का सर्वथा विनाश करने में तत्पर रहकर, सदैव प्रजापालन में रत रहना चाहिए । न्याय कार्यों में नियुक्त राज्य कर्मचारियों के आचरण पर बल देते हुये उन्होंने कहा है कि रिश्वत, छलकपट, एवं धूर्ततापूर्वक अभिलेखों में फेदबदल करने वाले शत्रुपक्ष से मिलकर उसका भला करने वाले, स्त्रियों, बच्चों, विद्वानों की हत्या करने वालों को प्राण दण्ड दिया जाये । इसी विश्लेषण में याज्ञवल्क के माध्यम से राजा तथा सभासदों के सद्गुणों तथा सद्वृत्तियों पर जोर दिया गया है । यदि सभासद राग, लोभ या भय से धर्म-शास्त्र के विरूद्ध कार्य करें तो शासक का कर्तव्य है कि उस सम्बन्धित वाद से सम्बद्ध द्रव्य से दुगने द्रव्य का दण्ड सभा-सद को दिया जाये । सभासदों का भी यह कर्तव्य है कि अन्याय पर चलने वाले शासक का निवारण करें । यदि वह ऐसा नहीं करते तो वे पाप के भागी होते हैं । वस्तुतः हिन्दू न्याय व्यवस्था में राजा, सभासद तथा जनता को अधिकारों की अपेक्षा कर्तव्यों का अधिक ध्यान रखना होता था ।

यद्यपि भारत में विधि के समाजशास्त्र के क्षेत्र में कोई विशिष्ट,प्रगति नहीं हुई है किन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि यहां के प्रमुख समाज वैज्ञानिकों

का ध्यान इस दिशा की ओर गया है । वैसे प्राचीन भारतीय ग्रन्थों में धर्म शास्त्रों में समाज की समग्र व्यवस्था के साथ विधि व्यवस्था का उल्लेख विस्तृत रूप से मिलता है । मनुस्मृति एवं कौटिल्य के अर्थशास्त्र में समग्र सामाजिक व्यवस्था के संदर्भ में विधि शास्त्र की व्याख्या की गयी है । दीपंकर ‡ 1968 ‡ ने कौटिल्य के समय की जाति व्यवस्था को श्रम विभाजन पर आधारित बताया है । इनके अनुसार अनेकों लाभदायक कार्य तथा संस्कृति कार्य निम्न वर्ग के लिए आरक्षित थे । सत्ता का विकेन्द्रीयकरण था । 10 ग्रामों, 400 ग्रामों, 800 ग्रामों में एक अधिकरण हुआ करता था । इन अधिकरणों में नियुक्त न्यायाधीश की योग्यता आमात्यों जैसी होती थी । शपथ लेने की प्रथा थी । ब्राहमण, क्षत्री, वैश्य, तथा शूद्र, सभी से भिन्न-भिन्न शपथ उनके व्यवसाय के आधार पर दिलाई जाती थी । मिथ्या साक्ष्य पर कठोर दण्ड दिया जाता था । न्याय प्रशासन में साक्षियों का महत्वपूर्ण स्थान था । राजकीय कर्मचारी उच्च योग्यता के आधार पर नियुक्त किये जाते थे । अच्छे कार्य करने वाले कर्मचारी को पुरस्कृत किया जाता था । राज्य कर्मचारियों के आचरण पर विशेष नजर रखी जाती थी । न्यायाधिकरण ‡, प्राकृतिक न्याय की भावना से प्रेरित होकर कार्य करते थे । जाति के आधार पर कुछ भेद-भाव दण्ड के सम्बन्ध में प्रतिष्ठित थे । बिना आज्ञा के दूसरे राज्यों में जाने पर प्रतिबन्ध था । कौटिल्य कालीन भारतवर्ष में गुप्तचर सेवायें भी विद्यमान थी ।

शामसत्री ‡ 1961 ‡ ने कौटिल्य के अर्थशास्त्र के आधार पर लिखा है कि ऐसे न्यायाधीश को दण्ड देने की बात प्रतिष्ठित थी जो धमकी दें, घूरकर भय पैदा करें, अपमानजनक शब्दों का प्रयोग करें या ऐसे प्रश्न करें जो तर्क संगत नहीं हों या अनावश्यक रूप से निपटारे में विलम्ब करें ।

टेवरनियर ‡ 1921 ‡ विदेशी यात्री ने गोलकुण्डा राज्य जो 1652 में मुगल आधिपत्य से अलग था, के बारे में लिखा है कि इस देश में अपराधी को जेल में रहने की व्यवस्था नहीं थी । तुरन्त ही अपराधी न्यायालय में ले जाया जाता था तथा परीक्षण के बाद दण्डित किया जाता था ।

मनु, याज्ञवल्क, विष्णु तथा गौतम की स्मृतियों के आधार पर मैक्समूलर (1977) ने असक्षम साक्षी का विवरण देते हुये लिखा है कि दास, स्त्री, बच्चा, तेल बेचने वाला, नशे वाला, पागल आदि साक्ष्य के रूप में परीक्षित नहीं होते थे। अधर्मी, सपेरा, शूद्र महिला का पुत्र, निम्न जाति का व्यक्ति राजा का शत्रु आदि भी सक्षम साक्षी नहीं माने जाते थे। न्यायालयों में साक्ष्य देने से पहले शपथ लेने की परम्परा बहुत पहले से विद्यमान रही है। पुजारी को सत्य की क्षत्रियों को घोड़ों तथा शस्त्रों की, वैश्य को धन की एवं शूद्रों को सभी अपराधों की शपथ लेनी होती थी। इस तथ्य का समर्थन कौटिल्य के अर्थशास्त्र एवं मनुस्मृति में प्राप्त होता है। मिथ्या साक्ष्य देना जघन्य अपराध माना जाता था। यही कारण था कि वर्तमान न्याय व्यवस्था के समान न्याय प्रशासन में कठिनाई नहीं होती थी। वस्तुतः भारतवर्ष के सामाजिक नियंत्रण में पाप-पुण्य का भय तथा धार्मिक मान्यतायें महत्वपूर्ण योगदान करती थीं। मिथ्या साक्ष्य को राजा व्दारा दण्डित किये जाने का प्राविधान विद्मान था। उसके लिये धार्मिक परलौकिक भय की व्यवस्था थी। इस विवेचना की संस्तुति भी मनुस्मृति के माध्यम से की गई है। जानवरों के सम्बन्ध में मिथ्या साक्ष्य देने वाले को पाँच कत्ल के बराबर पाप लगता है। व्यक्ति के सम्बन्ध में झूठ साक्ष्य देने वाले को एक हजार कत्ल के बराबर पाप लगता है। सोने के संबंध में मिथ्या साक्ष्य देने वाले को जन्मे व अजन्मे सभी कह हत्या करने के बराबर पाप लगता है। अनेकों प्रकार के मनोवैज्ञानिक तथा धार्मिक भय से कोई भी साक्षी मिथ्या साक्ष्य देने का साहस नहीं करता था। वर्तमान समय में धार्मिक मान्यतायें समाप्त होने के कारण साक्षी न्यायालय में निष्ठापूर्वक साक्ष्य नहीं देते हैं। जिसके फलस्वरूप न्याय प्रशासन में महान बाधा है।

बौद्ध न्याय व्यवस्था में अपराधी को विचारण हेतु विनिच्चया महामत्ता के समक्ष भेजा जाता था। निर्दोष पाये जाने पर उसे वह विमुक्त कर सकते थे। यदि वे उसे अपराधी पाते थे तो उसको सजा न देकर उच्च न्यायाधिकरण

"बहरिकात" को भेजते हैं । यह न्यायाधिकरण भी निर्दोष पाने पर अपराधी को विमुक्त कर सकता था, किन्तु दोषी पाये जाने पर उसे उच्च न्यायाधिकरण "सत्ताधारा" को भेजा जाता था । इसके अतिरिक्त तीन और न्याया-अधिकरण इसी क्रम में होते थे जिन्हें अर्थकुल, सेनापति तथा अपरजा कहा जाता था । यह सभी न्यायाधिकरण अपराधी को विमुक्त तो कर सकते थे किन्तु दण्ड नहीं दे सकते थे । अंतिम अधिकरण में राजा को ही दण्ड देने का अधिकार था । राजा भी "पवेनी पुस्तक" से निर्देशित रहता था । इस तरह अपराधी तभी दण्ड पाता था जब क्रमशः सात न्यायाधिकरण उसे दोषी पाते थे, जबकि वह किसी एक के व्दारा भी विमुक्त किया जा सकता था । प्राचीन भारतीय न्याय प्रशासन में जहां अपराधी को निर्दोष सिद्ध होने का पूरा अधिकार था वहीं पीड़ित को भी पूरा राजकीय संरक्षण प्राप्त था ।

बहादुर ‖ 1979 ‖ वैदिक काल में राजा पुरोहितों व कानूनी सलाह -कारों की सहायता से न्याय प्रशासन करता था । चोरी के अपराध में दण्ड का उद्देश्य पीड़ित को हर्जाना देना था । पीड़ित को रक्त का मूल्य भी दिया जाता था । अपराधीा को अग्नि तथा पानी व्दारा यातनायें दी जाती थीं। उत्तर वैदिक काल में ग्राम न्यायाधीशों छोटे अपराधों का विचारण करते थे । दण्ड भी अपेक्षा कृत कठोर थे । इस व्यवस्था में अपराधी के हाथ पैर काटने तक का प्रचलन था । जघन्य अपराधों जैसे हत्या में अपराधी को मृतक के रिश्ते-दारों को 100 गायें देनी होती थीं । ब्राह्मणों को अनेकों विशेषाधिकार प्राप्त थे । उन्हें मृत्यु दण्ड तथा शारीरिक यातनाएं देने की व्यवस्था नहीं थी । दण्ड जाति के आधार पर दिये जाते थे । एक अपराध के लिये ब्राह्मण अपराधी को जो दण्ड दिया जाता था उससे गंभीर दण्ड अन्य जातियों के अपराधियों को दिये जाने का प्राविधान था । शूद्रों की स्थिति बहुत शोचनीय थी । उन्हें बहुत गंभीर दण्ड दिये जाते थे । राज्य का विशेष कर्तव्य चोरी एवं लूट के विरूद्ध कार्यवाही करना था । वही राज्य सबसे अच्छा माना जाता

था, जिसमें चोरी नहीं होती थी । चोरी हो जाने पर चोरी गई सम्पत्ति की कीमत पीड़ित को राजकोष से देने का प्राविधान था । हिन्दू राज्यों की न्याय व्यवस्था में राजा सर्वोच्च न्यायाधीश था तथा विवादों के निपटारे के लिये नियमित न्यायालय थे । गांव तथा कस्बों में स्थापित न्यायालय को "प्रतिस्थिता" कहते थे । "चला" घूमनेवाली अदालत होती थी । यह स्थान-स्थान पर जाकर विवादों का निपटारा करती थी । "मुद्रिटा" न्यायालय में राज्य द्वारा नियुक्त जज कार्य करते थे । राजा तथा उसकी सभा को "ससत्रिता" कहा जाता था । इस युग में सामान्यतया चार प्रकार के दण्ड दिये जाते थे :- 1, जुर्माना ; 2. सम्पत्ति का हर्जाना ; 3. यातना ; एवं 4. मृत्युदण्ड । चोरी के मामले में पुलिस का कर्तव्य अनिवार्य रूप से चोर को पकड़ना होता था । गांव का मुखिया "ग्रामिणी" होता था । इसकी नियुक्ति विभिन्न राज्यों में भिन्न-भिन्न विधियों के माध्यम से होती थी । किन्हीं स्थानों पर "ग्रामिणी" की नियुक्ति राजा द्वारा और किन्हीं स्थानों पर चुनाव द्वारा होती थी । "ग्रामिणी" अपराधी को दण्ड देता था और यदि वह निर्णय करने में असमर्थ होता था तो अपराधी को 10 गांव गांव के मुखिया को संदर्भित करता था । यदि वह भी निर्णय करने में असफल रहते थे तो 100 गांव के मुखिया को विवाद संदर्भित किया जाता था । इस प्रकार राजा तक विवाद पहुंच जाता था । न्याय को उपयोगी बनाने के लिए अपराध की जड़ में पहुंचने में साक्षियों का महत्वपूर्ण स्थान भारतवर्ष में हमेशा रहा है । वैदिक युग में सभी नागरिकों के साक्ष्य की समान मान्यता नहीं थी ।

मुस्लिम भारत में मध्य एशिया का बहुत कुछ अनुसरण किया गया । बलबन के राज्य में अनेकों कानूनी पुस्तकें अरबी में लिखी हुई लाई गईं तथा इनका अनुवाद किया गया । हिन्दुओं पर जजिया कर लगाया गया । इस प्रकार के न्यायालय विद्यमान थे :- 1. दीवाने मजलिस- इसमें राजा स्वयं बैठा करता था तथा अधिकतम वाद दायर किये जाते थे ; 2. काजी कोर्ट

इसमें इस्लामिक कानूनों का प्रवर्तन होता था ; 3. मुहतासिब तथा 4.शुर्ता कोर्ट - अमीरे-दाद मुख्य मजिस्ट्रेट था जो सुल्तान की अनुपस्थिति में कोर्ट करता था एवं यह न्याय के अतिरिक्त सामान्य प्रशासन के कार्य भी करता था । अकबर ने अपनी सम्पूर्ण प्रजा के लिये एक समान कानून बनाने की कोशिश की । अकबर ने सभी धर्मों को मान्यता दी तथा कहा कि किसी भी धर्म के अनुयायी की उपासना में कोई हस्तक्षेप नहीं किया जाये । धर्मनिरपेक्ष वातावरण का निर्माण करने के लिये विशिष्ट दिनों में जानवर बध तथा शराब के निर्माण में प्रतिबंध लगाया । मुस्लिम काल में कारावास मुख्यतय: राजनैतिक नेताओं को दिया जाता था । पीड़ित पक्षकार को हर्जाना के लिये अपराधी से जुर्माना लिया जाता था । इसयुग में सुलहनामा आज की अपेक्षा अधिक विस्तृत थे । यदि मृतक का वारिस हर्जाना लेने की स्वीकृति दे देता था तो हत्या का आरोप वापस ले लिया जाता था ।

स्पष्ट है कि पीड़ित की बहुत कुछ क्षतिपूर्ति की जाती थी । अपराधी को दण्डित कराना उसकी इच्छा पर रहता था । जाति तथा धर्म के आधार पर न्याय प्रशासन में पक्षपात मुगलकालीन भारत में विद्मान रहा । यदि एक हिन्दू किसी मुसलमान की हत्या करता था तो उसे मृत्यु दण्ड दिया जाता था इसके विपरीत ऐसा नहीं होता था, जब तक कि उसने हत्या क्रूरतापूर्वक न की हो । इस समय हाथी के पैर से कुचलना, सांपों से कटवाना, ऊंचाई से गिराना शरीर के टुकड़े करके भूखें घड़ियालों के सामने डालना, हाथ-पैर काटना, आँखें निकालना आदि दण्ड सामान्यतया दिये जाते थे ।

चतुर्वेदी (1984) का मत है कि प्राचीन उचित न्याय प्रशासन में राजा का उद्देश्य अपने राज्य में शुभ कामनायें पाना नहीं था बल्कि उसे स्वर्ग प्राप्त करना था । अनुचित न्याय से राजा को पाप का भय रहता था । प्राचीन हिन्दू न्याय व्यवस्था श्रुती, पुराण एवं धार्मिक ग्रन्थों के आधार पर

सामाजिक धार्मिक अवधारणापर आधारित थी । अपराधी को निर्दोष सिद्ध होने का उचित प्राविधान था । हिन्दू न्याय व्यवस्था में कर्तव्य का अधिकार से अपेक्षाकृत अधिक महत्व था । यदि धर्म का उल्लघंन राज्य के अवगत कराया जाता था तो उसका समुचित निपटारा किया जाता था । इस व्यवस्था में चार प्रकार के दण्ड:- वागदण्ड, धिगदण्ड, अर्थदण्ड एवं बधदण्ड दिये जाते थे । अर्थ दण्ड तथा वध दण्ड केवल राजा द्वारा ही दिये जाते थे और इसमें भी अनेकों मर्यादायें थी ।राजा अपीली अधिकार के रूप में न्याय की प्राप्ति तथा न्यायिक व्यवस्था की प्रतिष्ठा को बनाये रखने में विशेष स्थिति में होता था । इसतरह उसके तीन प्रमुख उत्तरदायित्व थे:- 1• स्वयं मामलों को देखना तथा पीड़ित के हानि का प्रतिकार करना, 2• अपराधी को दण्ड देना एवं,यदि कोईवादकारी असत्य रूप सेयह आरोप लगाये कि उसे न्याय नहीं दिया गया है तो उसे सजा ।दण्ड। देना । हिन्दू न्याय व्यवस्था में प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य एवं परिस्थिति जन्य साक्ष्य मान्य थेतथा शीघ्र एवं सुलभ न्याय की अवधारणा प्रतिष्ठित थी । मुगलकाल में भारतवर्ष की न्याय व्यवस्था में कोई उल्लेखनीय अन्तर नहीं हुआ । 712 ऐ०डी०0 में मुहम्मद कासिम ने सिंध तथा मुल्तान पर राजादाहिर को हराकर अधिकार किया, किन्तु न्याय प्रशासन में विशेष अन्तर नहीं देखा गया । मुस्लिम सिपाही आवश्यक रूप से शेरा से बाध्य थे । काजी एवं मुफ्ती न्यायाधीश थे । शेरशाह सूरी ने अपराधिक तथा व्यवहार न्यायालयों का प्रथक्करण किया । गाँव में मुकद्दम अपराधी को पकड़ने को बाध्य थे । यदि मुकद्दम अपराधी को पकड़ने में असफल होते थे तो उन्हें मृत्यु दण्ड दिया जाता था । लाहौर के गवर्नर मोहम्मद अमीन खाँ ने मिथ्या चोरी के अपराध में माउसी को जेल मेंबंद कर दिया और वाद में उसकी जमानत ली गयी । इसी प्रकार जब मेनरीक यात्री मिदनापुर ।बंगाल। में गिरफ्तार किया गया तब एक मुस्लिम व्यापारी द्वारा जमानत देने पर उसे छोड़ा गया । मुगलकालीन भारत में वादों के स्थानांतरणों का अधिकार ही राजा को होता था।

शाहजहाँ ने एक हिन्दू लिपिक का वाद अपने यहाँ स्थानान्तरित किया । यह तथ्य की मार्डेतीकी स्टोरिया ।प्रथम। के आधार पर लिखा गया है । वर्तमान युग की तरह मुगलकालीन न्याय व्यवस्था में व्यक्ति स्तर से संस्थित किये गये वादों को सुलह करने की परम्परा थी । अन्य वादों में न्यायालय की अनुमति लेना आवश्यक था । हत्या के वादों में खून की कीमत देकर वाद वापस लिये जाने का प्राविधान था । हिन्दू राज्यों की तरह मुस्लिम काल में शीघ्र न्याय पर विशेष बल दिया जाता था । 1585 ए0डी0 में अकबरने एक न्यायिक कमेटी का निर्माण सामान्य सुधार तथा शीघ्र न्याय के लिये किया था ।

वर्तमान भारतवर्ष में सबसे अधिक आवश्यकता शीघ्र न्याय की अनुभव की जारही है । न्याय में विलम्ब न्याय के उद्देश्य कोपराजित करती है । आज से कई गुना शीघ्र तथा सुलभ न्याय ब्रिटिश शासन के पूर्व भारतवर्ष में उपलब्ध था । अकबर के समय में शीघ्र न्याय तथा घटनास्थल पर न्याय के प्रयत्न किये गये । प्राचीन भारतकी भाँति मुगलकालीन भारत में भी पीड़ितों की क्षतिपूर्ति कर सिद्धांत प्रतिष्ठित रहा ।

शर्मा 1949 ने औरंगजेब के समय न्याय का वर्णन करते हुये कुछ मुकदमों काविवरण दिया है । मानियाँ की विधवा ने सुन्दर द्वारा उसके पति के कत्ल का वाद दायर किया । दोषी पाये जाने पर सुन्दर को जेल में रहना पड़ा । क्योंकि न तो पीड़ित ने खून कीकीमत लेना स्वीकार किया और न ही प्रतिशोध में मृत्यु दण्ड की इच्छा व्यक्त की । इसी प्रकार चिंता के लड़कों ने पीर मुहम्मद के विरुद्ध अपने पिता की हत्याका वाद काजी के न्यायालय में प्रस्तुत किया । वादी द्वारा साक्ष्य प्रस्तुत किये गये और पीर मुहम्मद को दोषी पाया गया । दोषी पाये जाने पर काजी ने घोषित किया कि वादी का अधिकार है कि वह खून की कीमत मांगे यापीर मुहम्मद को मृत्यु दण्ड। वादी ने पीरमुहम्मद तथा उसके दो साथियों को किले से निकालने की इच्छा

प्रकट की और इस प्रकार तीनों को किले से बाहर निकाल दिया गया । इससे स्पष्ट होता है कि हिन्दू तथा मुस्लिम न्याय व्यवस्थायें वेद तथा कुरान पर आधारित थीं । दोनों व्यवस्थाओं का आधार दैविक था । हिन्दू व्यवस्थायें मनु,याज्ञवल्क, नारद, बृहस्पति आदि के अनुसार तथा मुस्लिम न्याय व्यवस्था साहिहयुवन्ता मिनहाजुत,तलबिन, जाये असाधिर पर आधारित थीं/ दोनों न्याय व्यवस्थाओं में राजा सर्वोच्च न्यायाधीश था । विद्वानों को न्यायाधीश नियुक्त करने की व्यवस्था थी। स्पष्ट के विधि के अभाव में स्वविवेक का सिद्धांत मान्य था । दोनों विधियों में समानता के कारण ही शनै-शनै हिन्दू व्यवस्था का स्थान मुस्लिम व्यवस्था ने बिना कठिनाई के ग्रहण कर लिया ।

मुगल बादशाह न्याय की गरिमा पर बहुत विश्वास करते थे । दिल्ली के सुलतान शानदार न्यायालयों के साथ ही अपनी जनता को प्रभावित करने के लिये प्रदर्शन भी करते थे । किसी भी समय न्याय के फरयाद की जा सकती थी।दरबार में हाथ उठाकर, घंटी बजाकर, लिखकर, फरयादें करने की परम्परायें प्रतिष्ठित थीं । ग्राम पंचायतें आरम्भ से ही प्रशासन की इकाई रही हैं । मुगलकाल में भी ग्राम का मुखिया चुना जाता था, जो सरकार तथा गाँव के बीच की कड़ी होता था । वह राजस्व जमा करके राजकोष में भेजता था । सम्पूर्ण एकत्रित राजस्व का कुछ हिस्सा गाँव के मुखिया को दिया जाता था । ग्राम पंचायत न्यायिक सामान्य, प्रशासन, कानून व्यवस्था आदि सभी कार्य करती थीं । विदेशी यात्रियों ने इन्हें छोटा गणतंत्र कहा है । शिवाजी के राज्य में पटेल, कुलकर्णी एवं योगला राजस्व एकत्रित करते थे । इनके द्वारा गाँव के विवादों का निपटारा तथा अन्य कार्यों का सम्पादन होता था । पूर्व की प्राचीन, सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियों में, प्राचीन ग्रीस,रोम,औरबाद में अमेरिका के दक्षिणी राज्यों में दासता सभ्य जीवन की पृष्ठभूमि थी । महान् दार्शनिक अरस्तु, पैन्टाटयूच इसे नैसर्गिक मानते

थे । उन्नीसवीं शताब्दी के पहले तीसरे भाग तक इंग्लैण्ड एक क्रूर देश था । नैतिकता परिवर्तित हुई और कानून परिवर्तन हुये । सन् 1830 में जानवरों के प्रति क्रूरता अपराध घोषित हुई । बच्चे कारखाने में काम करते रहे एवं 50 वर्षों बाद बच्चों के प्रति क्रूरता अपराध घोषित की गई । दलितवर्ग को कोई संरक्षण शोषण करने वालों के विरुद्ध प्राप्त नहीं था । रोनोल्ड (1950) ने अमेरिका के न्यायालयों की व्यवहारिक कठिनाइयों को प्रमुख वादों का उल्लेख किया है । इस अध्ययन में गवाह एवं अभिवक्ताओं की भूमिका तथा न्यायाधीश के विवेक का महत्व विश्लेषित किया गया है । वकील का बुद्धि चातुर्य और गवाह की क्षमता का प्रभाव विचारण पर होता है । एक ही घटना भी कई कई व्यक्ति कई प्रकार से देखते तथा समझते हैं और कई प्रकार से साक्ष्य देते हैं । न्याय कक्ष एवं अजनबी जगह गवाह के लिए होती है और निश्चय ही वह वकीलों के प्रश्न पूछने के तरीके तथा शब्द जाल में भ्रमित हो जाता है । अपराध एक समाजशास्त्रीय अपकृत्य है । पीड़ित बहुधा अपराधियों को अवसर देते हैं । समाचार पत्रों द्वारा जनता के समक्ष बहुत झूठे आयाम दिये जाते हैं । इसकी अपेक्षा रचनात्मक पहलू पर कम ध्यान दिया जाता है । सम्वाददाताओं को अपराध नियंत्रण के बारे में विशेष प्रशिक्षण दिया जाना चाहिये । यही दशा चलचित्रों, पत्र पत्रिकाओं की भी है । व्यवहारिक रूप में संचार के साधन अपराध नियंत्रण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं । पुलिस की प्रतिष्ठा, जनराय, तथा जनता के सहयोग पर निर्भर करती है । जब पुलिस विभाग भ्रष्टपरिस्थितियों में काम करता है तो कानून काप्रवर्तन असफल होता है, और पुलिस सेवा अपराधियों की बचत के लिये हो जाती है (रंकलेस, 1967) ।

अपराधी की व्याख्या वेनू गोपाल 1983 के करते हुये लिखा है कि 80वे दशक का अनुभव यह दर्शाता है कि अपराध जीवन का एक तथ्य ही नहीं बल्कि जीवन यापन का तरीका बन गया है । क्योंकि अपराधिक व्यवहार

अनेकों व्यक्तियों द्वारा उपयोगिता, आवश्यकता, एवं मजबूरी के आधार पर स्वीकार कर लिये गये हैं। अपराध मात्र इसलिये अदृश्य हैं क्योंकि हम उन्हें देखना नहीं चाहते हैं। यदि हम गम्भीरता से कानून पर विश्वास नहीं करते हैं और कानून का निर्माण करते है, ऐसे कानूनों का उल्लंघन हमें कभी अपराध नहीं लगेगा। अनेकों व्यक्ति जो अपराध का उत्प्रेरण करते हैं और अप्रत्यक्ष रूप से अपराध करवाते हैं, कानून की पकड़ में नहीं आते हैं। अपराधिक सांख्यिकी सही नहीं है। हमारे समाज में गुप्त अपराधिकता बहुत है क्योंकि आम नागरिकों की न्यायालयों तथा पुलिस से दूर रहने की इच्छा भौगोलिक परिस्थितियों एवं संचार साधनों की कमी बहुत हद तक स्वतंत्र सूचनाओं में बाधक है। अपराध स्थल से थाने की दूरी, ग्रामीण क्षेत्रों में जातीय परम्परायें भी स्वतंत्र सूचनाओं में बाधक है। बड़ी संख्या में अपराधी अपराध के परिणामों से बच निकलते हैं। अपराधों की ओर समाज के झुकाव बढ़ने का महत्वपूर्ण कारण यह है कि पीड़ित की पूर्ण उपेक्षा की जाती है। प्राचीन भारत, इंग्लैण्ड तथा रोम, में भी पीड़ित की क्षति पूर्ति की व्यवस्थायें थी। किन्तु समय के साथ अपराधिक न्याय प्रशासन से इनका अस्तित्व लुप्त प्राय: हो गया है।

चार्ल्स (1960) ने अपने अध्ययन में कानूनों की व्याख्या की है। इनके अनुसार कानून भूत काल में आकस्मिक समस्याओं को ध्यान में रखे बिना बनाये गये हैं। उनके अनुमालन में निन्दा की ही अपेक्षा की जानी चाहिये। कानून के सभी क्षेत्रों में, बहुसंख्यक वादों में, तकनीकी सामग्री, तकनीकी कारणों से विश्लेषित, एक निश्चयात्मक निर्णय देने में असफल है। व्यावसायिक चातुर्य की तीव्रता से अक्सर अधिक संदेहात्मक उत्तर आ सकते हैं। न्यायाधीश की बुद्धि कभी-कभी मात्र एक निश्चयात्मक उत्तर ही नहीं देती है बल्कि सम्भावित उत्तरों का एक क्रम देती है। एक बात बहुत स्पष्ट हो जानी चाहिये कि न्यायाधीशों को अपने निर्णय अतकनीकी तथ्यों पर बनाना चाहिये। यह कोई

नया दृष्टिकोण नहीं है । व्यक्तिगत सनक एवं अन्ध अवचेतना का प्रभाव निर्णयों पर नहीं होना चाहिये । विल्सन ‡ 1963 ‡ के अनुसार यदि कानून के उल्लंघन करने वाले, कानून पालन करने वालों से तुलना में अधिक हो तो तब कोई भी संस्था कानून का प्र वर्तन नहीं कर सकती है, कितनी भी क्षमता शील ये संगठित संस्था क्यों न हो, सामाजिक समानता एवं आर्थिक न्याय के प्रति सजगता से मात्र तनाव, संघर्ष तथा अस्थिरता ही पैदा होती है यदि राष्ट्रीय लक्ष्य मात्र आमनागरिकों को धोखे नारे और भाषण हों यदि सामाजिक तथा राजनैतिक वातावरण एक सक्षम पुलिस का वास्तव में विरोधी हो तब कानून का प्रवर्तन निश्चित रूप से प्रभावित होगा ।

जगन्नाथन ‡ 1978 ‡ ने सामाजिक विधायन के बारे में व्याख्या दी है सामाजिक विधियों की प्रकृति देश-देश में बदली हुई रहती है । ऐतिहासिक पृष्ठभूमि तथा राष्ट्रीय उन्नति की स्थिति सामाजिक विधायन निर्माण करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है । कानून की सफलता व्यक्तियों की स्वैच्छिक सहमति के आधार पर आंकी जा सकती है । बदलते हुये समय और परिस्थितियों को बिना संघर्ष के आसानी से स्वीकार करने की लचीली परम्पराओं का कानूनों की सफलता के लिये आवश्यक होता है । परिवर्तन में विरोध तो होता है किन्तु कानून जनमत को सही दिशा भी देता है । प्रशासन की सफलता के लिये सक्रिय सहयोग अपेक्षित होता है । रूचि रखने वालों में तत्परता होना आवश्यक है, जिसकी भारतवर्ष में कमी है । कानूनी भाषा तकनीकी है और इसीलिये आम नागरिक मजबूरी में प्रवर्तन करने वाले अधिकारी की बात मानने को मजबूर है ।

वैरन ‡1967 ‡ ने कहा है कि विधि संहितायें समाज में समय-समय पर बदलती रहती है । जो कार्य एक समय मेंनिषिद्ध होता है वही कार्य दूसरी स्थिति में किया जा सकता है । जिसे नाजी सरकार अपराध मानती थी उसको आज की पश्चिम जर्मन की सरकार उसी तरह अपराधिक दृष्टि से

देखती हो यह आवश्यक नहीं है । मैक्स मूलर ‡ 1977 ‡ ने मनु, याज्ञवल्क, विष्णु एवं गौतम स्मृतियों के आधार पर प्राचीन भारतीय न्याय व्यवस्था की व्याख्या की है । कौन से साक्षी सक्षम होंगे तथा उनकी साक्ष्य का क्या मूल्य होगा ‡ व्यवसाय, जाति, तथा शारीरिक भेद भाव पर अनेकों निर्योग्यताओं का वर्णन है । जिस जाति का साक्षी होता था उसको उसी से संबंधित शपथ दिलाई जाती थी । असत्य साक्ष्य पर गम्भीर दंड थे जाति के आधार पर न्याय में पक्षपात था । शूद्रों पर अनेक निर्योग्यतायें लागू थीं तथा ब्राह्मणों को अनेक सुविधायें थीं।

डिस्ट्रिक्ट गजेटियर आफ यूनाइटेड प्रविन्सेज आफ आगरा एण्ड अवध ‡ 1916 ‡ के अनुसार न्यायालयों की शरण लिये बिना पंचायतों से वादों के निपटारे की प्रथा प्रान्त के अन्य भागों की अपेक्षा झाँसी जनपद में अधिक पाई जाती है । इसका सम्भवतः कारण यह है कि झाँसी देरी से ब्रिटिश शासन के नियंत्रण में आया है और ब्रिटिश न्याय व्यवस्था से सम्पूर्ण गांव की व्यवस्था तथा पंचायत व्यवस्था पर विशिष्ठ विघटनकारी प्रभाव पड़ा है । सन् 1910, ।। में इस व्यवस्था की विस्तृत जांच कराने पर यह ज्ञात हुआ है कि गांव तथा पड़ौसी गांवों के प्रमुख व्यक्ति इसके सदस्य होते हैं । इनकी संख्या प्रत्येक जगह समान नहीं होती ह । विशेष ज्ञान के कारण भी पंच नियुक्त किये जाते हैं । यदि पक्षकारों की जाति का कोई पंच नहीं होता था तो पक्षकारों की जाति के प्रमुख व्यक्ति को पंचों में शामिल कर लिया जाता था । "गार वारो" अपीली पंचायत है जिसमें गांव स्तर का पंचायत में न सुलझे वाद निपटाये जाते हैं या असंतुष्ट पक्षकार इस पंचायत में न्याय की याचना कर सकते हैं । सम्भवतः ब्रिटिश शासन के पूर्व इन पंचायतों को तत्कालीन शासकों की स्वीकृति प्राप्त थी।

एडमिनिस्ट्रेशन रिपोर्ट उत्तरी पश्चिमी प्रांत एवं अवध ‡ 1861-62 ‡ में आरथर हाविल ने लिखा है कि बुन्देलखण्ड तथा मिर्जापुर में घाटियों को जोड़-कर बनाये गये कृत्रिम जलाशय पाये जाते हैं इनका श्रेय देश के प्राचीन शासकों को

जाता है । अब बुन्देलखण्ड की झीलों, तालाबों को पब्लिक वर्क्स डिपार्टमेन्ट के अधीन कर दिया है और यह किसी हद तक सिंचाई कार्य में उपयोगी है । पुलिस की नई व्यवस्था मजिस्ट्रेट तथा परम्परागत संस्थाओं को रुचिकर नहीं लगी है । तथा इसी कारण विमुक्ति का प्रतिशत अधिक रहा है । इन लोगों को भी गिरफ्तार किया गया जिनके विरुद्ध सजा लायक पर्याप्त साक्ष नहीं था ।

घोष (1980) के अनुसार कानून प्रत्येक समाज की नींव है । कानून समाज को संगठित करने के लिये सीमेन्ट है, इसके बिना समाज टुकड़ों में बँट जायेगा और व्यक्ति एक दूसरे को नष्ट कर देंगे । कानून कुछ मौलिक मान्यताओं के अतिरिक्त बदलती हुई प्रक्रिया है । न्यायपालिका देरी से न्याय, मंहगा न्याय तथा समय नष्ट करने के लिये उत्तरदायी है । कमजोर वर्ग निर्धनता के कारण न्याय पाने में असमर्थ है । निःशुल्क कानूनी सहायता कार्यक्रमों की महती आवश्यकता है । मजिस्ट्रेसी तथा पुलिस का कानून एवं व्यवस्था में उत्तरदायित्व पूर्ण कार्य है । कानून की सफलता इस तथ्य पर निर्भर करती है कि समाज किस प्रकार अपने आप को बदली हुई परिस्थितियों तथा कानून के अनुसार मोड़ती है । व्यवहारिक क्षेत्र में मजिस्ट्रेसी तथा पुलिस में कोई संघर्ष नहीं होना चाहिये । अधिकारी तो देश की आवश्यकताओं के अनुरूप प्रशिक्षित किये जा सकते हैं किन्तु जनता तथा उसके प्रतिनिधियों को प्रशिक्षण देना बहुत कठिन कार्य है । कमजोर वर्ग की सबसे बड़ी समस्या रिश्वत की कम राशि का प्रबन्ध कर पाना है । हरिजनों को झूठे मुकदमों में फसाया जाता है । पुलिस के अमानुषिक पूछताछ की विधियों से कमजोर वर्ग पीड़ित है । अपराधों को रोकने के संबन्ध में ग्रुनहट (1948) ने लिखा है कि यदि अपराध रोकने में दंड का उचित प्रयोग करना है तो तीन तत्व आवश्यक है :-

1. त्वरित गिरफ्तारी एवं अभियोजन से अपराधी को इस बात का आभास होना चाहिये कि अपराध लाभ का काम नहीं है ।

2. दण्ड के बाद अपराधी को सामाजिक जीवन पुनः नये सिरे से आरम्भ करने के

लिये अवसर मिलना चाहिये ।

3. राज्य, जो दंड देने का अधिकार रखता है, को उच्च मूल्यों की स्थापना करना चाहिये जिन्हें कि अपराधी स्वीकार कर सके ।

कोहन आदि (1979) ने अपराध विधि की स्थापना केनिम्न औचित्य बताये है :-

1. व्यक्ति और सम्पत्ति की अनुचित जोखिम से सुरक्षा करना अर्थात मुहल्लों को सुरक्षित रखना । ;

2. अपराधी विभव को रोकना ;

3. दूसरों को रोकना, जो अपराधी हो सकते है, यदि यह देखें कि उन तत्वों को दण्डित नहीं किया गया है ;

4. जनता के कष्टों का उपचार प्रदान करना ;

5. अपराधियों को सुधार कर अच्छे नागरिक बनाना ; एवं

6. क्योंकि जनता की नैतिकता के लिये अपराधियों को दण्ड देना अच्छा है ।

यदि न्याय को अस्तित्व में रहना है तो पीड़ितों की भागीदारी आवश्यक है । आधे के करीब वादी या साक्षियों के रूप में, अपने वाद में रूचि लेने की इच्छा नहीं रखते हैं यदि वे अपराध की सूचना देते हैं और अपराधी गिरफ्तार होता है तो पीड़ित अभियोजन का सहयोग या सत्यता से पीछे हटते हैं । अभियोजन को पीड़ितों का सहयोग पाने के लिये, उन्हें उत्साहित करने के लिये, पीड़ितों को राज्य या अपराधी द्वारा क्षतिपूर्ति, अपराधियों से हुई क्षति के बराबर करना आवश्यक है ।

टेलर (1981) ने कहा है कि जब तक बेराजगारी तथा वर्ग असमानता समाप्त नहीं हो जाती है तब तक युवकों के व्यवहार तथा अपराधों पर नियंत्रण कर पाना कठिन है । जो समस्यायें वर्तमान दण्ड तथा कल्याण की व्यवस्थाओं से उत्पन्न होती है उनके संदर्भ में एक नये समाजवादी अपराध शास्त्र के निर्माण

की व्यवहारिक संदर्भ में आवश्यकता है । पुलिस के शिकायतों की जाँच के तरीके में परिवर्तन की आवश्यकता है । आधुनिक अपराधिक विचारण में दो मुख्य बातें है :- प्रथम पक्षकारों का प्रतिनिधित्व होता है, द्वितीय पीड़ित का राज्य द्वारा प्रतिनिधित्व किया जाता है और पीड़ित को दृश्य से बाहर कर दिया जाता है । उसका दोहरा नुकसान होता है । सबसे महत्वपूर्ण यह है कि पीड़ित को असहाय कर दिया जाता है । वह अभियोजन में कोई सक्रिय भाग नहीं ले पाता है, और इस तरह वह राज्य के लिये अपना वाद हार जाता है । पुलिस की दुर्भाग्य पूर्ण आकृति उसके एतिहासिक राजनैतिक, तथा मनोवैज्ञानिक कारकों से स्वाभाविक है । जब तक प्रेस राजनीतिक, एवं जनता अपना व्यवहार नहीं बदलते है, मात्र पुलिस की सफाई से कोई अन्तर आने वाला नहीं है । इस समय न्यायालयों, भारतीय समाज एवं अन्य औपचारिक संस्थाओं में परस्पर सहयोग के सबसे बड़ी कमी है । विभागीय क्षमता, विरोधी वातावरण में उत्पन्न नहीं हो सकती है। व्यक्ति पुलिस से शासन के प्रतिनिधि के रूप में अपने लिये भिन्न व्यवहार की अपेक्षा करती है । पुलिस पिछले दशक में आधिक बलशाली प्रतीत हुई है । यह युग पुलिस का युग है । जिसका क्षेत्र सैद्धांतिक की अपेक्षा व्यावहारिक अधिक है । सामुदायिक विकास तथा पंचायत राज जाति व्यवस्था की शक्ति को कम करने की अपेक्षा बढ़ाने वाले सिद्ध हुये हैं । हरिजनों में आई विकास की चेतना से संघर्ष तथा विचलन की नई धारणा उत्पन्न हुई है । कोई भी समाज अपराध मुक्त संभव नहीं है । यदि कानून उल्लंघन करने वाले, न उल्लघन करने वालों से, संख्या में अधिक हों तब कोई भी संस्था कानून का प्रवर्तन सुनिश्चित नहीं कर सकती है । कानून प्रवर्तन के क्षेत्र में शोध कार्य अपेक्षाकृत कम हुये हैं । इस दिशा में तीव्र गति से शोध कार्य की आवश्यकता है जिनके निष्कर्षों के आधार पर सुधार सम्भव है । (खान, 1983) ।

गॉनग्रेड (1966) के अनुसार भारतीय ग्रामीण समाज, परिधितीमन, जाति एवं नातेदारी आधारों पर अधिक स्तरित है । वास्तव में ग्रामीण समाजों

में अधिकांशतः छोटे समूह जाति या नातेदारी व्यवस्था के कारण होते हैं । इस समूहों के सदस्यों का निर्धारण जन्म से ही होता है । ग्रामीण समाजों में व्यक्ति आर्थिक विकास के प्रति जागरूक हुआ है । इसकी उत्तरोत्तर प्रगति के लिये बाहरी समितियों को उचित प्रयास करते हुये समय यह ध्यान में रखना चाहिये कि ग्रामीण आर्थिक व्यवस्था देश की आर्थिक स्थिति का मेरूदंड है । इसमें किसी भी प्रकार की अनियमितता सम्पूर्ण इकाई को नष्ट करने में सक्षम हो सकती है । इसी संदर्भ में चौधरी ॥ 1965 ॥ का उल्लेखनीय योगदान है । इनके अध्ययन में स्पष्ट किया गया है कि किशोरावस्था में व्यवहारों के ऊपर समाज-आर्थिक कारकों का महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है । भारत वर्ष में सामाजिक स्तरीकरणएवं परिवर्तन से संबंधित योगेन्द्र सिंह ॥1980 ॥ का उल्लेखनीय योगदान है ।

भारत वर्ष के राजस्थान प्रांत में अपराधों के वितरण के संबंध में मोहिउद्दीन ॥ 1980 ॥ का अध्ययन उपलब्ध है । इस अध्ययन में अपराध सामाजिक समस्या बताते हुये विभिन्न सामाजिक वैज्ञानिकों को आव्हान किया गया है कि इस समस्या पर उचित समाज वैज्ञानिक विधियों के माध्यम से शोध कार्य किया जाये । इस अध्ययन में हस्तक्षेपीय अपराधों से संबंधित जानकारी राजस्थान प्रांत के न्यायालयों एवं पुलिस स्टेशनों से उपलब्ध अभिलेखों से एकत्र की गई है । इस अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि समाज के सभी व्यक्ति अपराधियों के संबंध में पूर्ण जानकारी नहीं देते हैं । इसका कारण यह है कि आम व्यक्ति के मन में यह धारणा है कि अपराध एवं अपराधी पुलिस से संरक्षण प्राप्त करता है एवं इस दिशा में कोई भी सहयोग उनके प्रतिकूल हो सकता है । अभिवक्ताओं एवं उनके मुवक्किलों के आपसी संबंधों का शर्मा ॥ 1980 ॥ ने स्पष्ट शब्दों में वर्णन करते हुये

लिखा है कि अधिकांश मुवक्किल उच्च जाति एवं आर्थिक सम्पन्नता से संबंधित हैं ≀ भारत वर्ष में कानून की स्पष्टता ग्रामीण व्यक्तित्व की समझ से परे है । बक्सी ≀ 1982 ≀ ने भारतीय न्याय व्यवस्था की त्रुटियों के संदर्भ में महत्वपूर्ण जानकारियां दी हैं । उनके अनुसार भारतीय न्याय व्यवस्था अत्यंत गम्भीर रूप लिये हुये है । एवं इसकी जड़ें आज भी उपनिवेशीय व्यवस्था में जमी हुयी हैं । व्यक्तियों एवं न्याय व्यवस्था के आपसी संबंधों के बारे में भी जानकारियाँ इसी अध्ययन में उपलब्ध हैं ।

अपराधियों एवं पुलिस प्रशासनिक अधिकारों के संबंध में राष्ट्रीय एवं अन्तरराष्ट्रीयक्षेत्रों में प्रमुख व्याख्यायें विभिन्न अध्ययनों में कम मिलती हैं । उपलब्ध साहित्य के पुनरावलोकन की दृष्टि से जो शोध-कार्य प्रमुखता रखते हैं उनमें अहमद ≀ 1941 ≀, अलेक्जेन्डर ≀ 1973 ≀, एलान ≀ 1964 ≀, एण्ड्रयू ≀ 1873 ≀, बासु ≀ 1970 ≀, इलियट ≀ 1772 ≀, जायसवाल ≀ 1917 ≀, मजूमदार ≀ 1920 ≀, मेनहीन ≀ 1949 ≀, शर्मा ≀ 1972 ≀, मैनन ≀ 1867 ≀, सीरवाई ≀ 1975-76 ≀, सीतलवाड़ ≀ 1960 ≀, स्टील ≀ 1969 ≀, त्रिपाठी ≀ 1960-66 ≀ एवं राइट ≀ 1968 ≀ का तुलनात्मक विवरण उल्लेखनीय है । इन अध्ययनों से स्पष्ट संकेत मिलता है कि विधि का समाजशास्त्र समझने के लिये क्षेत्रीय अध्ययनों से प्रमुखता प्रदान करना चाहिये । इसी आशय से वर्तमान शोध प्रबन्ध का प्रयास सामयिक एवं उचित प्रतीत होता है ।

भारतवर्ष में औरंगजेब की मृत्यु के बाद धीरे-धीरे ब्रिटिश कानूनों का प्रभाव बढ़ता गया किन्तु भारतीय दण्ड विधान ≀ 1862 ≀ एवं साक्ष्य अधिनियम ≀ 1872 ≀ तथा परिवर्तित दण्ड प्रक्रिया संहिता ≀ 1861 ≀ 1872, 1875, 1877, 1882, 1898 के प्रभाव में आने के बाद सम्पूर्ण देश में एक रूपता से अंग्रेजी कानून प्रभावी हो गया । ब्रिटिश काल में देशी राज्यों के कानून अलग-अलग थे । इन देशी राज्यों में

राजा सर्वोच्च न्यायाधीश होता था । इनके विरुद्ध अपील प्रिवी कौंसिल में होती थी ।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद 26 जनवरी 1950 को भारत वर्ष में नया संविधान लागू किया गया । संविधान के अन्तर्गत एक स्वतंत्र न्यायपालिका का निर्माण किया गया । सर्वोच्च न्यायालय देश का अंतिम न्यायालय है । प्रत्येक प्रांत में एक उच्च न्यायालय तथा जिलों में जिला न्यायालयों की स्थापना की गयी है । वर्ष 1973 की दण्ड प्रक्रिया संहिता के अनुसार निम्न न्यायालय (मुन्सिफ) भी जिला जज के अधीनस्थ कर दिये गये हैं । इस तरह न्याय पालिका पूर्णतया कार्य-पालिका से स्वतंत्र होकर कार्यरत है । शताब्दियों से हरिजनों की दलित स्थिति को ध्यान में रखते हुये संविधान निर्माताओं ने अल्प-संख्यकों तथा कमजोर वर्गों के व्यक्तियों को संरक्षण देने के लिये विशेष प्राविधान किये हैं । छुआछूत अधिनियम 1955 द्वारा छुआछूत बरतना अपराध घोषित किया गया । सन् 1976 में इस अधिनियम को ही कुछ संशोधनों के साथ नागरिक अधिकार सुरक्षा अधिनियम में परिवर्तित कर दिया गया है । इसके अतिरिक्त निम्न वर्ग के सामाजिक तथा आर्थिक उत्थान हेतु अनेकों प्राविधान विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा तथा केन्द्र सरकार द्वारा दिये जा रहे हैं ।

संविधान निर्माताओं ने एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था बनाने, जिसमें सामाजिक आर्थिक एवं राजनैतिक न्याय सभी को धर्म जाति एवं विश्वास को ध्यान में दिये बिना प्रदान करने का संकल्प लिया है । भारत वर्ष कल्याणकारी राज्य है । और नागरिकों की सुरक्षा तथा उन्नति करना राज्य का कार्य है । वर्तमान समय में कानून सामाजिक

नियंत्रण की सबसे महत्वपूर्ण इकाई है । कानून समाज को संगठित करने का माध्यम है । इसके बिना समाज का विघटन हो सकता है । स्वतंत्रता से पूर्व दलित वर्ग को संरक्षण शोषण करने वालों के विरूद्ध प्राप्त नहीं था । इस स्थिति में परिवर्तन हुआ और विधायन की प्रवृत्ति गरीबों के संरक्षण तथा शोषण करने वालों के विरोध में हुई । किसी भी देश का संविधान देश के नागरिकों के अधिकारों को नियंत्रित करने वाला मौलिक कानून कहा जाता है । लोक सभा तथा विधान सभायें अनेकों विधायन पारित कर चुकी है । तथा अनेकों शासनादेश हरिजनों की भलाई के लिये समय-समय पर पारित किये जा रहे हैं ।

भारतीय दण्ड प्रक्रिया संहिता 1973 की धारा 2द के अनुसार अपराध से कोई ऐसा कार्य या लोप अभिप्रेत है जो किसी तत्समय प्रभावी विधि द्वारा दण्डनीय बना दिया गया है । भारत वर्ष की मुख्य अपराधिक विधि भारतीय दण्ड संहिता (1860) है । दण्ड संहितायें अपराधों के लक्षण एवं दण्ड निर्धारित है । दण्ड प्रक्रिया संहिता में विचारण की प्रक्रिया वर्णित है । भारतीय दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा प्रथम अनुसूची की तालिका संख्या एक में अपराधों का वर्गीकरण किया गया है । दण्ड प्रक्रिया संहिता 1973 मे

1. हस्तक्षेपीय,
2. अहस्तक्षेपीय

दण्ड प्रक्रिया संहिता 1973 की धारा 2(ग) के अनुसार हस्तक्षेपी अपराध ऐसे अपराध हैं जिनमें पुलिस अधिकारी प्रथम अनुसूची के या किसी अन्य तत्समय प्रभावी विधि के अनुसार वारंट के बिना अपराधी को गिरफ्तार कर सकता है । इसके विपरीत अहस्तक्षेपीय

अपराध वह अपराध हैं जिनमें पुलिस अधिकारी वारंट के बिना अपराधी को गिरफ्तार नहीं कर सक T है । इसी प्रक्रिया की धारा 155 में असंज्ञेय अपराधों की विवेचना का प्राविधान है । जिसके अनुसार कोई पुलिस अधिकारी असंज्ञेय मामलों में बिना सक्षम मैजिस्ट्रेट की अनुमति के विचना नहीं कर सकता है । यदि उसे सक्षम मैजिस्ट्रेट की अनुमति विवेचना करने के लिये प्राप्त हो जाये तब भी वह वारंट के बिना अपराधी को गिरफ्तार नहीं कर सकता है । असंज्ञेय अपराधों में सामान्यतया कम गंभीर अपराध आते हैं । विवेचना पर लगाया गया यह प्रतिबंध सम्भवतया इसलिये है ताकि वादकारी का बोझ न्यायालयों पर कम हो । इससे पुलिस पर भी विवेचना का कार्य अधिक न पड़ेगा । असंज्ञेय अपराधों की प्रकृति पर ध्यान देने से यह स्पष्ट होता है कि यह अपराध, अपराधी प्रकृति के नहीं हैं । भारतीय समुदायों में जो असंज्ञेय अपराध अधिकता में विद्यमान हैं उनमें साधारण मार-पीट, अशिष्ट भाषा का प्रयोग धमकी एवं साधारण हानि आदि प्रमुख हैं । वर्तमान स्वभाव वाले शोध अध्ययनों के आधार पर विधि की उपयोगिता समाजशास्त्रीय अर्थों में मूल्यांकित करना इसलिये भी उपयोगी होगा जिससे यह स्पष्ट हो सके कि भारतीय सामाज न्यायिक व्यवस्था का परिस्परिक संबन्ध किन स्तरों तक स्वच्छ सामाजिक व्यवस्था की स्थापना कर सकता है।

2. बुन्देलखण्ड क्षेत्र के संदर्भ में सामाजिक तथा न्यायिक व्यवस्था

भारत वर्ष में विभिन्न प्रान्तों में क्षेत्रीय संस्कृति विभिन्न कारकों के कारण विशिष्टता पूर्ण रही है । विभिन्न सांस्कृतिक मूल्यों तथा रूढ़ियों को अपने में समाहित करने की शक्ति ही भारत की सांस्कृतिक

महानता है । इसीलिये वैदिक कालीन यजुर्वेदीय कर्म-काण्डों का यहाँ सर्व प्रथम अभ्युदय होने के कारण यह प्रदेश यजुर्होति कहा गया है और फिर अपभ्रंश होकर जी-युक्ति कहलाया । बाद में इस क्षेत्र का नाम क्रमशः दशार्ण तथा चन्देली हुआ । सत्रहवीं शताब्दी में इस क्षेत्र का नाम बुन्देला राजाओं के शासन काल में बुन्देलखण्ड रहा । समय-समय पर इस क्षेत्र की राजनीतिक सीमाएंबदलती रहीं हैं (मिश्र, 1969; निगम, 1983)।

बुन्देलखण्ड आर्थिक विकास की दृष्टि से ही उपेक्षित नहीं रहा अपितु इसके सांस्कृतिक इतिहास तथा एकता की भी उपेक्षा होती रही है । बुन्देलखण्ड के इतिहास और संस्कृति के मूल स्वर में व्यक्त यहाँ की जनता की शौर्य, स्वतंत्र तथा सतीत्व की भावना ने साम्राज्यवादियों को सदा ही आंतकित किया है । प्रारम्भिक समय में मुगल और फिर विदेशी साम्राज्यवादी अंग्रेज प्रभावित हुये बिना नहीं रह सके । इतना ही नहीं, पौराणिक एवं प्रागैतिहासिक काल में भी सम्राटों का यहाँ की जनता के उदण्ड स्वातंत्र प्रेम से आंतंकित रहने का उल्लेख साहित्य और इतिहास में मिलता है । चाणक्य ने तो सम्राट चन्द्र गुप्त को "दशार्ण" (बुन्देलखण्ड और बुन्देलखण्डियों के प्राचीन नाम) व्यक्तियों को न छेड़ने में ही राजनैतिक बुद्धिमानी बताते हुये यहाँ के व्यक्तियों को "दुष्टाच-पुष्टाच" कहा है । एवं स्वातंत्र्यापहारी साम्राज्यवादियों की दृष्टि से"दुष्ट" कहा गया है । इसीलिये किसी आक्रमणकारी के संख्या बल, शस्त्रबल और धनबल से पराजित होकर यदि यहाँ के व्यक्ति अधीनता स्वीकार करने को विवश हो जाते थे तो भी शनैः शनैः बल संग्रह करके वह पुनः विद्रोह कर देते थे । अपनी स्वातंत्र्य का अपहरण करने वाले आततायियों से विवशता में किये गये वायदों के प्रति वफादार रहने में उन्होंने कभी नीतिज्ञता नहीं मानी । "शठे शाठ्यं समाचरेत" और शत्रु से छल करने की नीति को अपनाने

में उन्होने कभी आगा-पीछा नहीं किया, इसलिये स्वातंत्र्यापहारी आततायियों की दृष्टि में वे सदैव दुष्ट और पुष्ट ही रहे ।वर्मा, 1969।

बुन्देलखण्ड क्षेत्र को अंग्रेजों ने अपनी नीति के कारण विकास कार्यों से उपेक्षित ही रखा । अपने अनुगत छोटे-छोटे राजाओं के अधीन छोटी-छोटी रियासतों में विभक्त रखना ही उन्हें राजनीतिक दृष्टि से उचित प्रतीत हुआ । ब्रिटिश शासन में अंग्रेजों ने बुन्देलखण्ड को संयुक्त प्रांत और मध्य प्रांत में बांटकर रखा । शिक्षा के क्षेत्र में अंग्रेजों ने इस प्रदेश को इतना उपेक्षित रखा ताकि बुन्देलखण्ड की जनता को अपनी ऐतिहासिक गरिमा का अभिमान तथा संस्कृति की एकता का ज्ञान न हो ।

प्राचीन समय से यह क्षेत्र ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र चार वर्गों में विभाजित था । सम्पूर्ण भारत की तरह ब्राह्मण सर्वोच्च सामाजिक स्थिति में थे एवं यह राज्य के कानून, संविधान तथा सामजिक कानूनों का निर्माण करते थे । सामाजिक एवं धार्मिक कार्यों का सम्पादन करते थे । इस क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति आर्थिक असमानता के लिये उत्तरदायी रही है । बुन्देलखण्ड के निवासियों की सामाजिक आदतें, रूढ़ियां, स्वभाव तथा परम्परायें तत्कालीन सामाजिक, क्षेत्रीय एवं क्षात्रिणीय कारकों के अनुसार नियंत्रित होती थी । प्राचीन समय के विभिन्न हिंसक संघर्षों के फलस्वरूप भारत वर्ष एवं विशेष रूप से बुन्देलखण्ड क्षेत्र में शहरीकरण, आधुनिकीकरण, बेरोजगारी, मुद्रास्फीति, अनैतिकता, श्रमिक समस्यायें, संसाधनों की सीमितता, श्वेत अपराध, यौनि विकृतियां एवं वर्ग भेद आदि बुराईयों से विभिन्न समस्यायें उत्पन्न हुई हैं । फलस्वरूप सामाजिक विघटन एवं आपराधिक प्रवृति में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है ।

भारतवर्ष में स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व जाति-व्यवस्था के आधार पर अनेक निर्योग्यतायें हरिजनों पर प्रभावी थी । इन हरिजनों के

सामाजिक तथा आर्थिक रूप से अविकसित नागरिक समझा जाता था जाति व्यवस्था के आधार पर व्यवसायों का वर्गीकरण होने के फलस्वरूप अलाभदायक व्यवसाय हरिजन किया करते थे। भारत वर्ष के नये संविधान में समस्त असमानतायें समाप्त कर दी गई और प्रत्येक नागरिक को अपनी क्षमता के आधार पर कोई भी व्यवसाय चुनने का अधिकार प्रदान किया गया है। संविधान निर्माताओं ने भारत वर्ष की ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि को ध्यान में रखते हुये भारतीय संविधान के अनुच्छेद 15 ।3।, 15।4।, 16।4।, 17, 29, 30, 46, 333, 334, 335, 336, 337, 340, 341 एवं 342 के द्वारा महिला, बच्चों, अछूत, आंग्ल,भारतीय, अल्पसंख्यक वर्ग तथा सामाजिक तथा शैक्षणिक रूप से अविकसित व्यक्तियों के अधिकारों को संरक्षण देने एवं आरक्षण देने की व्यवस्था की गई है।

शताब्दियों पुराने मूल्यों को समाज परित्याग करने में समर्थ नहीं है। कृषि कार्य एवं मजूदूरी करने वाले हरिजन आज वैधानिक रूप से कुछ भू-भाग का स्वामित्व प्राप्त कर चुके हैं। निश्चित रूप से यह भूमि उन्हें उच्च वर्ग के अधिकार से प्राप्त हुई है। इसके समकक्ष सामाजिक रूप से इन्हें समानता का अधिकार प्राप्त है। इन परिस्थितियों में विभिन्न वर्गों में द्वेष उत्पन्न होना स्वाभाविक है। परिणाम स्वरूप बुन्देलखण्ड के विभिन्न क्षेत्र यथा - सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं न्यायिक निर्बल वर्ग को विकास का उचित अवसर प्रदान करने में असक्षम है।

3. वर्तमान शोध-समस्या की विवेचना एवं उपयोगिता

कामबले (1982) के अनुसार प्राचीन भारत में अछूतों के साथ असमानता तथा भेद-भाव पूर्ण व्यवहार किया जाता था । एक ही अपराध के लिये अलग-अलग जातियों के लिये अपराधियों को भिन्न-भिन्न दंड दिये जाते थें । अछूतों को सम्पत्ति रखने का अधिकार नहीं था । ब्राहमणों को हरिजनों की प्रत्येक सम्पत्ति लेने का अधिकार था । भारत वर्ष में स्वतन्त्रता के बाद राजनैतिक अधिकार तो हरिजनों को मिले हैं किन्तु सामाजिक एवं आर्थिक असमानता विद्यमान है । छुआछूत अपराध अधिनियम का पालन राज्यों द्वारा ईमानदारी से नहीं किया गया है । ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी हरजनों के साथ विभिन्न तरह के अत्याचार हो रहे हैं जिनके सूत्र यहां की सदियों पुरानी सामाजिक सांस्कृतिक व्यवस्था में खोजे जा सकते हैं ।

वस्तुत: वर्तमान सामाजिक समस्याओं का मुख्य कारण प्राचीन एवं वर्तमान सामाजिक मूल्य व्यवस्था में उत्पन्न संघर्ष है । सामाजिक, समस्यायें, प्रतिपादित मूल्यों तथा वास्तविक व्यवहारों में मिलती हैं । यह उप समूहों के मूल्यों में संघर्ष से उत्पन्न होती है । धार्मिक मूल्यों का भी आर्थिक या राजनैतिक मूल्यों से संघर्ष हो सकता है । स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद, परम्परागत जाति व्यवस्था एवं उससे जुड़े आर्थिक मूल्यों पर करारी चोट पहुंची । फलत: अनेक सामाजिक समस्यायें उत्पन्न हुई । इसी प्रकार अनेकों समस्यायें बदली हुई राजनैतिक परिस्थिति में उत्पन्न हुई हैं । बिना सामाजिक मूल्यों के कोई समस्या नहीं होगी । प्राचीन भारत में जो जातिगत मान्यतायें एवं व्यवहार कोई समस्या नहीं थे, आज वहीं समस्या बन गये हैं ।

सामाजिक अर्न्तक्रियायें एवं व्यवहार कोई समस्या नहीं थे, आज वही समस्या बन गये हैं । सामाजिक अर्न्तक्रियायें, समाज की आधार भूत प्रक्रिया हैं । और जिस तरह की अर्न्तक्रियायें समाज में होती है समाज के लक्षणों पर उनका गहराई से प्रभाव रहता है । (सितम्बर, 1973)।

भारतीय समाज शास्त्रियों एवं मानव शास्त्रियों ने अपने लेखन में विधि के समाज शास्त्रिय महत्व की चर्चा अपने लेखों में की है । मजूमदार (1955) ने कानून को एक ऐसी व्यवस्था माना है । जो एक निश्चित सीमा में राजनैतिक व सामाजिक संगठनों को बनाये रखने में बल प्रयोग की स्वीकृति देता है । इसी तरह चौहान (1967) ने चोखला संस्था का अध्ययन सामाजिक संगठन व नियंत्रण की सहक्रिया का एक विशिष्ट उदाहरण प्रस्तुत करता है । इन्होंने स्पष्ट किया कि चोखला सामाजिक नियंत्रण में किस प्रकार से कार्य करता है । इसी सन्दर्भ में वे विधि की सीमा व परिभाषा पर काफी प्रकाश डालते हैं । इसी तरह वेरियर एलविन की "मुड़िया मरडर एण्ड सुइसाइड" नाम पुस्तक से उल्लेखनीय है ।

कानून के समाज-शास्त्र का अध्ययन लोकतान्त्रिक और विकासशील समाजों में विशेष महत्व रखता है । इसका उल्लेख करते हुये दारजा (1966) ने लिखा है कि स्वतन्त्र समाज में नियोजित विकास व कानूनी प्रक्रिया की आपसी अर्न्तक्रियाओं के क्षेत्र में ऐसे अनुसंधान की बहुत आवश्यकता है जो कि विकास के मामलों में प्रभावशाली रूप से काम करने वाली वैधानिक संस्थाओं के बारे में ज्ञान दे सकें । इनके विचार में कानून का कार्य सिर्फ नियमों का पालन कराना ही नहीं है, वरन् उसका कार्य ऐसी महत्वपूर्ण संस्थाओं को जन्म देना भी है जो व्यक्तियों को अपने उद्देश्यों की पूर्ति शान्तिपूर्ण एवं व्यवस्थित ढंग से करा सकें । इसमें संदेह नहीं है कि इस दृष्टि से भी भारत वर्ष में विधि के समाज-शास्त्र के विकास व

अध्ययन की काफी आवश्यकता है ।

भारतीय संविधान से लेकर ग्राम-पंचायतों के संगठन के विधि नियमों तक भारतीय समाज को विभिन्न विधिगत व्यवस्थाओं का समाजशास्त्रीय अध्ययन भी काफी महत्व रखता है । अभी हाल में राजस्थान में किये गये एक जिले की न्याय पंचायत का अध्ययन "दि लीडरशिप अपारचुनिटीज इन न्याय पंचायत इन ट्राइबल सेटिंग इन राजस्थान" इस बात को स्पष्ट करता है कि न्याय पंचायतों के गठन में किस प्रकार के पंच लोग न्याय पंचायतों के स्तर पर सामने आ रहे हैं ।

इसके साथ-साथ इस अध्ययन से पुरानी न्याय व सामाजिक व्यवस्था तथा नयी न्याय व राजनीतिक व्यवस्था के दो विभिन्न संगठन व नियंत्रण प्रणालियों के दो स्तरों की अन्तंक्रिया पर भी प्रकाश पड़ता है । इस दिशा में अभी अध्ययन जारी है । कानून मात्र के बन जाने से ही उसका पालन किया जायेगा यह तभी सम्भव हो सकता है जब कि उसका पालन करने के लिए अनुकूल सामाजिक व्यवस्था बने । भारत में बाल-विवाह, हिन्दू-विवाह, अस्पृश्यता-निवारण व बेगार-प्रथा के कानून अभी तक अनुकूल सामाजिक व्यवस्था के अभाव में निर्जीव पड़े हैं । इस प्रकार सामाजिक संगठन व उसके स्वरूप के बारे में जानकारी समाजशास्त्री तथा विधि शास्त्री दोनों के लिए विशेष महत्व रखती है ।

इन सब बातों से सामाजिक संगठन के संदर्भ में विधि के निम्नांकित विभिन्न स्वरूप महत्वपूर्ण दृष्टिगोचर होते हैं । एक वह कानून जो सामाजिक व्यवस्था में उत्पन्न कुरीतियों को दूर करने के लिए बनाये गये हैं । दूसरे तीसरे वे कानून है जो सामाजिक व्यवस्था को बनाये रखते हैं । इस प्रकार

विधि का समाजशास्त्रीय ढंग से अध्ययन यह स्पष्ट कर सकता है कि सामाजिक सम्बन्धों, सामाजिक क्रियाओं, सामाजिक व्यक्तियों, सामाजिक समूहों तथा सामाजिक व्यवस्थाओं का विभिन्न स्तरों पर परस्पर क्या सम्बन्ध व स्थान है ? विधि के समाजशास्त्र के स्वरूप को सामाजिक नियंत्रण सामाजिक परिवर्तन तथा सामाजिक व्यवस्था के संदर्भ में समझा और विकसित किया जा सकता है । इन प्रश्नों के विशिष्ट अध्ययन की ओर समाजशास्त्रीयों का ध्यान अक्टूबर 1966 में बम्बई में हुए अखिल भारतीय समाजशास्त्रीय सम्मेलन में भारत के भूतपूर्व न्यायाधीश गजेन्द्रगडकर ने आकर्षित किया था । वे स्वयं विधि को समाज सुधार का एक तरीका मानते हैं और उसे वह अब तक के प्रचलित नियमों को सुगठित करने का तरीका नहीं मानते है । जिन देशों में सामाजिक न्याय को संविधान का आधार मान लिया गया है वहां सामाजिक परिवर्तन के लिये नये कानून बनाना स्वाभाविक है । नये कानून किस सीमा तक पुरानी परिपाटीं को बदलने की क्षमता रखते हैं और सफल होते है । यह बात बहुत बड़ी सीमा तक इस पर भी निर्भर करती है कि कानूनी परिवर्तन अन्य सामाजिक परिवर्तनों के साथ कितनी दूरी तक कदम से कदम मिलाकर चल सकते हैं । भारतीय पृष्ठभूमि में इन गहन प्रश्नों का उत्तर समाजशास्त्रियों द्वारा विधि के ठोस अध्ययन के द्वारा ही दिया जा सकता है ।

उपर्युक्त वर्णित आधारों के माध्यम से स्पष्ट रूप से दिशा निर्मित होती है कि विधि के समाजशास्त्र की दिशा में शोध कार्यों की आवश्यकता है । इस दिशा के प्राप्त अनुभवों के आधार पर यह निर्णय लिया गया कि ग्रामीण बाहुल्यता के जनपद झांसी, उत्तर प्रदेश में अहस्तक्षेपीय वादों के सन्दर्भ में शोध कार्य प्रारम्भ किया जाये । वर्तमान शोध विषय "सामाजिक व्यवस्था का न्यायिक प्रक्रिया पर प्रभाव" । अहस्तक्षेपीय अपराधों के सन्दर्भ में तुलनात्मक अध्ययन,

का चयन समाजशास्त्रीय दृष्टि से तर्क संगत एवं सामाजिक प्रतीत होता है। प्रस्तुत अध्ययन के माध्यम से यह मूल्यांकित किया जा सकेगा कि जनपद झाँसी की पिछड़ी जातियों को राज्य द्वारा प्रदत्त कानूनी सुविधाओं के बारे में किस सीमा तक जानकारी प्राप्त है। इसके साथ-साथ यह भी निर्धारित किया जा सकेगा कि पिछड़ी जातियों को प्राप्त संवैधानिक सुविधाओं के फलस्वरूप अन्य वर्गों पर क्या प्रतिक्रिया हुई है ? वर्तमान शोध-प्रबन्ध से उन सामाजिक कारकों पर प्रकाश पड़ेगा जो न्यायिक व्यवस्था को प्रभावित करते हैं। कानूनों के उचित प्रवर्तन को सुनिश्चित करने में क्या बाधायें हैं और उनका निराकरण किस प्रकार किया जाता है। कानूनों के प्रवर्तन से सम्बन्धित संस्थाओं की भूमिका की समीक्षा करने से यह ज्ञात हो सकेगा कि इनमें क्या सुधार की आवश्यकता है ?

4. वर्तमान शोध अध्ययन के उद्देश्य

सामाजिक नियंत्रण एवं परिवर्तन की व्यवस्था पर राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रों में विभिन्न कारकों का समुचित प्रभाव पड़ा है। इन कारकों में औद्योगीकरण, संस्कृतिकरण एवं पर्यावरण को प्रमुख माना जा सकता है। सामाजिक क्षेत्रों के सन्दर्भ में व्यक्तिगत जागरूकता का विकास स्पष्ट रूप से अनुभव किया जा सकता है।

भारतीय संविधान द्वारा वर्णित पिछड़ी जातियों में जागरूकता का प्रश्न अब भी एक अत्यधिक उपयोगी शोध का विषय समाजशास्त्र की सीमा के अन्तर्गत बना हुआ है। यह कहना अधिक उचित होगा कि राज्य सरकारों द्वारा प्रतिस्थापित व्यवस्थाओं का उचित अनुपालन जनपदों के स्थानीय कर्मचारियों द्वारा नहीं होता है। इसका सीधा प्रभाव समाज के निर्बल वर्ग पर पड़ता है।

वर्तमान शोध-कार्य में यह देखने का प्रयास किया गया है कि झांसी जनपद की पिछड़ी जातियों के संदर्भ में विभिन्न सामाजिक एवं न्यायिक व्यवस्थाओं में क्या सम्बन्ध है ? वर्तमान शोध अध्ययन पूर्ण रूप से भारतीय दण्ड संहिता में वर्णित अहस्तक्षेपीय अपराधों तक सीमित रहा है । विषय वस्तु समाजीकरण की प्रक्रिया, जाति, शिक्षा, धर्म, एवं राजनैतिक आधारों पर निर्धारित की गयी है । वर्तमान शोध प्रबन्ध के मुख्य उद्देश्य निम्न प्रकार हैं :-

1. सामाजिक व्यवस्थाओं का न्यायिक प्रक्रिया से सम्बन्ध ;
2. आर्थिक व्यवस्था का न्यायिक प्रक्रिया से सम्बन्ध ;
3. राजनैतिक व्यवस्था का न्यायिक प्रक्रिया से सम्बन्ध ;
4. व्यक्तिगत अध्ययनों पर आधारित विशेष घटनाक्रम ; एवं
5. निष्कर्ष एवं संस्तुति ।

=:=:=:=:=:=:=:=:=:=:=:=:=:=:

अध्याय -२

अध्ययन पद्धति

१. अध्ययन क्षेत्र
२. संग्रहित तथ्यों की व्याख्या
३. आदर्श आकार
४. तथ्यों को एकत्र करने की विधियाँ
५. सामग्री श्रोत
६. सामाजिक यान्त्रिकी
७. तथ्यों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण
८. वर्तमान शोध कार्य का पूर्वानुमानित उपयोग
९. वर्तमान शोध अध्ययन की सीमायें

1.1 अध्ययन क्षेत्र
=========

वर्तमान शोध-कार्य सबसे वृहद प्रांत उत्तर प्रदेश के झांसी जनपद में किया गया है । चित्र संख्या 1। भौगोलिक दृष्टि से जनपद झांसी 25 एवं 26 अक्षांश एवं 87-79 देशांतर के मध्य स्थित है । पर्यावरण की दृष्टि से यह जनपद उष्ण-कटिबन्धीय स्थानों की तरह दृष्टिगोचर होता है । वर्ष में निरंतर मौसम परिवर्तन की प्रक्रिया होती रहती है । इसका स्पष्ट प्रभाव यहाँ के जन-जीवन पर पड़ता है । कृषि, व्यापार, उद्योग एवं अन्य व्यवसाय भी इससे प्रभावित होते हैं । उपलब्ध तापमान तथ्यों से जनपद का पिछले 15 वर्षों से औसत तापमान 44 डिग्री से०ग्रे० रहा है । शीत ऋतु में न्यूनतम तापमान का औसत 3 डिग्री से०ग्रे० रहा है । इसके सापेक्ष वर्षाकाल में औसत वर्षा 1138 मिमी. रही है । जनपद झांसी की जनसंख्या 1971 की जनगणना के अनुसार 8,70,138 एवं 1981 के जनसंख्या सर्वेक्षण के अनुसार 11,33,002 रही है 1971 से वर्ष 1981 तक की अवधि में कुल 30.21 प्रतिशत की वृद्धि जनसंख्या में हुई है । झांसी जनपद का कुल क्षेत्र विभिन्न भौगोलिक सीमाओं के द्वारा घिरा होते हुए 5,024 वर्ग किलोमीटर है । वर्ष 1981 के सर्वेक्षण के अनुसार जनपद में जनसंख्या घनत्व 226 है । इस जनपद में वर्तमान में 4 तहसील कार्यालय हैं :- झांसी, मौंठ, गरौठा, एवं मऊरानीपुर है । इसके पूर्व वर्ष 1973 तक ललितपुर जनपद भी झांसी जनपद में मिला हुआ था। राजनैतिक प्रयासों के फलस्वरूप ललितपुर जनपद को अलग जनपद घोषित कर दिया गया है । इसके कारण झांसी जनपद पर औद्योगिक, सामाजिक एवं न्यायिक दृष्टि से सीधा प्रभाव पड़ा है एवं इस परिवर्तन से विभिन्न सरकारी कार्यालयों का स्थानान्तरण झांसी जनपद से ललितपुर जनपद में कर दिया गया है । वर्तमान में झांसी जनपद में 5 जनपदों झांसी, ललितपुर, बांदा,

भारत
का
राजनैतिक मानचित्र

इण्डियन बुक डिपो (मैप हाऊस)
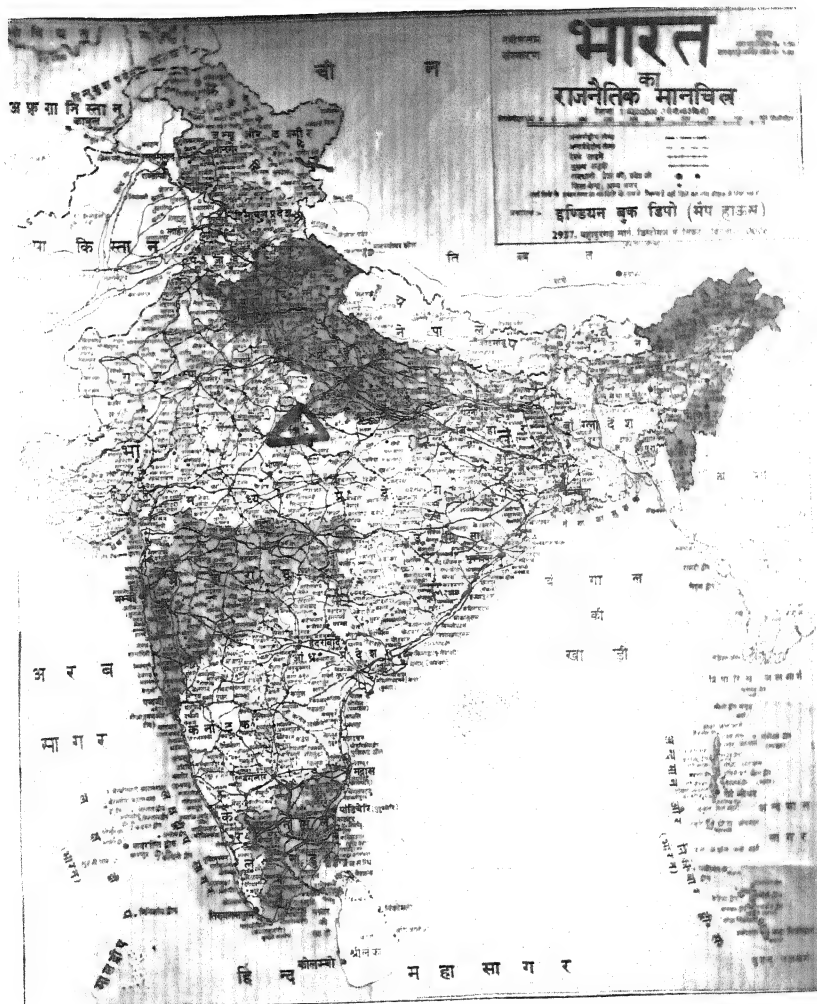
चित्र 1. अध्ययन क्षेत्र △

हमीरपुर, तथा जालौन का आयुक्त कार्यालय स्थित है । इस कार्यालय के माध्यम से उपर्युक्त जनपदों के व्यक्तियों का झाँसी में केन्द्रित होना एक स्वाभाविक प्रक्रिया है । झाँसी जनपद में न्यायिक व्यवस्था की दृष्टि से जो मुख्यालय एवं अधिकारी कार्यरत हैं,उनका विवरण निम्न-प्रकार है :-

1. <u>पुलिस उपमहानिरीक्षक का कार्यालय :-</u>

इस कार्यालय में पुलिस उप-महानिरीक्षक कार्यरत हैं । जिनका क्षेत्राधिकार पुलिस प्रशासन से संबंधित संपूर्ण झाँसी मण्डल (झाँसी, ललितपुर, बाँदा, हमीरपुर एवं जालौन) है । इनके अधीनस्थ सम्पूर्ण मण्डल के समस्त पुलिस अधिकारी एवं कर्मचारी होते हैं ।

2. <u>आयुक्त कार्यालय :-</u>

झाँसी मण्डल में एक आयुक्त सेवारत है एवं इनका कार्य क्षेत्र मण्डल के सभी जनपदों तक है । इस कार्यालय में राजस्व एवं शस्त्र सम्बन्धी विवादों का निस्तारण होता है । इनका कार्य मण्डल के सभी जनपदों के राजस्व कार्यालयों का पर्यवेक्षण भी होता है । सामान्य प्रशासन के अतिरिक्त कृषि, सिंचाई, अन्न-वितरण एवं वसूली आदि कार्य भी होते हैं ।

3. <u>जिला एवं सत्र न्यायाधीश का न्यायालय:-</u>

झाँसी जनपद में एक जिला एवं सत्र न्यायाधीश का न्यायालय स्थित है । इनके अधीनस्थ कुल 18 न्यायाधीश कार्यरत हैं । इन न्यायालयों में सम्पूर्ण वादों का विचारण अधिकार क्षेत्र के अनुसार किया जाता है । हस्तक्षेपीय एवं

अहस्तक्षेपीय वादों का विचारण इन्हीं न्यायालयों में होता है ।

4. **जिलाधिकारी का कार्यालय :-**

इस जनपद में एक जिलाधिकारी, एक अपर-जिलाधिकार, 4 उपखण्ड अधिकारी, 2 कार्यपालक मजिस्ट्रेट, 4 तहसीलदार, 1 विशेष भूमि आज्ञप्ति अधिकारी, 1 उप-नियंत्रक नागरिक स्वरक्षा अधिकारी, 17 नायब तहसीलदार, 20 कानूनगो एवं 377 लेखपाल नियुक्त हैं । इसके अतिरिक्त रजिस्ट्रार कानूनगो, सहायक रजिस्ट्रार कानूनगो, आदि अधिकारी भी कार्यरत हैं । इनका मुख्य कार्य न्यायिक प्रशासनिक तथा सामान्यतः जनपद की सभी गतिविधियों पर नियंत्रण करना है ।

उपर्युक्त मुख्य कार्यालयों जो कि प्रशासन एवं न्यायिक व्यवस्था की दृष्टि से पूर्ण रूप से सम्बन्धित है, के अतिरिक्त झाँसी जनपद में राष्ट्रीयकृत, अराष्ट्रीयकृत बैंक, सहकारी समितियां, स्वास्थ्य, मनोरंजन, शिक्षा, बिक्री कर, आयकर, सिंचाई, निर्माण, वित्त, योजना, आदि अनेक जिला तथा कमिश्नरी के स्तर के कार्यालय कार्यरत हैं ।

ऐतिहासिक दृष्टि से विशेष महत्वपूर्ण झाँसी जनपद में औद्योगिक विकास की प्रक्रिया स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात ही प्रारम्भ हो सकी है । विन्ध्याचल पर्वत की श्रृंखलाओं से घिरे हुए झाँसी जनपद में भारत सरकार द्वारा भारत हैवी इलैक्ट्रिकल लिमिटेड, सूती मिल, परीछा थर्मल पावर योजना, मेडीकल कालेज एवं अन्य आवासीय योजनाएं सुचारू रूप से कार्यरत हैं । जनसंख्या सर्वेक्षण 1981 के अनुसार इस जनपद में 7,05,983 ग्रामीण तथा 4,27,019 शहरी निवासी हैं । सामान्य रूप से ग्रामीण अंचलों में रहने वाले व्यक्तियों का मुख्य व्यवसाय कृषि एवं इससे सम्बन्धित कार्य हैं।

शहरी परिवेश में रहने वाले निवासियों का जीवकोपार्जन का साधन नौकरी, व्यापार तथा उद्योग धन्धे हैं । उत्तर प्रदेश प्रांत की राजधानी लखनऊ से 290 कि0मी0 दूर स्थित जनपद झांसी यातायात की दृष्टि से केन्द्रीय रेलवे का महत्वपूर्ण जंक्शन है । इससे क्षेत्र के निवासियों का सम्पर्क भारतवर्ष के अन्य प्रान्तों से सुगमता से है । झांसी जनपद में एक अन्तर्राज्यीय बस अड्डा भी है जिससे इस जनपद का सम्पर्क प्रमुख रूप से उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश एवं राजस्थान प्रांतों से है । झांसी जनपद के ग्रामों की मुख्यालय से परिधि की ओर अधिकतम दूरी 122 कि0मी0 है । ग्रामीण व्यक्तियों का जिला मुख्यालय से सम्पर्क, पैदल, बैल-गाड़ियों, साईकिल, निजी स्वचालित वाहन बस, ट्रक, तथा रेल गाड़ियों से है । देश की सुरक्षा का झांसी जनपद से सीधा सम्बन्ध है , क्योंकि थल सेना का बहुत बड़ा कार्यालय एवं सैनिक अड्डा इस जनपद में स्थित है । सेना की सुविधा के लिए जनपद में एक हवाई अड्डा स्थापित है । जिससे देश के अन्य भागों से जनपद का सम्पर्क आसानी से हो जाता है ।

झांसी जनपद में रबि, खरीफ, एवं जायद फसलों का उत्पादन होता है । इन फसलों में मुख्यता जो अनाज पैदा किया जाता है उसका विवरण तालिका संख्या । में प्रदर्शित है ।

कृषि कार्य हेतु परम्परागत सिंचाई के साधनों के अतिरिक्त आधुनिक सिंचाई के साधन उपयोग होने लगे हैं ।

झांसी जनपद के सम्पूर्ण क्षेत्रफल को विभिन्न कार्यों हेतु उपयोग में लाने का विवरण तालिका संख्या - 2 में प्रदर्शित है :-

स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व तक बुन्देलखण्ड के जनपद झांसी में परम्परागत व्यवसाय कृषि नागरिकों का आर्थिक आधार रहा है ।

तालिका संख्या ।।। जनपद झाँसी में उत्पादित होने वाली फसलों की औसत उपज ।

क्रमसंख्या	फसल	1978-79	1979-80	1980-81
				प्रति कु0 प्रति हे0।
1	चावल	5-89	0-26	4-20
2	मक्का	10-62	6-43	4-31
3	ज्वार	5-70	0-48	6-80
4	बाजरा	5-29	0-83	4-36
5	महुआ	6-71	-	-
6	सांवा	4-45	2-17	4-03
7	कोदों	3-76	0-09	2-81
8	काकुन	2-83	1-26	2-30
9	कुटकी	1-17	0-03	0-28
10	गेंहू	10-83	7-83	9-89
11	जौ	7-73	2-89	8-47
12	उर्द	1-18	0-61	2-37
13	मूंग	1-11	0-53	2-33
14	मसूर	1-40	2-11	7-65
15	मोठ	-	-	2-06
16	चना	4-60	2-97	8-55
17	मटर	4-95	3-98	9-74
18	अरहर	4-17	2-65	7-23
19	लाही, सरसों	2-99	2-79	3-48
20	तिल	0-83	0-52	0-54
21	अलसी	3-23	0-49	3-23
22	गन्ना	373-67	238-67	359-78
23र	रैंडी	-	1-86	4-93
24	मूंगफली	5-57	3-90	7-01
25	तम्बाकू	0-50	11-67	6-67
26	कपास	-	-	-
27	जूट	-	-	-
28	सनई	4-37	3-42	4-53
29	हल्दी	-	-	12-50
30	आलू	157-52	115-26	190-77

स्रोत सांख्यिकीय पत्रिका 1982 जनपद झाँसी ।

तालिका संख्या 12। जनपद झाँसी के सम्पूर्ण क्षेत्रफल का विभिन्न कार्यों हेतु वर्गीकरण

क्रम सं0	भूमि उपयोग का विवरण	कुल क्षेत्र हेक्टेयर में
1.	वन	32,544
2.	कृषि योग्य बंजर भूमि	64,572
3.	परती	38,332
4.	ऊसर और कृषि के अयोग्य भूमि	25,068
5.	कृषि के अतिरिक्त अन्य उपयोग में लाई गई भूमि	31,605
6.	चरागाह	1,002
7.	उद्यान एवं वृक्ष	2,058
8.	शुद्ध बोया गया क्षेत्र फल	2,99,054
9.	कुल प्रतिवेदित क्षेत्रफल	4,94,235

स्रोत सांख्यिकीय पत्रिका 1981 जनपद झाँसी ।

सिंचाई के समुचित सुविधाओं के न होने के कारण उत्पादन संतोषजनक नहीं रहा है। वर्ष 1903 में तत्कालीन बन्दोबस्त अधिकारी पिम के अनुसार मुख्य कस्बा झांसी, मऊ, गुरसराय, एवं कटेरा में कठिनाई से ही उत्पादन हुआ है। ब्रिटिश राज्य में वास्तविक रूप से जनपद झांसी की स्थिति बहुत दयनीय रही है। राज्य की ओर से कोई उल्लेखनीय सुविधाऐं कृषकों को नहीं मिली थीं। अंग्रेजों के मस्तिष्क में बहुत समय तक 1857 की क्रांति के बहादुरों का प्रतिनिधित्व करने वाले जनपद झांसी को दण्डित करने की प्रबल इच्छा रही है और उन्होंने इस क्षेत्र की औद्योगिक प्रगति की उपेक्षा की है। झांसी जनपद की कृषि व्यवस्था का उल्लेख करते हुये तत्कालीन उप आयुक्त एवं बन्दोबस्त अधिकारी जैनकिन्सन ने लिखा है कि 1865 की जनसंख्या के लिये एक पौण्ड अनाज प्रति व्यक्ति के अनुसार कुल 16,30,829 मन अनाज की आवश्यकता थी, जो कुल उत्पादन से 3,39,582 मन कम था। अर्थात् कुल आवश्यकता का 1/5 वां भाग अनाज जैसे गेहूं की पूर्ति अन्य जनपदों से आयात करके की जाती थी। यह व्यवस्था सन् 1900 तक जारी रही। वर्ष 1888 में व्यक्तियों की आर्थिक दशा के अध्ययन के लिए की गई जांच से भी खाद्यान की कमी के तथ्य की पुष्टि की गई।

अंग्रेजी राज्य से पूर्व जनपद झांसी के मऊरानीपुर में कपड़े का व्यापार होता था। इस तथ्य की पुष्टि एटकिन्सन (1874) ने की है। ब्रोकमैन (1909-29) के मतानुसार मऊरानीपुर से निर्यात होने वाले कपड़े की कीमत 6,80,000 रू0 प्रतिवर्ष थी। इस कस्बे के व्यापारी अमरावती, बम्बई, मिरजापुर, नागपुर, इन्दौर, फरूखाबाद, हाथरस, कालपी, कानपुर, एवं दिल्ली में व्यापार किया करते थे। बुन्देलखण्ड

की प्राचीन आर्थिक स्थिति का चित्रण करते हुये कृषि अर्थ व्यवस्था इस क्षेत्र की विशेषता थी, अधिकांश व्यक्ति गांव में रहते थे तथा कृषि एवं पशुपालन करते थे । राज्य द्वारा सिंचाई के लिये कोई व्यवस्था नहीं थी, यद्यपि तालाब और कुएं से आसपास के क्षेत्र में ही सिंचाई होती थी । जमीन का स्वामित्व व्यक्तिगत था तथा नौकरों द्वारा भी कृषि कार्य कराये जाते थे । किसान अपने नित्य उपयोग का सामान अधिक उत्पादन के माध्यम से खरीदते थे । बुनकर, बढ़ई, लुहार, कुम्हार, नित्य प्रति की आवश्यकताओं की पूर्ति करते थे । पशुशाला, बाग-बगीचा, महुए के पेड़, झोपड़ियां एवं सड़कें गांव की सम्पत्ति थी । कृषि भूमिधर उदरंगा । जमीनकर । एवं उपरीकर लगते थे । भीता की खुदाई से स्पष्ट है कि अनेकों वास्तुकलाऐं इस क्षेत्र में प्रचलित थीं । धातु कला बहुत उन्नत थीं अनेकों स्थानों की खुदाई से प्राप्त तत्कालीन धातु मूर्तियां इसका प्रमाण हैं । पुरुष तथा महिलायें विभिन्न मंहगी धातुओं के जेवर पहिनते थे एवं गुप्त काल में जेवरातों की कला अपने चरम उत्कर्ष पर थी । गुप्तकाल में सूती एवं सिल्क कपड़ों की महत्वपूर्ण जगह बुन्देलखण्ड थी । मिट्टी के बर्तन निर्माण की कला पूर्ण विकसित थी तथा इनमें खाद्यान संग्रह एवं भोजन पकाया जाता था । बुन्देलखण्ड कृषि एवं व्यापार के लिये छटवीं शताब्दी से जाना जाता है । घोसिता, ककोड़ा एवं पवरिया अपनी धनाढ्यता के लिए जाने जाते थे । क्षेत्रीय स्थानीय व्यापारी संगठन, मजदूर, एवं धनी भूमि-पति निश्चित रूप से अर्थ-व्यवस्था का नियंत्रण करते थे । साधारण किसान, मजदूर और छोटे कर्मचारी निश्चित रूप से गरीबी का जीवन यापन करते थे तथा अल्प संख्यक धनी एवं सुविधा सम्पन्न व्यक्तियों पर निर्भर रहते थे । शहर एवं कस्बे व्यापार में उत्तरोत्तर प्रगति के कारण अच्छी आर्थिक स्थिति में थे ।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद ही जनपद झाँसी का सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक विकास शुरू हो सका है । मानसून का सर्वाधिक प्रभाव कृषि एवं व्यापार पर पड़ता है । राज्य सरकार की ओर से खाद, बीज, कर्ज, तकनीकी सुविधाओं का प्राविधान निर्मित किया गया है । सम्पूर्ण जनपद को 8 विकास खण्डों में बाँटा गया है । यह विकास खण्ड :- ‡ 1 ‡ चिरगाँव, ‡ 2 ‡ मोठ, ‡ 3 ‡ गुरसराँय, ‡ 4 ‡ बामौर, ‡ 5 ‡ मऊरानीपुर, ‡ 6 ‡ बंगरा, ‡ 7 ‡ बबीना, एवं ‡ 8 ‡ बड़ागाँव हैं । प्रत्येक विकास खण्ड में खण्ड विकास अधिकारी, सहायक विकास अधिकारी, कृषि एवं पशुपालन अधिकारी नियुक्त हैं । सभी विकास खण्डों पर आवश्यक सुविधायें जैसे-शिक्षा, स्वास्थ्य, पुलिस स्टेशन, बैंक, डाक्टर एवं आवागमन आदि उपलब्ध हैं । गाँवों के इन विकास खण्ड मुख्यालयों की दूरी बहुत अधिक है । जनपद झाँसी में 4 ऐसे गाँव हैं जो विकास खण्डों से एक किलोमीटर या कम, 19 गाँव 1 से 3 किलोमीटर, 138 गाँव 3से 5 किलोमीटर तथा 679 गाँव पाँच किलोमीटर से अधिक दूरी पर स्थित हैं । इन परिस्थितियों में सामान्य ग्रामीण कृषक को विकास की सुविधायें एवं सलाह विकास खण्ड से प्राप्त करना बहुत कष्ट साध्य सिद्ध होता है ।

नहर नल, कूप, रहट, पम्पिंग सेट, पिट बोरिंग, बंधी, आदि जनपद झाँसी में सिंचाई का मुख्य साधन हैं । वर्ष 1981 के सर्वेक्षण के अनुसार जनपद झाँसी में कुल 196 किलोमीटर लम्बाई के नहरें, 2 राजकीय नल कूप, 10,592 रहट, 9,426 पम्पिंग सेट, 144 निजी नलकूप, एवं 31,832 हेक्टेयर जमीन में बंधी व्यवस्था थी । जनपद झाँसी की प्रमुख समस्या अशिक्षा है । यद्यपि सरकार की ओर से अनेकों सुविधायें कृषकों को दी गई किन्तु कृषकों की अशिक्षा के कारण इनमें अपेक्षित सफलता नहीं मिल सकी है । वर्ष 1981 में जनपद झाँसी की साक्षरता का प्रतिशत 36.71 था ।

वर्ष 1981 में जनपद झाँसी की साक्षरता का प्रतिशत 20.8 था एवं महिला साक्षरता का प्रतिशत मात्र 6.8 रहा है ।

जनपद में सिंचाई के साधन एवं क्षेत्रफल का विश्लेषण करने से स्पष्ट होता है कि रहट, पंम्पिंग सेट तथा निजी नलकूपों से मात्र 2,279 हेक्टेयर भूमि की सिंचाई हो सकी है । शेष 71,686 हेक्टेयर भूमि की सिंचाई नहर राजकीय नलकूप, पक्के कुयें, तालाब एवं झीलों आदि स्त्रोतों से की गई है । इससे स्पष्ट है कि सिंचाई के परम्परागत साधन यथा रहट आदि का योगदान बहुत कम है । वर्ष 1977-78 में किये गये सर्वेक्षण के अनुसार जनपद में 63,863 देशी हल, 56,071 नेस्टन हल, 450 ट्रेक्टर, 49,685 सीरड्रिल एवं 56 हैरो हैं । निश्चित रूप से कृषिकार्य आज भी मानवीय श्रम पर आधारित है । मात्र बड़े जोत वाले किसान ही ट्रेक्टर या अन्य उन्नतिशील उपकरणों का प्रयोग कर रहे हैं । साधारणतया न्यून आर्थिक स्तर वाला किसान आज भी हल-बैल पर आश्रित है । चूँकि जनपद झाँसी में मुख्य व्यवसाय कृषि है इसलिये अधिकांश विवाद कृषि से सम्बन्धित होना स्वाभाविक हैं । और स्वतंत्रता से पूर्व आम तौर पर हरिजन मजदूरी किया करते थे । सन् 1947 के बाद राज्य की ओर से अनेकों प्रयास हरिजनों के सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक उत्थान के लिये किए गये । जमीनों के पट्टे एवं अनेक आर्थिक सुविधायें राज्य की ओर से हरिजनों को प्रदान की गई थीं । हरिजन आज भी बड़ी कठिनाई से छोटे और मध्यम श्रेणी के कृषक, कृषक मजदूर एवं मजदूर हैं । उच्च वर्ग के भूमि-पतियों के मध्य में लघु कृषकों के अस्तित्व में आने के कारण विवाद होना स्वाभाविक है । तालिका संख्या 3 ।

वर्ष 1979-80 में जनपद झाँसी में राष्ट्रीय राज्य मार्ग की पक्की सड़कों की लम्बाई कुल 131 किलोमीटर, प्रादेशिक राजमार्ग

तालिका संख्या 3 जनपद झाँसी में विभिन्न परिवारों के अधिकार में भूमि का वितरण (वर्ष 1981)

क्रम सं.	क्षेत्रफल (हे0)	जोतों की संख्या	क्षेत्रफल (हे0)
1.	0.5 हे0 से कम	34,625	8,985
2.	0.5-1 हे0 तक	28,370	20,925
3.	1 से 2 तक	38,516	52,458
4.	2 से 3 तक	18,223	43,487
5.	3 से 4 तक	9,955	34,362
6.	4 से 5 तक	7,050	30,466
7.	5 से 10 तक	13,507	91,976
8.	10 से 20 तक	3,288	42,234
9.	20 से 30 तक	339	7,936
10.	30 से 40 तक	76	2,634
11.	40 से 50 तक	21	928
12.	50 से ऊपर	7	417
योग		1,53,977	3,36,808

स्रोत सांख्यिकी पत्रिका 1981 जनपद झाँसी ।

79 किलोमीटर, मुख्य जिला सड़कें 70 किलोमीटर, अन्य जिला सड़कें 481 किलोमीटर थी । इस प्रकार कुल मिलाकर 791 किलोमीटर लम्बाई की पक्की सड़कें हैं । सम्पूर्ण जनपद में प्रति हजार वर्ग कि.मी. तथा प्रति लाख जनसंख्या की लम्बाई 67 कि.मी. है । जनपद में आ-वागमन के साधनों की कमी ग्रामीण क्षेत्रों के जाने के लिये अनुभव की जाती है । वर्ष 1980-81 के सर्वेक्षण के अनुसार केवल सरकारी बसें चलने वाली सड़कों की लम्बाई 90 किलोमीटर, निजी बसों वाली सड़कों वाली सड़कों की लम्बाई 450 किलोमीटर तथा ऐसी सड़कें जिन पर सरकारी तथा निजी बसें चलती हैं 202 किलोमीटर है । इस प्रकार कुल मिलाकर 742 किलोमीटर सड़कों पर बसों के यातायात साधन उपलब्ध हैं । जनपद में कुल 855 गांवों में से 759 आबाद हैं । कुल ग्राम सभायें 584 एवं न्याय पंचायतों की संख्या 65 है । जनपद में मात्र 79 गांव ऐसे हैं जिनमें बस स्टेण्ड हैं । इनके अतिरिक्त 90 ऐसे गांव हैं जो बस स्टेण्ड से एक किलोमीटर या एक से तीन किलोमीटर, 135 गांव 3 से 5 कि.मी. तथा 417 गांव ऐसे हैं जो बस स्टेण्ड से पांचकिलोमीटर की दूरी पर स्थित हैं । इन आंकड़ों से स्पष्ट है कि मात्र 10% प्रतिशत गांव सड़क यातायात के सीधे सम्पर्क में हैं एवं शेष 90% प्रतिशत गांवों में यातायात का कोई साधन नहीं है । इन 90% गांवों में माल ढोने का कार्य परम्परागत बैल-गाड़ियों द्वारा होता है । ग्रामों में आवागमन बैल-गाड़ियों, घोड़ों, एवं साइकिल की सहायता से होता है । आवागमन के पर्याप्त साधन उपलब्ध न होने के कारण सामाजिक प्रगति की गति धीमी है । आम व्यक्तियों का सम्बन्ध जिला मुख्यालय एवं विकास मुख्यालय से आसानी से नहीं हो पाता है । इसी कारण कृषक उत्पादित वस्तुओं को कम दामों पर बेचने के लिये बाध्य होता है एवं दैनिक आवश्यकता का सामान बढ़ी हुई कीमत पर दलालों से खरीदता है । परिणाम स्वरूप

जनपद झाँसी के ग्रामीण क्षेत्रों का आधुनिक जीवन से सम्बन्ध कम दृष्टि-गोचर होता है । जनपद झाँसी मुख्यालय प्रमुख रेलवे जंक्शन है और देश के अधिकांश भागों के लिये सीधी रेल सेवायें उपलब्ध हैं । किन्तु ग्रामीण क्षेत्रों की स्थिति दयनीय है । जनपद में मात्र 14ऐसे ग्राम हैं जिनमें रेलवे स्टेशन हैं तथा छोटी बड़ी गाड़िया रूकती हैं । शेष सभी गांव रेलवे सुविधाओं से वंचित हैं । जनपद झाँसी के 746 ग्रामों के 147 ग्रामों में डाकघर स्थित हैं एवं 17 गांव ऐसे हैं जिनसे डाकघर की दूरी एक कि.मी. 155 गांव 103 कि.मी., 231 गांव 5 कि.मी. या उससे अधिक की दूरी पर स्थित हैं । इससे स्पष्ट होता है कि 78% गांव सामान्य डाक सुविधाओं से वंचित हैं और इससे इस जनपद का पिछड़ापन स्पष्ट होता है ।

पशुधन गणना 1978 के अनुसार जनपद झाँसी में कुल 6,53,995 पशु थे जनपद में 14 पशु चिकित्सालय, 16 पशुधन विकास केन्द्र एवं 20 कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र थे । यह केन्द्र भी गांव से दूरी पर स्थित हैं तथा ग्रामीण व्यक्तियों में जागरूकता न होने के कारण इनका अपेक्षित लाभ ग्रामीण क्षेत्रों को प्राप्त नहीं हो सका है । कृषि का विकास होने के कारण चरागाहों की कमी होती जा रही है और ग्रामीण जन-समुदाय में इसकी पूर्ति हेतु अच्छी किस्म की घास उगाने की प्रवृत्ति का विकास न होने के कारण पशुधन संख्या में गिरावट हो रही है । तालिका संख्या 4 में वर्ष 1978 की पशु गणना के आधार पर विवरण प्रस्तुत है ।

वर्ष 1980 में आर्थिक गणना के आधार पर जनपद झाँसी में कृषि उद्यमों की संख्या 955 एवं अकृषि उद्यमों की संख्या 31,267 थी, कुल उद्यमों का योग 32,222 था । इन उद्यमों में कुल कार्यरत व्यक्ति

तालिका संख्या 4 जनपद झाँसी में प्रमुख पशुओं की किस्मों का वर्गीकरण
(वर्ष 1978)

क्रम सं.	पशुओं की किस्म	संख्या
1.	दूध देने वाली गायें	1,10,568
2.	दूध देने वाली भैंसें	58,414
3.	भेड़ें	52,219
4.	बकरियाँ	1,43,846
5.	घोड़े एवं टट्टू	600
6.	सुअर	7,598
7.	अन्य पशु	811

स्रोत सांख्यिकीय पत्रिका 1981

89,748 थे । जनपद में कृषि के अतिरिक्त अनेकों निजी तथा सहकारिता उद्योग कार्य कर रहे हैं । जनपद में प्रारम्भिक कृषि ऋण समितियाँ 60 हैं जिनकी सदस्यता 79,463 है । यह समितियाँ अपने सदस्यों की आवश्यकता पर कम ब्याज पर ऋण उपलब्ध कराती हैं । और साहूकारों के शोषण अधिकांश सीमा तक मुक्ति दिलाने का श्रेय इन समितियों को है । और साहूकारों के शोषण अधि ।कांश सीमा तक मुक्ति दिलाने का श्रेय इन समितियों को है । इनके अतिरिक्त जनपद में 44 हाट व बाजार लगते हैं जहाँ से व्यक्ति अपनी आवश्यकता का सामग्री खरीदते हैं । वर्ष 1981-82 में जनपद में 48 राष्ट्रीयकृत बैंक तथा 16 अन्य व्यवसायिक बैंक की शाखायें थी । इस प्रकार अनुमानतः 14,263 जनसंख्या पर एक बैंक कार्यालय जनपद में है । प्रमुख बृहद उद्योगों में भारत हैवी इलेक्ट्रीकल्स सूती एवं वस्त्र उद्योग, सूती मिल, रेलवे वर्कशाप बैद्यनाथ आयुर्वेदिक कारखाना आदि प्रमुख हैं । ग्रामीण उद्योगों में चर्म उद्योग, मिट्टी के बर्तन, अनाज व दाल प्रसाधन, साबुन, गुड़ आदि प्रमुख हैं । इनके अतिरिक्त अनेकों पंचायत उद्योग तथा लघु उद्योग जनपद में स्थित हैं । भूमि संरचना के अनुसार जनपद झाँसी दो भागों में विभक्त है । प्रथम भाग उत्तर पूर्वी मैदान है जिसमें विकास खण्ड चिरगाँव, मोंठ, बामोर, गुरसरांय तथा मऊरानीपुर आते हैं । यह क्षेत्र कृषि की दृष्टि से उपयोगी क्षेत्र हैं । इसमें लगभग 50% प्रतिशत भूमि मार, 30% प्रतिशत काबर तथा शेष भाग पडुवा मिट्टी का है । दूसरा भाग दक्षिण पश्चिमती है जिसमें विकास खण्डबंगरा, बड़ागाँव तथा बबीना है एवं इस भाग की भूमि कृषि कार्य के लिये उपयोगी नहीं है क्योंकि यह अधिकांशतः पठारी एवं राँकड़ हैं । जनपद में कृषकों का विवरण तालिका सं0 5 में प्रदर्शित है । इस तालिका

तालिका संख्या । 5 । वर्ष 1971 एवं 1981 में कृषकों का

तुलनात्मक अध्ययन

क्रम संख्या	वर्गीकरण	वर्ष 1971	वर्ष 1981
1.	कृषक	1,17,494	1,53,708
2.	कृषक मजदूर	44,833	39,437

स्रोत सांख्यिकी पत्रिका 1981

से स्पष्ट है कि वर्ष 1971 की अपेक्षा 1981 में कृषकों की संख्या में वृद्धि हुई है और कृषक मजदूरों की संख्या में गिरावट आई है । इसका कारण शासन द्वारा मजदूरों को जमीनों के पट्टे देना है जनपद में कार्य के सापेक्ष व्यक्तियों का वर्गीकरण तालिका संख्या 6 में प्रदर्शितहै ।

2. संग्रहीत तथ्यों की व्याख्या

समाज शास्त्र की दृष्टि से जनपद झांसी की सामाजिक न्यायिक व्यवस्था के संदर्भ में कोई उल्लेखनीय प्रकाशित शोध कार्य अवलोकित नहीं हो सका है । वर्तमान शोध प्रबन्ध के लिये भा0 द0 प्र0 सं0 में वर्णित अहस्तक्षेपीय अपराधों को प्राथमिकता देते हुये शोध कार्य का क्रियान्वयन हुआ है । शोध विषय सामाजिक एवं न्यायिक प्रक्रियाओं के पारस्परिक सम्बन्धों पर अवलम्बित है । भारतीय दंड प्रक्रिया सं0 में जो अहस्तक्षेपीय अपराध विभिन्न धाराओं के अन्तर्गत आते हैं एवं जिनका संकलन वर्तमान शोधकार्य में किया गया है उसका विवरण तालिका संख्या 7 में प्रदर्शित है ।

3. आदर्श आकार

वर्तमान शोध कार्य के लिये जनपद झांसी के न्यायालयों में वर्ष 1979 से विचाराधीन एवं निस्तारित 200 अहस्तक्षेपीय वादों का संकलन किया गया है । इन 200 वादों से सम्बन्धित व्यक्तियों-पीड़ित, अपराधीओं एवं साक्षियों से साक्षात्कार अनुसूची विधि को उपयोग करते हुये तथ्य एकत्रित किये गये हैं तथा अध्ययन को सजीव एवं सुगम बनाने की दृष्टि से 30 व्यक्तिगत अध्ययन संकलित किये गये । इस संदर्भ में न्यायालयों में उपलब्ध अभिलेखों में का भी सर्वेक्षण किया गया । साक्षात्कार एवं व्यक्तिगत अध्ययन विधि के द्वारा अध्ययन किये गये व्यक्तियों का विवरण तालिका संख्या 8 में प्रदर्शित है ।

तालिका संख्या 6 जनपद झांसी में विभिन्न कार्यरत व्यक्तियों का वर्गीकरण

क्रम सं.	कार्यों का वर्गीकरण	ग्रामीण	नगरीय	कुल-योग
		कुल व्यक्ति-यों की संख्या	कुल व्यक्ति-यों की संख्या	
1.	कृषक	1,12,692	4,802	1,17,494
2.	कृषक मजदूर	42,138	2,695	44,833
3.	पशुपालन जंगल वृक्षारोपण	1,750	328	2,078
4.	खान खोदका	234	168	402
5.	उद्योग (अ) पारिवारिक	6,383	4,963	11,346
5.	(ब) गैर पारिवारिक	1,309	7,683	8,992
6.	निर्माण कार्य	904	985	1,889
7.	व्यापार एवं वाणिज्य	2,730	10,793	13,523
8.	यातायात, संग्रह एवं	290	15,904	16,194
8.	संचार			
9.	अन्य सेवायें	10,065	21,308	31,373
10.	अन्य कुल	1,78,495	69,629	2,48,124
	योग	3,56,990	1,39,258	4,96,248

स्रोत सांख्यिकी पत्रिका 1981

तालिका संख्या : 7 : भारतीय दण्ड प्रक्रिया संहिता में वर्णित अहस्तक्षेपीय अपराधों का विवरण

क्र० सं०	भा०द०वि० की धारा	अपराध का संक्षिप्त विवरण	भा०द०वि० के अनुसार निर्धारित दण्ड	जमानतीय/ अजमानतीय	विचारण हेतु सक्षम न्यायालय
1.	2.	3.	4.	5.	6.
1.	323	स्वेच्छा उपहति कारित करना	एक वर्ष का कारावास या एक हजार रु. जुर्माना या दोनों।	जमानतीय	कोई मजिस्ट्रेट
2.	334	प्रकोप न देने वाले व्यक्ति से भिन्न किसी को उपहति करने का आशय न रखते हुए गम्भीर और अचानक प्रकोप पर स्वेच्छा उपहति कारित करना।	एक मास का कारावास या 500/- रु. जुर्माना या दोनों।	जमानतीय	कोई मजिस्ट्रेट
3.	352	गम्भीर प्रकोपन से अन्यथा हमला या आपराधिक बल का प्रयोग।	तीन मास का कारावास या 500/-रु. जुर्माना या दोनों।	जमानतीय	कोई मजिस्ट्रेट

1.	2.	3.	4.	5.	6.
4.	355	गम्भीर और अचानक प्रकोपण होने से अन्यथा किसी व्यक्ति का निरादर करने के आशयों उस पर हमला या अपराधिक बल प्रयोग ।	दो वर्ष का कारावास या जुर्माना या दोनों ।	जमानतीय	कोई मजिस्ट्रेट
5.	358	गम्भीर और अचानक प्रकोपण होने पर हमला या अपराधिक बल का प्रयोग ।	एक माह का कारावास या 200/-रु. जुर्माना या दोनों ।	जमानतीय	कोई मजिस्ट्रेट
6.	370	दास के रूप में किसी व्यक्ति को खरीदना	7 वर्ष का कारावास और जुर्माना	जमानतीय	कोई मजिस्ट्रेट
7.	403	अचल सम्पत्ति की बेईमानी से दुर्विनियोग या सम्परिवर्तन ।	दो वर्ष का कारावास जुर्माना या दोनों ।	जमानतीय	कोई मजिस्ट्रेट
8.	404	किसी सम्पत्ति का यह जानते हुए बेईमानी से दुरविनियोग कि वह मृत व्यक्ति के कब्जे उसकी मृत्यु के समय थी और तब से वह वैध रूप में अधिकृत व्यक्ति के कब्जे में नहीं रही ।	तीन वर्ष की कैद और जुर्माना	जमानतीय	मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी

1.	2.	3.	4.	5.	6.
9.	405	यदि वह अपराध मृत व्यक्ति द्वारा नियोजित सेवक द्वारा किया जाए ।	7 वर्ष का कारावास और जुर्माना ।	जमानतीय	प्रथम श्रेणी मजिस्ट्रेट
10.	417	छल	एक वर्ष का कारावास और जुर्माना यादोनों	जमानतीय	कोई मजिस्ट्रेट
11.	424	अपनी या किसी अन्य व्यक्ति की सम्पत्ति का कपटपूर्वक अपसारण या छिपाया जाना या सहायता करना अथवा जिसमांग या दावे का वह हकदार है उसे बेईमानी से छोड़ देना ।	दो वर्ष का कारावास जुर्माना या दोनों ।	जमानतीय	कोई मजिस्ट्रेट
12.	426	रिस्टी	तीन मास का कारावास जुर्माना या दोनों ।	जमानतीय	कोई मजिस्ट्रेट
13.	427	रिस्टी और एतद् द्वारा 50/-रु. या उससे अधिक नुकसान का कारित करना ।	दो वर्ष का कारावास जुर्माना या दोनों ।	जमानतीय	कोई मजिस्ट्रेट
14.	434	लोक प्राधिकारी द्वारा लगाये गये भूमि-चिन्ह को नष्ट करने या हटाने आदि द्वारा रिस्टी ।	एक वर्ष का कारावास जुर्माना या दोनों ।	जमानतीय	कोई मजिस्ट्रेट
15.	466	न्यायालय के अभिलेख या जन्म रजिस्टर आदिजो लोकसेवक द्वारा रखा जाता है, में कूट रचना ।	7 वर्ष का कारावास और जुर्माना ।	अजमानतीय	कोई मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी

1.	2.	3.	4.	5.	6.
16.	467	मूल्यवान प्रतिभूति, विल, या अन्य दस्तावेजों में कूट रचना ।	आजीवनकारावास और जुर्माना ।	अजमानतीय	प्रथम कोटि मजिस्ट्रेट
17.	482	मिथ्या सम्पत्ति चिन्ह का इस आशय से उपयोग करना कि व्यक्ति को प्रवंचित करें या क्षति करें ।	एक वर्ष का कारावास जुर्माना या दोनों ।	जमानतीय	कोई मजिस्ट्रेट
18.	489	क्षति कारक करने के आशय से किसी सम्पत्ति चिन्ह को अपसारित करना, नष्ट करना या विरूपित करना ।	एक वर्ष का कारावास जुर्माना या दोनों ।	जमानतीय	कोई मजिस्ट्रेट
19.	491	किशोरावस्था या चित्त विकृतियाँ रोग के कारण असहाय व्यक्ति की परिचर्या करने या उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए आबद्ध होते हुए उसे करने में स्वेच्छा लोप ।	तीन माह का कारावास जुर्माना या दोनों ।	जमानतीय	कोई मजिस्ट्रेट
20.	494	पति या पत्नी के जीवनकाल में पुन: विवाह करना ।	7 वर्ष का कारावास और जुर्माना ।	जमानतीय	मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी
21.	495	वह अपराध पूर्व विवाह को जो किसी व्यक्ति से छिपाकर किया जाता है ।	10 वर्ष का कारावास और जुर्माना ।	जमानतीय	मजिस्ट्रेट प्रथम

1.	2.	3.	4.	5.	6.
22.	497	जार करना ।	5 वर्ष का कारावास जुर्माना या दोनों ।	जमानतीय	मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी
23.	498	विवाहित स्त्री को अपराधिक आशय से फुसलाकर ले जाना ।	दो वर्ष का कारावास जुर्माना या दोनों।	जमानतीय	कोईमजिस्ट्रेट
24.	504	लोक-शांति भंग कराने को प्रोत्साहित करने के आशय से अपमान ।	दो वर्ष का कारावास जुर्माना या दोनों ।	जमानतीय	कोई मजिस्ट्रेट
25.	506	अपराधिक अभित्रास ।	दो वर्ष का कारावास जुर्माना या दोनों ।	जमानतीय	कोई मजिस्ट्रेट
26.	506(2)	यदि धमकी मृत्यु का या फिर उपहति कारित करने आदि की हो ।	7 वर्ष का कारावास जुर्माना या दोनों ।	जमानतीय	प्रथम श्रेणी मजिस्ट्रेट
27.	508	व्यक्ति को यह विश्वास करने के लिए उत्प्रेरित करके कि वह दैवीय अप्रसाद का भाजन होगा,	एक वर्ष का कारावास जुर्माना या दोनों ।	जमानतीय	कोई मजिस्ट्रेट
28.	5*0	कराया गया कार्य ।			
28.	510	मत्तता की हालत में लोक स्थान में प्रवेश और क्षोभ कारित करना ।	24 घंटे का कारावास 10/-रु. काजुर्माना या दोनों ।	जमानतीय	कोई मजिस्ट्रेट

स्रोत : दण्ड प्रक्रिया संहिता, भारत सरकार ।

तालिका संख्या । 8 । वर्तमान शोध कार्य में साक्षात्कार अनुसूची एवं व्यक्तिगत अध्ययन प्रणाली द्वारा, अध्ययन किये गये, व्यक्तियों का विवरण ।

क्र० सं०	अहस्तक्षेपीय अपराधों से सम्बन्धित साक्षात्कार किये गये व्यक्तियों का विवरण			कुल अहस्तक्षेपीय वादों की संख्या	अहस्तक्षेपीय अपराधों से सम्बन्धित वैयक्तिक/अध्ययन प्रणाली द्वारा अध्ययन किये गये व्यक्तियों का विवरण		
	वर्गीकरण	संख्या	अध्ययन किये गये कुल व्यक्तियों की संख्या		वर्गीकरण	संख्या	अध्ययन किये गये कुल व्यक्तियों की संख्या
1.	अपराधी	400			अपराधी	10	
2.	पीड़ित	200	800	200	पीड़ित	10	30
3.	साक्षी	200			साक्षी	10	
	कुल	200				30	

५. तथ्यों को एकत्रित करने की विधि

उपलब्ध समाज वैज्ञानिकी साहित्य के पुनर्विलोकन के आधार पर वर्तमान शोध कार्य में तथ्यों का समायोजन करने के लिये विभिन्न विधियों को उपयोग में लाया गया है ।। इस संबंध में यंग ॥ 1977 ॥ एवं आल्टमैन ॥ 1974 ॥ उपयोगी शोध पत्र सिद्ध हुये हैं । शोध विषय की जटिलता को देखते हुए हाउजर ॥1959॥ का शोध पत्र तथ्य एकत्रित करने के लिये महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ है ।। उपर्युक्त वर्णित समाज वैज्ञानिकों के अनुसार निर्देशित विधियों द्दारा वर्तमान शोध कार्य हेतु अवलोकन, साक्षात्कार अनुसूची एवं वैयक्तिक अध्ययन पद्धतियों का सम्मिलित उपयोग किया गया है । वर्तमान शोध विषय की जटिलता को देखते हुये एक विधि विशेष परकेन्द्रित होकर तथ्य एकत्रित करना अधिक उपयोगी नहीं होता । वर्तमान शोध प्रबंध में विभिन्न विधियों का उपयोग एक उचित दिशा एकत्रित तथ्यों की उचित व्याख्या एवं विश्लेषण करने में प्रभावी सिद्ध हो सकेगा ।

अवलोकन :-

अवलोकन पद्धिति के द्दारा किसी घटना का क्रमबद्ध अध्ययन किया जा सकता है । इस पद्धति के माध्यम से वर्तमान शोध प्रबंध में एकत्रित किये गये तथ्यों से सम्बन्धित व्यक्तियों का सामान्य आचरण देखा गया है एवं इसका दैनिक अंकन डायरी में किया गया है । यह पद्धति व्यक्ति विशेष की सामान्य रूप रेखा, सामाजिक एवं आर्थिक सन्दर्भ में जानने के लिये अत्यधिक उपयोगी सिद्ध हुई है ।। अवलोकन पद्धति द्दारा एकत्र किये गए तथ्यों की पुष्टि साक्षात्कार एवं उसके विश्लेषण से की गई है ।।

साक्षात्कार अनुसूची:-

साक्षात्कार, प्रश्नकर्ता एवं उत्तरदाता

के बीच बात-चीत की सामान्य सी प्रक्रिया नहीं है बल्कि चेहरे के भावों, मानसिक उद्वेगों एवं कभी-कभी अवचेतन मस्तिष्क में पड़ी हुई घटनाओं की मीमांसा समझने का एक समाज-शास्त्री अंग है ।। पूर्ण प्रभावी साक्षात्कार हेतु, प्रश्नकर्ता को महज एक पक्षीय दृष्टिकोण नहीं रखना चाहिये । अपितु विषय की उपयुक्तता एवं उत्तरदाता की सुविधाजनक मानसिक परिस्थिति का भी मापदण्ड रखना चाहिये । उत्तम प्रकार के साक्षात्कार के लिये प्रश्नकर्ता को उत्तरदाता की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, प्रशासनिक एवं मनोवैज्ञानिक तथ्यों को उचित स्थान देना चाहिये ।

साक्षात्कार अनुसूची की सहायता से वर्तमान शोध प्रबन्ध के लिये 800 व्यक्तियों का साक्षात्कार किया गया । यह व्यक्ति 200 संकलित अहस्तक्षेपीय वादों से सन्दर्भित थे । इसका विवरण तालिका संख्या 8 में प्रस्तुत किया गया है । साक्षात्कार अनुसूची का प्रारूप शोध प्रबन्ध के अंत में संकलित किया गया है ॥ परिशिष्ट ॥

वैयक्तिक अध्ययन पद्धति:-

प्ले ॥ 1806-82 ॥ व्दारा प्रतिपादित वैयक्तिक अध्ययन पद्धति समाजशास्त्रीय शोधों में पूर्ण प्रभावी तरीके से विभिन्न परिवेशों में उपयोगी सिद्ध हुई है । स्पेंसर ॥ 1820-1903 ॥ व्दारा इस पद्धति का उपयोग उसके इथिनोग्राफिक अध्ययन में मिलता है । यह यंत्र वर्तमान शोध क्षेत्रों में अत्यधिक सुगम एवं उपयोगी समझा जा रहा है । इस अध्ययन पद्धति के व्दारा किसी शोध विषय को तथ्यों के बारे में उत्तरदाता की पूर्ण रूचि एवं सुगमता से संकलित किया जा सकता है । व्यक्तिगत मार्ग निर्देशन के पश्चात शोध विषय के बारे में सम्पूर्ण जानकारी उत्तरदाता अधिक सुगम तरीके से देता है । वर्तमान शोध प्रबंध, जो न केवल समाज शास्त्रीय दृष्टिकोण से ही महत्वपूर्ण है, बल्कि व्यक्तिगत

इकाईयों जैसे प्रशासनिक व्यवस्था, न्यायिक व्यवस्था, एवं इनके प्रभाव व कुप्रभावों को इंगित करता है, में वैयक्तिक अध्ययन पद्धति की अपनी अहम भूमिका है । संकलित 200 आदर्शों के समूह में से महत्वपूर्ण 30 व्यक्तियों से वैयक्तिक अध्ययन पद्धति द्वारा जानकारी एकत्र की गई । इस जानकारी में अपराधियों, पीड़ितों तथा साक्षियों के व्यक्तिगत विचारों को स्वतंत्रता से व्यक्त करते हुये, जोड़ा गया । यह शोध कार्य की जटिलता को समझते हुये बहुत आवश्यक था कि वैयक्तिक अध्ययन पद्धति को भी उचित स्थान दिया जाना चाहिये ।

5. सामग्री स्रोत
=========

किसी समाज वैज्ञानिक के लिये शोध विषय में प्रवेश करने से पहले इस बात की जानकारी होना चाहिये कि समस्या विशेष के सन्दर्भ में उपयोगी तथ्य लिखित एवं मौखिक कहाँ पर उपलब्ध होंगे । उपलब्ध साहित्य का पुनर्विलोकन करने से इस बात के लिए दिशा मिली है कि वर्तमान शोध विषयहेतु उपयोगी सूचनायें पुलिस न्यायिक एवं प्रशासनिक कार्यालयों से प्राप्त की जा सकती है । इस भूमिका में वर्तमान शोध कार्य के लिये उपलब्ध सम्पूर्ण तथ्यों की जानकारी एवं घटनाक्रम का क्रमबध्य संकलन, उपयुक्त वर्णित कार्यालयों के अभिलेखों केअनुसार, संकलिक एवं सत्यापित किया गया । प्राथमिक तथ्यों के संदर्भ में समाज शास्त्रीय दृष्टिकोण से उपयोगी पूर्वाभासों, प्राचीन परम्पराओं एवं व्यक्तिगत धारणाओं को इस शोध कार्य में महत्वपूर्ण समझा गया । तत्पश्चात द्वेतीयक तथ्यों के लिए अवलोकन, साक्षात्कार अनुसूची , एवं वैयक्तिक अध्ययन विधि द्वारा संकलित सामग्री को समायोजित किया गया ।

6. सामाजिक यांत्रिकी

प्राथमिक एवं द्वैतीयक स्त्रोतों से एकत्रित तथ्यों को रजिस्टर में एकत्र किया गया । इसमें अवलोकन, साक्षात्कार एवं वैयक्तिक अध्ययन पद्धति द्वारा संकलित सम्पूर्ण जानकारी को व्यवस्थित ढंग से रखागया ।

इस सन्दर्भ में विभिन्न स्त्रोतों से प्राप्त आंकड़ों को डॉयरी में समाजशास्त्रीय तकनीकी दृष्टिकोण से सामान्जस्य स्थापित करते हुए एकत्रित किया गया है । व्यक्ति विशेष एवं शोध समस्या में तादात्मीकरण स्थापित करते हुए तथ्यों का संकलन किया गया । वर्तमान शोध प्रबन्ध में यांत्रिक दृष्टिकोण से उपयुक्त कारकों का विवेचन एवं निरूपण सम्यानुसार किया गया । वर्तमान शोध प्रबन्ध में एकत्रित सम्पूर्ण 200 असहस्तक्षेपीय वादों का क्रमबद्ध वर्गीकरण निम्न प्रकार किया गया :-

- ॥अ॥ सामाजिक :- परिवार, जाति, शिक्षा, उम्र ;
- ॥ब॥ आर्थिक :- कृषि, मजदूर, व्यापार, नौकरी एवं बेरोजगारी
- ॥स॥ राजनैतिक :- ग्रामीण, राजनीतिक तक सीमित;
- ॥द॥ विशेष घटनाक्रम

इस वर्तमान शोध कार्य के लिये जिन व्यक्तियों से साक्षात्कार अनुसूची एवं व्यक्तिगत अध्ययन पर आधारित सूचनायें एकत्र की गई हैं, वह असहस्तक्षेपीय अपराधिक प्रक्रिया में वर्ष 1976 से विचाराधीन एवं निस्तारित वादों से संबंधित रहे हैं । शोधकर्ता को सहायक लोक अभियोजक/अधिकारी के पद पर कार्य करने के कारण इन व्यक्तियों से सूचनायें एकत्र करने के लिये प्रशासनिक सहयोग प्राप्त हुआ है ।

7. तथ्यों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण :-

उपर्युक्त तथ्यों को विभिन्न

तालिकाओं में, जिनका वर्णन वर्णित व्याख्याओं के सन्दर्भ में हैं, विभाजित किया गया एवं इस प्रकार एकत्र सम्पूर्ण जानकारी को समाज वैज्ञानिकी दृष्टिकोण से विश्लेषित किया गया । इन तालिकाओं में द्वै कारक एवं बहुकारक पद्धतियों को अनुसरण किया गया । इसके लिये शोध विषय के लिये महत्वपूर्ण तथ्यों एवं कारक विशेष की व्यक्तिगत उपयोगिता को तुरन्त निर्णय के पश्चात निर्धारित किया गया । वर्तमान शोधकार्य से पूर्ण या आंशिक समता रखने वाला कोई शोध-पत्र, उपलब्ध साहित्य का पुनरावलोकन करते समय, शोध कर्ता को प्राप्त नहीं हो सका । इस भूमिका में वर्तमान शोध कार्य हेतु जिसमें संकलित तथ्यों का विवेचन एवं विश्लेषण आधुनिक सांख्यिकीय विधियों के व्दारा संभव नहीं हो सका है । इस संदर्भ में परम्परागत प्रतिशत प्रणाली को ही उपयोग में लाया गया है । प्रतिशत प्रणाली से प्राप्त तथ्यों को सांख्यिकीय विवेचना के लिये उपयोगी माना जा सकता है ।

8• वर्तमान शोध कार्य का पूर्वानुमानित उपयोग
==================================

वर्तमान शोध प्रबन्ध से पूर्ण या आंशिक समता रखने वाले शोध कार्य के अभाव में, प्रस्तुत शोध प्रबन्ध समाज शास्त्रीय क्षेत्र में आक्रमनात्मक उत्प्रेरक एवं विशिष्ट स्वभाव वाला है । इस कार्य के व्दारा सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, प्रशासनिक एवं न्यायिक सीमा में व्याप्त परम्पराओं, कार्य विधियों एवं इनके पर्यावर्णीय प्रभाव पर प्रकाश पड़ेगा । यह कहना अधिक तर्क संगत होगा कि सामाजिक व्यवस्थाओं का न्यायिक व्यवस्थाओं के साथ किस प्रकार का तारतम्य है एवं इनके सापेक्ष ऐसे कौन से कारक हैं जिनकों समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से सन्तुलित करते हुये एक आदर्श समाज की स्थापना की जा सके । इसके अतिरिक्त यह भी कहा जा सकता है कि

राष्ट्रीय सन्दर्भ के अतिरिक्त बुन्देलखण्ड के जनपद झाँसी जैसे पिछड़े क्षेत्र में अहस्तक्षेपीय अपराधों को किस प्रकार सामाजिक व्यवस्था से दूर रखा जा सकता है । प्रस्तुत शोध प्रबन्ध की उपलब्धियों के आधार पर यह निर्धारित किया जा सकता है कि सक्षम न्यायिक व्यवस्था स्थापित करने की दिशा में सहयोगी कारकों के प्रति सामाजिक उपेक्षा प्रदर्शित न हो ।

९. वर्तमान शोध अध्ययन की सीमायें
========================

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के अन्तर्गत प्राप्त तथ्यों को समाजशास्त्रीय शोध क्रम में उचित रूप से उपयोगी मानते हुये यह भी स्वीकार करना पड़ेगा कि इसकी कुछ सीमायें हैं । वास्तविकता का एकीकरण शोधकार्य का उचित प्रस्तुतीकरण है । विभिन्न सामयिक कारक स्पष्ट रूप से उल्लेख किये जा सकते हैं । जिससे यह निर्धारित किया जा सकता है कि वर्तमान शोध अध्ययन के अन्तर्गत सीमायें क्यों उत्पन्न हुई ?

शोध कर्ता सहायक अभियोजन अधिकारी के पद पर कार्य करते हुये सम्बन्धित व्यक्तियों जिनको कि वर्तमान अध्ययन के आदर्श में समायोजित किया गया है, को अधिक समय तक परीक्षित नहीं कर सकता था । इसलिये समग्र समाज-न्यायिक प्रक्रिया से सम्बन्धित कारकों का तुलनात्मक विश्लेषण नहीं किया जा सका । यहाँ यह स्पष्ट करना आवश्यक होगा कि आदर्श की संख्या में संकलित व्यक्ति सामान्यतः ग्रामीण क्षेत्रों से आते हैं । इन क्षेत्रों की जनपद झाँसी मुख्यालय से दूरी अधिकतम 150 कि.मी. तक है । वर्तमान शोध प्रबन्ध के लिये परीक्षित उत्तरदाता अहस्तक्षेपीय अपराधों की न्यायिक प्रक्रिया से संबंधित होने के कारण यह भी अनुभव करते होंगे कि उनके द्वारा प्रदत्त जानकारी का

उपयोग विपरीत रूप में किया जा सकता है । अतः सामान्य सी विवेचना करने में भी वह सावधानी का प्रयोग करने की कोशिश करते थे । अतः उससे प्राप्त सूचनाओं, व्यवहार, पुलिस अभिलेख न्यायिक अभिलेख तथा क्षेत्रीय निष्पक्ष व्यक्तियों से प्राप्त जानकारी को आधार मानना आवश्यक था । इन परिस्थितियों में शोधकर्ता ने यह प्रयास किया कि इन आधारों से प्राप्त सम्पूर्ण सूचनाओं के व्दारा वास्तविकता प्राप्त की जाये । जिससे वर्तमान शोध अध्ययन को विधि के समाजशास्त्रीय की दिशा में एक सैद्धांतिक स्थान प्राप्त हो सके । इस भौगोलिक अन्तर एवं प्रशासनिक उत्तरदायित्व के कारण वर्तमान शोध-प्रबन्ध के लिए व्यक्तियों को संख्या को समाज वैज्ञानिक दृष्टिकोण से न्यूनतम आवश्यकता का आधार मानकार उपलब्ध प्रभावी कारकों का समाज-न्यायिक प्रशासन के लिए किया जा सकता है । निर्धारित शोध अवधि की सीमा भी सहयोगी कारक के रूप में वर्तमान अध्ययन की सीमाओं के अन्तर्गत स्वीकारी जा सकती है । वर्तमान शोध प्रबन्ध की उपलब्धियां को विधि के समाजशास्त्र की दिशा में क्षेत्रीयता पर आधारित एक प्रारम्भिक सूचनाओं वाला संकलन कहा जा सकता है । सम्बन्धित क्षेत्र के शोध-कर्ताओं को यह निश्चित रूप से प्रेरित करता है कि इस प्रकार के स्वभाव वाले शोध-कार्य को दीर्घकालिक अंशों में अध्ययन करके समाज-न्यायिक व्यवस्था के जटिल आयामों को स्पष्ट करें ।

=:=:=:=:=:=:=:=:=

अध्याय - ३

न्याय प्रणाली एवं सामाजिक व्यवस्था

१. सामान्य विवरण
२. जाति एवं न्यायिक प्रक्रिया
३. शिक्षा एवं न्यायिक प्रक्रिया
४. आयु एवं न्यायिक प्रक्रिया
५. विश्लेषण

1. सामान्य विवरण

वर्तमान शोध अध्याय के अन्तर्गत जनपद झाँसी में जिन मुख्य सामाजिक कारकों से सम्बन्धित विषय सामग्री एकत्रित की गयी है, उसका तुलनात्मक विवरण प्रस्तुत किया गया है । पारस्परिक सामाजिक मूल्यों एवं व्यवस्थाओं को विषय सामग्री एकत्रित करते समय परिधि मानकर उचित स्थान दिया गया है । सामाजिक कारकों की अपनी विशेषता एवं विभिन्न समाजों के सन्दर्भ में विविधता होती है । वर्तमान अध्याय इस आशय से सम्पूर्ण शोध विषय का एक महत्वपूर्ण अंग है कि सामाजिक कारकों का अध्ययन नहीं किया गया तो न्यायिक प्रक्रिया को नहीं समझा जा सकता है । एकत्रित विषय सामग्री को क्रमबद्ध रूप से सारणियों में वर्णित किया गया है एवं उसके वर्णन हेतु प्रतिशत सांख्यकीय विधि को उपयोग में लाया गया है । सामयिक दृष्टि से अध्ययन की सीमितता होने के कारण प्रस्तुत अध्याय में जाति, शिक्षा एवं आयु जैसे महत्वपूर्ण सामाजिक कारकों को ही न्याय प्रक्रिया के संबंध में संकलित एवं विश्लेषित किया गया है ।

2. जाति एवं न्यायिक प्रक्रिया

भारतीय सामाजिक व्यवस्था में जाति का महत्वपूर्ण स्थान है । जाति व्यवस्था अपने सदस्यों को सुरक्षा प्रदान करती है । अतः सदस्यों में अपनी जाति के प्रति अधिक सहृदयता पाई जाती है । वर्तमान शोध में विश्लेषित अभियोगों से सम्बन्धित पीड़ित अपराधी एवं साक्षियों का जाति के आधार पर विवरण तालिका संख्या 9 में प्रदर्शित है । इस तालिका का अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि पीड़ितों में केवल पिछड़ी जाति के ही व्यक्ति पाये गये हैं । पीड़ितों में 60 प्रतिशत चमार, 15 प्रतिशत बुनकर, 7 प्रतिशत धोबी, 7 प्रतिशत बरार, 4 प्रतिशत मेहतर, 3 प्रतिशत खंगार तथा खटीक, सहरिया एवं पासी समान प्रतिशत में पाये गये

तालिका संख्या ।9। जाति व्यवस्था के आधार पर उपलब्ध व्यक्तियों का वर्गीकरण । प्रतिशत में ।

क्र० सं०	जाति	विभिन्न वर्गों में उपलब्ध व्यक्ति		
		पीड़ित	अभियुक्त	साक्ष्य
1•	चमार	60	0•5	28
2•	बुनकर	15	0•5	10
3•	धोबी	07	4•0	01
4•	बरार	07		06
5•	मेहतर	04		03
6•	खंगार	03		05
7•	खटीक	01		
8•	महारिया	01		02
9•	पासी	01	17•37	
10•	यादव			06
11•	लोधी		18•5	08
12•	कुर्मी	00	11•0	02
13s	ठाकुर		8•0	04
14•	ब्राह्मण		8•0	06
15•	काछी		6•0	05
16•	वैश्य		4•0	01
17•	गड़रिया		3•0	02
18•	कायस्त		3•0	
19•	मुसलमान		3•0	02
20•	बढ़ई		3•0	01
21•	तेली		2•0	01
22•	जायसवाल	01	1•0	
23•	नाई		1•0	01
24•	लुहार		1•0	02
25•	कुम्हार		1•0	01
26•	सोनी		1•0	
27•	जोशी		1•0	
28•	पंजाबी		1•0	
29•	ढीमर		1•0	03
कुल प्रतिशत		100	100	100

हैं । 1% प्रतिशत।

वर्ष 1961 में इस क्षेत्र का जाति के आधार पर सर्वेक्षण किया गया था । इस सर्वेक्षण में चमारों की जनसंख्या 1,56,097 झाँसी जनपद में रही है । इस तथ्य से यह स्पष्ट दृष्टव्य है कि इस जनपद में सम्पूर्ण हरिजनों की जनसंख्या में से सर्वाधिक जनसंख्या का प्रतिशत चमारों का रहा है । इसके विपरीत खटीक, सहरिया एवं पासी जातियों का वर्ष 1961 के आधार पर जनसंख्या वितरण क्रमशः 3569,11458,578 रहा है । जो निःसंदेह रूप से चमार जाति से काफी असमान है । वर्ष 1971 एवं 1981 में जाति व्यवस्था केआधार पर जनसंख्या सर्वेक्षण नहीं हुआ है । इन तथ्यों से प्रतीत होता है कि जनपद झाँसी के ग्रामीण अंचलों में अधिकांश चमार जाति के हरिजन व्यक्ति निवास करते हैं । वर्तमान शोध अध्ययन में इनका पीड़ितों के रूप में बाहुल्यता में उपलब्ध होना इसका प्रतीक है कि सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से यह जाति गरीबी रेखा से नीचे है । यह उपलब्धि अनुमानतः इस बात को इंगित करती है कि चमार जाति के व्यक्तियों में आर्थिक सम्पन्नता का अभाव इन्हें विभिन्न छोटे अहस्तक्षेपीय अपराधों में पीड़ित होने को बाध्य करता है । इससे यह भी अनुमान लगाया जा सकता हैकि परिस्थितियों वश चमार जाति के व्यक्तियों को सवर्णों पर आर्थिक रूप से आश्रित रहना पड़ता है । इसी आश्रितता के संदर्भ में उनका शोषण सवर्णों द्वारा किया जाना अनुमानित है । इसके अतिरिक्त इसकाऔचित्य पूर्ण कारण यह भी हो सकता है कि चमार जाति अन्य जातियों की अपेक्षा अधिक जागृत है और सवर्णों द्वारा की गयी ज्यादतियों के विरुद्ध न्याय की शरण लेने में अपेक्षाकृत कम संकोच करती है । इस तथ्य से यह निष्कर्ष निकलता है कि जनपद झाँसी में अन्तर-जातीय विवाद एक अच्छे औसत में विद्यमान है । इसके लिए उत्तरदायी कारकों में जमीन से सम्बन्धित वर्तमान परिसंशोधित कानून भी मुख्य रूप से माने जा सकते हैं । इन कानूनों के उद्भव से उच्च-वर्गीय व्यक्तियों के स्वामित्व की कुछ उपयोगी कृषि भूमि का स्थानान्तरण

निम्न वर्गीय व्यक्तियों को कर दिया गया है। यह एक ऐसा महत्वपूर्ण कारण है कि ग्रामीण अंचलों में सवर्णों के विरुद्ध निम्न जाति के व्यक्तियों के भूमि सम्बन्धी विवाद सामान्यतया परिलक्षित हैं। शासन की इन समाजवादी नीतियों के फलस्वरूप उच्च वर्गीय सम्पन्न व्यक्तियों की भावनाओं को ठेस लगी है और उसी के फलस्वरूप इन विवादों का दृष्टि-गोचर होना सामान्य सी प्रक्रिया है।

जैसा कि तालिका संख्या 19 से प्रदर्शित है कि अहस्तक्षेपीय अपराध के पीड़ितों के रूप में बुनकर एवं अन्य जातियां पाई गई हैं, परन्तु उनका प्रतिशत चमारों के सापेक्ष लगभग चौथाई है। यह ऐसी जातियाँ हैं कि जो कृषि कार्यों के ऊपर कम निर्भर रहती हैं। इसी के फलस्वरूप सवर्णों द्वारा इन जातियों का शोषण मात्र नगण्य कहा जा सकता है।

तालिका संख्या 19 में प्रदर्शित अपराधियों का अध्ययन करने से यह स्पष्ट होता है कि जनपद झाँसी में अहस्तक्षेपीय अपराधों के अन्तर्गत अधिकतम 18.5% प्रतिशत क्रमशः यादव वा लोधी जातियों के व्यक्ति हैं। यह इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है कियादव वलोधी जातियाँ कृषक जातियां हैं और यह अहस्तक्षेपीय वाद मूलतः कृषि कारणों से उत्पन्न हुए हैं। अपराधियों की श्रेणी में गड़रिया, कायस्त, मुसलमान क्रमशः 3% प्रतिशत है। इसका कारण उनका अन्य जातियों की संख्या में कम होना तथा कृषि पर इनकी पूर्ण रूपेण निर्भरता नहीं है। तेली जातियों के अपराधियों का प्रतिशत मात्र 2 है और इसका कारण यह है कि उनका जनसंख्या में कम है। यह जाति व्यवसायिक अधिक एवं कृषि पर निर्भर कम है। जायसवाल, नाई, लुहार, कुम्हार, सोनी, धोबी, पुंजाबी, इन जातियों की संख्या अनुमानतः लगभग समान प्रतिशत में हैं। इसका कारण है कि यह जातियाँ कृषि पर पूर्णतया निर्भर नहीं होती हैं और सभी

वर्गों की सामान्य आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। कृषि से सम्बन्धित तथा दैनिक उपयोग के कार्य इन जातियों से सभी वर्गों को लेने होते हैं। अन्य जातियों के अपराधियों का प्रतिशत शून्य रहा है और यह प्रदर्शित करना है कि इस जाति के व्यक्तियों में अन्य जाति के साथ मिश्रित होने की भावना अधिक पाई जाती है। चाहे वह सेवा करने में पूर्ण रूप में हो या जातियों के संरक्षण देने के रूप में हो।

वर्तमान अध्ययन में न्यायीक दृष्टि से गवाहों के सन्दर्भ में बड़ी भ्रान्तियाँ जनचर्चा का विषय रहीं हैं। यह आम धारणा है कि थाने पर रिपोर्ट लिखाते समय प्रथम साक्षियों की उपलब्धता का किया जाता है। साक्षी भी ऐसे होने चाहिए जो पीड़ित के कथन का समर्थन करें। अतः पीड़ित उन्हीं व्यक्तियों का नाम साक्षियों के रूप में देता है जिनके समर्थन का उसे विश्वास होता है। तालिका संख्या ‡9‡ में प्रदर्शित जाति के आधार पर साक्षियों का विश्लेषण करने पर सर्वाधिक 18 % प्रतिशत साक्षी चमार जाति के सदस्य है। उससे यह निष्कर्ष निकलता है कि चमार जाति के सदस्यों में व्यक्तिगत सहृदयता अधिक पाई जाती है और यह व्यक्ति अन्य जातियों के सदस्यों द्वारा किये गये अपराधों के विरूद्ध अपनी जाति के समर्थन में साक्ष्य देने को प्रस्तुत रहते हैं। जिस प्रकार बुनकर जाति के व्यक्ति पीड़ितों में चमारों के बाद दूसरे स्थान पर हैं उसी प्रकार साक्षी के रूप में भी उनका प्रदर्शित दूसरे स्थान पर है। बरार, मेहतर, खंगार, सहरिया ऐसी अनुसूचित जातियाँ हैं जिनका साक्षियों के रूप में प्रतिशत उन्हीं जातियों के पीड़ितों के प्रतिशत के लगभग बराबर ही है। यह निष्कर्ष इंगित करता है कि चमार, बुनकर, बरार, मेहतर, खंगार, एवं सहरिया अनुसूचितजातियों में अपनी ही जाति के सदस्यों को सहयोग करने की प्रवृत्ति अधिक पाई जाती

है और उनमें इतनी जागृति है कि वे उच्च वर्गों के सदस्यों द्वारा किये गये अत्याचारों के विरूद्ध सामूहिक प्रतिरोध कर सकते हैं । इस तालिका के प्राप्त आँकड़ों में धोबी एक ऐसी जाति निकली है जिसके सदस्य अपनी जाति के सदस्यों के विरूद्ध अन्य वर्ग के व्यक्तियों के साथ मिलकर अत्याचार भी करते हैं और अपनी जाति के समर्थन में साक्ष्य देने वालों का मात्र 1% प्रतिशत वर्तमान अध्ययन में देखा गया है । इसकाकारण यह है कि इस जाति का मुख्य व्यवसाय कपड़े धोना है और आमतौर पर सम्पन्न एवं उच्च जाति के सदस्य ही उनसे कपड़े धुलवाते हैं । जिसके फलस्वरूप उनकी निर्भरता उच्च जातियों पर अधिकतम रहती है । इसी व्यवसायिक हित के कारण धोबी जाति के सदस्य अपने ग्राहकों को प्रसन्न रखने के लिएअपनी ही जाति के सदस्यों का सहयोग नहीं करते हैं । व्यवसायिक प्रतिद्वन्दिता के कारण यह उच्च वर्ग से मिलकर अपनी ही जाति के विरूद्ध अपराध करते हैं । वर्तमानअध्ययन से प्राप्त इस निष्कर्ष का समर्थन श्रीनिवास (1973) के अध्ययन से पूर्णतया समानता रखता है । जिसमें उन्होंने पाया कि आर्थिक प्रति-द्वन्दतायें प्रत्येक परिवार को जाति के बाहर मिल जाने के लिए बाध्य कर सकती है । हरिजनों के अतिरिक्त अन्य जातियों के सदस्य भी साक्षी के रूप में प्राप्त हुए हैं । उनमें लोधी 8 प्रतिशत, काछी 5 प्रतिशत, ठाकुर 4 प्रतिशत, ढीमर 3 प्रतिशत, लुहार, मुसलमान, गड़रिया, कुर्मी प्रत्येक 2 प्रतिशत एवं वैश्य, बढ़ई, तेली, नाई, कुम्हार, प्रत्येक 1 प्रतिशत साक्षी है । इन तथ्यों से स्पष्ट है कि सभी व्यवसायिक जातियाँ जिनकी निर्भरता कृषि पर कम है किन्तु सभी जातियों के सदस्यों से सम्पर्क नित्य प्रति की आवश्यकताओं के कारण हैं, उनका प्रतिशत साक्षी के रूप में नगण्य प्राप्त हुआ है ।

ग्रामीण भारत वर्ष में जाति का स्तरीकरण आज भी प्रबलता से विद्यमान है । प्रत्येक जाति के प्रभाव का अलग-अलग अध्ययन तालिका

संख्या ‖ 10 ‖ में प्रदर्शित किया गया है । यदि असंज्ञेय वादों में हरिजन पीड़ित हों तो अन्य जाति के अपराधियों को दण्ड दिलाने में प्रत्येक जाति के साक्षियों की क्या भूमिका रही है । यह विश्लेषण तालिका संख्या ‖ 10 ‖ में किया गया है । यह तालिका प्रदर्शित करती है कि इन अभियोगों के विचारण में ब्राह्मण एवं ठाकुरों के विरोध में उच्च वर्ग का कोई भी साक्षी साक्ष्य नहीं देता है । इससे यह स्पष्ट होता है कि यह जातियां अपनी जाति के सदस्यों को दण्ड दिलाने में विमुख रहतीं हैं । साक्षियों का 1/3 भाग ब्राह्मणों को दण्ड दिलाने में प्रवृत्त नहीं है । सामान्यतः ब्राह्मण अपराधियों द्वारा हरिजनों के विरुद्ध असंज्ञेय अभियोगों में हरिजन साक्षी समर्थन एवं विरोध बराबर करते हैं । इस तालिका से यह स्पष्ट होता है कि ब्राह्मण अपराधियों को न्यायालयों से दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति उच्च वर्ग की अपेक्षा पिछड़े वर्ग एवं निम्न वर्ग में क्रमशः बढ़ती गयी है तथा हरिजनों के विरोध की प्रवृत्ति क्रमशः घटती गयी है । तालिका संख्या ‖10‖ का अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि पिछड़ा वर्ग ब्राह्मण की अपेक्षा क्षत्रियों पर अधिक निर्भर है । जनपद झाँसी में क्षत्रिय अधिकतर बड़े भूमि-पति हैं और पिछड़े वर्ग के व्यक्ति भी मुख्य रूप से कृषक हैं । इस कारण पिछड़े वर्ग के व्यवसायिक हेतु ब्राह्मणों की अपेक्षा क्षत्रियों से अधिक संबंधित हैं । ठाकुर अपराधों के वादों में प्रायः हरिजन साक्षी, हरिजन पीड़ितों का पक्ष लेते हैं और ठाकुर अपराधियों को दण्ड दिलाने में प्रवृत्त दिखाई पड़ते हैं । ठाकुर एवं ब्राह्मण अपराधियों के अभियोगों में हरिजन साक्षियों के साक्ष्य का तुलनात्मक अध्ययन करने से यह प्रतीत होता है कि हरिजन ब्राह्मणों की अपेक्षा ठाकुरों को दण्ड दिलाने में अधिक रुचि लेते हैं । इससे यह स्पष्ट है कि परम्परागत जाति संस्तरणकी मान्यताओं में कुछ कमी तो अवश्य हुई है किन्तु यह विद्यमान है । उपलब्ध विषय सामग्री

तालिका संख्या ¦ 10 ¦ अहत्तकक्षेत्रीय अपराधों की जाति के सापेक्ष साक्षियों की जाति के आधार पर उनके साक्ष्य का वर्गीकरण ¦प्रतिशत में ¦

पीड़ित की	अपराधी की	साक्षियों का जाति के आधार पर वर्गीकरण					
		वर्ग क		वर्ग ख		वर्ग ग	
		समर्थन	विरोध	समर्थन	विरोध	समर्थन	विरोध
	ब्राह्मण	-	100	33.33	66.66	50	50
	ठाकुर	-	100	25	75	100	--
	वैश्य	-	--	--	--	--	--
जनजाति/	यादव	-	--	100	--	60	40
	कुर्मी	100	--	100	--	100	--
	लोधी	-	--	42.85	57.14	66.66	33.33
पिछड़ीजाति	गड़रिया	-	--	--	100	-	100
	जोगी	100	--	100	--	100	--
	काछी	-	100	100	--	50	50
	नाई, लुहार, बढ़ई	-	100	--	100	66.66	33.33
	साहू	-	--	100	--	100	--
	कायस्त	-	--	100	--	100	--
	सोनी	-	---	--	--	--	100
	मुसलमान	-	--	100	--	--	--

नोट :- साक्षियों की जाति के वर्गीकरण के लिये निम्न वर्गीकरण इस तालिका में किया गया है ।

वर्ग क :- ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य

वर्ग ख :- वर्ग क एवं वर्ग ग के अतिरिक्त सभी जातियाँ

वर्ग ग :- सभी अनुसूचित जाति/जनजातियाँ ।

में केवल अपराधियों के विरोध में परीक्षित साक्षियों का प्रतिशत शून्य रहा है । यह व्यक्ति व्यापारिक जाति है और समझौतावादी है । सामान्यतया इस जाति के अपराधी राजीनामा कर लेते हैं क्योंकि उनके व्यवसाय में मुकदमा बाधक होती है जबकि अच्छे सम्बन्ध व्यापारिक व्यवसाय में लाभदायक होते हैं ।

तालिका संख्या । 10 । के ही तथ्यों से स्पष्ट है कि यादव अपराधियों के बारे में अहस्तक्षेपीय वादों में, इनके विरोध में उच्च वर्ग का कोई साक्षी परीक्षित नहीं हुआ है जबकि पिछड़े वर्ग के परीक्षित साक्षियों में से सभी साक्षियों ने यादव अपराधियों को दण्ड दिलाने हेतु साक्ष्य दिया है । इन अपराधियों के वादों में अनुसूचित जाति एवं जनजाति के साक्षी 60 प्रतिशत दण्ड दिलाने हेतु साक्ष्य देते हैं, 40 प्रतिशत उनका समर्थन करते हैं और दण्ड दिलाने में प्रयुक्त नहीं हैं । इसका कारण यह है कि यादव जाति के सदस्य अच्छे कृषक हैं और कृषि कार्य में इन्हें अनुसूचित जाति, जनजाति के व्यक्तियों का सहयोग सदैव अपेक्षित रहता है । तालिका से स्पष्ट है कि कुर्मी एवं कोरी जाति के अपराधियों के प्रति समाज के सभी वर्गों के साक्षियों में दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति पायी गई है । अपितु सभी वर्गों के व्यक्तियों में इनके द्वारा हरिजनों के विरुद्ध किये गये अहस्तक्षेपीय अपराधों में हरिजनों के समर्थन की प्रवृत्ति विद्यमान है । सम्भवतया इन जातियों के प्रति समाज के अन्य वर्गों में कोई सहानुभूति नहीं है या यह कहा जा सकता है कि यह जातियाँ अन्य जातियों के लिये सद्भावनापूर्वक सहयोग प्रदान नहीं करती है । लोधी अपराधियों के विचारण में उच्च वर्ग के साक्षी उनके पक्ष या विपक्ष में साक्ष्य नहीं देते हैं । पिछड़े वर्ग के साक्षी इनको दण्ड दिलाने में 42.85 प्रतिशत प्रयुक्त हैं और उनके समर्थन में इन्हें दण्ड से बचाने में 57.14 प्रतिशत साक्ष्य देते हैं । हरिजन साक्षी 66.66 प्रतिशत दण्ड दिलाने की कोशिश करते हैं और 33.33 प्रतिशत दण्ड से

बचाने हेतु साक्ष्य देते हैं ।

तालिका संख्या । 10 । से स्पष्ट है कि काछी अपराधियों के वादों में उच्च वर्ग के साक्षी इन्हें दण्ड नहीं दिलाना चाहते और सभी साक्षी इनके समर्थन में साक्ष्य देते हैं । इसके सापेक्ष पिछड़े वर्ग के साक्षी इन्हें दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति रखते हैं । जनपद झाँसी में काछी कृषक एवं मजदूर जाति है और उच्च वर्ग के व्यक्तियों द्वारा इनका सहयोग कृषि एवं मजदूरी के कार्यों में लिया जाता है । पिछड़े वर्ग द्वारा इनका विरोध इनकी व्यवसायिक प्रतिव्दन्दिता है और हरिजनों द्वारा इनका बराबर समर्थन एवं विरोध इस कारण है कि हरिजन मजदूर इनके आश्रित हैं।पटटे वाली जमीनों पर समान रूप से काछी जाति के व्यक्ति हरिजनों के विरोधी भी हैं ।

नाई, बढ़ई, एवं लुहार तीनों जातियों के अपराधियों के अभियोगों में स्थिति समान है । उच्च वर्ग एवं पिछड़े वर्ग के साक्षी इन्हें दण्ड से बचाने की कोशिश करते हैं इसका कारण स्पष्ट है कि यह तीनों जातियां उच्च तथा निम्न दोनों वर्गों के व्यक्तियों को व्यवसायिक कार्यों के साथ ही धार्मिक एवं सांस्कृतिक संस्कारों के लिए भी आवश्यक है । निम्न वर्ग के साक्षी 66.66 प्रतिशत इनका विरोध एवं 33.33 प्रतिशत इनका समर्थन करते हैं ।

साहू व कायस्त जातियों के अपराधों के अभियोगों में सभी पिछड़े एवं निम्न वर्ग के साक्षी इनका विरोध करते हैं और इन्हें दण्ड दिलाने की कोशिश में रहते हैं । उच्च वर्ग के साक्षी परीक्षित ही नहीं हुए हैं । इससे यह इंगित होता है कि साहू व कायस्त अपराधियों का समाज में अपेक्षाकृत प्रभाव कम है और न्याय के स्थापित सिद्धांत बहुत कम इनके द्वारा प्रभावित होता है ।

सोनी अपराधियों के मात्र । प्रतिशत ही अभियोग हरिजन उत्पीड़न

के पाए गये है और इसमें हरिजन साक्षियों के अपराधियों का ही समर्थन किया है । स्वर्णकारों की जनसंख्या बहुत कम है और आभूषण बनाने में समाज के प्रत्येक वर्ग को इनकी आवश्यकता होती है । अतः इनको दण्ड दिलाने में लोगों में रूचि नहीं पाई गयी है और अपनी विशेष योग्यता के कारण इस जाति के अपराधियों ने न्यायिक प्रक्रिया को प्रभावित किया है ।

मुसलमान अपराधियों के अभियोगों में पिछड़े वर्ग के साक्षियों ने इन अपराधियों को दण्ड दिलाने हेतु साक्ष्य दिया है । अन्य वर्ग के साक्षी इनके विरूद्ध अभियोजित किए गए वादों में न ही पाए गये है । सामान्यतया मुस्लिम व्यक्तियों का सम्पर्क अन्य वर्गों की अपेक्षा पिछड़े वर्ग से अधिक रहता है । तालिका संख्या (9) एवं तालिका संख्या (10) का तुलनात्मक अवलोकन करने से यह स्पष्ट होता है कि वैश्य, कुम्हार, पंजाबी एवं ढीमर इन जातियों के सदस्य हरिजनों के विरूद्ध अपराधी तो हैं किन्तु विचारण में इनके विरोध या समर्थन में कोई साक्षी परीक्षित नहीं हुआ है । इन जातियों के व्यवसाय ऐसे हैं जो सामान्यतया समाज के सभी वर्गों से सम्बन्धित होते हैं । व्यवसायिक प्रकृति के कारण यह सामान्यतया विनम्र और समझौतावादी होने के कारण राजीनामा कर लेते है । इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि इन जातियों के अपराधियों ने अपनी सेवाओं या अन्य तरीकोंसे अपने आपकों न्यायिक दण्ड से बचाया है और इस तरह इन्होने न्यायिक व्यवस्था को प्रभावित किया हो ।

तालिका संख्या (10) में प्राप्त आँकड़ों को देखने से यह स्पष्ट होता है कि प्रत्येक जाति विशेष के अपराधी के विरोध में विभिन्न जातियों के साक्षियों ने साक्ष्य दिये है । ब्राहमण एवं क्षत्रिय अपराधियों को दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति उच्च वर्ग से निम्न वर्ग के साक्षियों में क्रमशः बढ़ती गयी किन्तु यादवकुर्मी, लोधी, साहू, कायस्त, आदि जातियों के अपराधियों को दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति ब्राहमण, ठाकुर की अपेक्षा विपरीत पाई

गयी है । नाई, लुहार बढ़ई, वैश्य तथा पंजाबी इनके अभियोजन में पुनः दण्ड लिाने की प्रवृत्ति में अन्तर है और इस प्रकार प्रत्येक जाति के अपराधियों के सापेक्ष विभिन्न जाति के व्यक्तियों का साक्षियों के रूप में समर्थन एवं विरोध बदलता पाया गया है ।

इस उपलब्धि के आधार पर यहनिश्चित रूप से कहा जा सकता है कि जाति व्यवस्था एक ऐसा सामाजिक कारक है जो न्यायिक व्यवस्था को प्रभावित करता है । इस वर्तमान निष्कर्ष के समानान्तर कुप्पू स्वामी (1982) ने भी यही पाया है कि "जहाँ तक हिन्दुओं का सम्बन्ध गाँव या शहर में मूल्यांकित करने का है इन्होंने सभी परिवर्तन स्वीकार किए है । अनेकों वैधानिक निर्योग्यतों के समाप्त होने की परवाह किए बिना यह वर्गसामूहिक चेतना रखता है । जाति एक संस्था के रूप में जारी है क्योंकि यह एक बड़े समूह से पहचान तथा सुरक्षा का भाव प्रदान करती है ।

बहादुर (1979-80) एवं काम्बले (1982) के मतानुसार प्राचीन भारत वर्ष में न्याय जाति के आधार पर होता था । कुछ जातियाँ दण्डों से मुक्त थीं एवं कुछ निम्न वर्ग के सापेक्ष अनेकों विशेषाधिकार प्राप्त थे ।। वर्तमान न्याय व्यवस्था पूर्णतया संहिता बद्ध है और कानून सभी नागरिकों के लिये एक समान हैं, किन्तु बहुत कुछ परिवर्तनों के बावजूद भी मनोवैज्ञानिक रूप से आज भी जातिगत मान्यतायें भारतीय समाज में विद्यमान हैं जिनका प्रभाव न्यायिक व्यवस्था पर होता है । इस मान्यता की पुष्टि वर्तमान शोध प्रबंध के सन्दर्भ में उपर्युक्त वर्णित विवरण से होती है ।

3. शिक्षा एवं न्यायिक प्रक्रिया

पूर्ण समक्षमा से यह तथ्य स्थापित है कि शिक्षा का सामाजिक न्यंत्रण में महत्वपूर्ण योगदान है । 15 अगस्त 1947 के पूर्व के भारत में शिक्षा का स्तर बहुत निम्न रहा है । स्वतन्त्रता के बाद राजकीय एवं स्वयंसेवी संस्थाओं के प्रयासों के फलस्वरूप जनपद झांसी में शिक्षा का स्तर बढ़ा है । शिक्षा के आधार पर पीड़ित अपराधी एवं साक्षियों का वर्गीकरण तालिका संख्या ।।। में किया गयाहै । वर्तमान अध्ययन में 77 प्रतिशत पीड़ित अशिक्षित पाये गये हैं । इसके 19 प्रतिशत सापेक्ष पीड़ित प्राइमरी है, 2 प्रतिशत पीड़ित हाईस्कूल तथा 2 प्रतिशत पीड़ित इण्टरमीडिएट तक शिक्षित पाए गए हैं । अशिक्षित पीड़ितों की सर्वाधिक संख्या से यह स्पष्ट होता है कि जनपद झांसी में अशिक्षा, हरिजनों के पीड़ित होने का कारण है । अपराधियों के शैक्षिक स्तर का विश्लेषण करने पर भी सर्वाधिक 40 प्रतिशत अपराधी अशिक्षित पाए गए हैं । तथा उसके सापेक्ष 35 प्रतिशत अपराधी प्राइमरी तक ही शिक्षित हैं । प्राइमरी तक शिक्षा गांव में ही उपलब्ध हो जाते है और इस शिक्षा के स्तर के अपराधियों में परम्परागत रूढ़िवादिता होना स्वाभाविक है । अशिक्षित और अल्प शिक्षित होने के कारण यह अपराधी हरिजनों के प्रति समानता के सिद्धान्तों को स्वीकार नहीं कर पाते हैं ।और अहस्तक्षेपीय अपराध करते हैं । तालिका संख्या ।।। से स्पष्ट है कि 6 प्रतिशत अपराधी मिडिल तक शिक्षित पाये गये हैं और 14 प्रतिशत अपराधी हाई स्कूल तक शिक्षित है । हाईस्कूल तक शिक्षित अपराधियों के प्रतिशत में अचानक बढ़ोत्तरी यह इंगित करती है। कि हाई स्कूल शिक्षा के बाद विद्यार्थी को उचित मार्ग निर्देशन नहीं है और उनकी शारीरिक क्षमता का सही दिशा में प्रयोग नहीं होता है । इण्टर मीडिएट शिक्षा स्तर के 4 प्रतिशत अपराधी पाए गए हैं और इनमें से दो प्रतिशत विद्यालय में तथा 2 प्रतिशत विवाद छुट्टी के दिनों में गांव में हुए है । इनका प्रतिशत अन्य प्रतिशतों के सापेक्ष नगण्य है और कोई विशेषकारण देना सम्भव नहीं है । स्नातक स्तर के भी । प्रतिशत अपराधी पाए गए हैं । यह विवाद

तालिका संख्या (11) वर्तमान अध्ययन में उपलब्ध व्यक्तियों का शिक्षा के आधार पर वर्गीकरण (प्रतिशत में)

क्र0 सं0	शिक्षा	पीड़ित	अपराधी	साक्षी
1.	अशिक्षित	77	40	70
2.	प्राइमरी	19	35	24
3.	मिडिल	-	06	-
4.	हाई स्कूल	02	14	04
5.	इण्टरमीडिएट	02	04	02
6.	स्नातक/ स्नातकोत्तर	-	01	-
7.	तकनीकी	-	-	-
	कुल	100	100	100

बानी के ऊपर है और न्यायालय द्वारा अपराधी को सन्देह का लाभ देते हुए दोष मुक्त किया गया है ।

साक्षियों का शिक्षा के आधार पर अध्ययन करने से यह ज्ञात होता है कि 70 प्रतिशत साक्षी अशिक्षित है, 24 प्रतिशत मात्र प्राइमरी तक शिक्षित 4 प्रतिशत हाईस्कूल एवं 2 प्रतिशत इण्टर मीडियट तक शिक्षित पाए गए हैं । स्नातक और उच्च शिक्षा प्राप्त कोई साक्षी नहीं पाया गया हैं । वर्तमान उपलब्धि से यह कहा जा सकता है कि उच्च शिक्षा प्राप्त व्यक्ति चाहे वे समाज के किसी भी वर्ग हों अपराधों एवं न्यायिक कार्यवाही से दूर रहते हैं । अपराधियों का शैक्षिक स्तर पीड़ित एवं साक्षियों की तुलना में अधिक पाया गया है । इसका कारण यह है कि अपराधी उच्च वर्ग के व्यक्ति हैं और हरिजनों की अपेक्षा कुछ प्रतिशत में शिक्षित हैं ।

पीड़ितों के साक्ष्य का शिक्षा के आधार पर अध्ययन तालिका संख्या (12) में किया गया है । इस तालिका का अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि अशिक्षित पीड़ितों ने अपने पूर्व कथन या प्रथम सूचना रिपोर्ट को 32.05 प्रतिशत ही समर्थन दिया है । इसका स्पष्टीकरण इस प्रकार दिया जा सकता है कि अशिक्षित पीड़ित मात्र 32.05 प्रतिशत ही अपराधी को दण्ड दिलाने में उत्सुक प्रतीत होते है । 24.37 प्रतिशत पीड़ित अपने ही पूर्व कथन (प्रथम सूचना रिपोर्ट) का विरोध करके स्वयं अपराधियों की मदद करते हैं । प्राप्त 33.33 प्रतिशत पीड़ित परीक्षण हेतु साक्ष्य देने न्यायालय में उपलब्ध नहीं हुए हैं । अशिक्षित पीड़ित सामान्यतया मजदूर या मजदूर कृषक होते है और साक्ष्य की तिथी पर न्यायालय में उपस्थित नहीं हुए हैं । इनके न्यायालय में अनुपस्थिति रहने के अनेकों कारण हैं । जिसमें प्रमुख जैसे इनका मजदूरी हेतु गांव के

तालिका संख्या ॥ 12 ॥ अहस्तक्षेपीय अपराधों में पीड़ितों का शिक्षा के आधार पर न्यायालय में साक्ष्य

क्रम संख्या	पीड़ितों का शैक्षिक स्तर	समर्थन	विरोध	समझौता	अपरीक्षित	योग
1.	अशिक्षित	32.05	24.37	33.33	10.25	100
2.	शिक्षित	36	28	28	12	100

बाहर चले जाना, अपराधी के दबाव के कारण न्यायालय में नहीं आना, सम्मान का प्राप्त न होना, बीमारी एवं मृत्यु आदि के कारण साक्ष्य हेतु उपलब्ध न होना आदि । अभियोजन की समुचित पैरवी न होना भी इसका कारण हो सकती है। जनपद झांसी में साक्षियों के सम्मन सम्बन्धित पैरोकार बनाकर तामील हेतु थाने ले जाता है । जहाँ से सम्बन्धित साक्षी को सम्मन भेजा जाता है । न्यायालयों तथा पुलिस कार्यालयों में काम का इतना बोझ रहता है कि सम्मन की तामीली अनेकों कारणों से सुनिश्चित नहीं हो पाती है । यदि सम्मन न्यायालयीन कर्मचारियों द्वारा निर्गत किए जाएं और इन्हें साक्षी तक डाक विभाग द्वारा पंजीकृत डाक से भेजा जाये तो इस व्यवस्था में सुधार हो सकता है । अशिक्षितों की अपेक्षा शिक्षित साक्षी अपने पूर्व कथन तथा प्रथम सूचना रिपोर्ट का समर्थन अधिक करते पाए गए हैं । विरोधी साक्ष्य एवं राजीनामा भी अशिक्षितों की अपेक्षा शिक्षित पीड़ितों ने कम किए हैं । जैसा कि तालिका संख्या । 12 । से स्पष्ट है कि शिक्षित पीड़ित अशिक्षित पीड़ितों की अपेक्षा अधिक अपरीक्षित रहे हैं । इसका कारण सम्भवतया यह है कि शिक्षित पीड़ित नौकरी एवं व्यवसाय के कारण अन्यत्र चले जाते है और साक्ष्य के समय पर न्यायालय में नहीं आते हैं । इस तालिका के विश्लेषण से यह तथ्य स्पष्ट होता है कि अपराधियों को दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति अपेक्षाकृत कम पायी गयी है । विरोधी साक्ष्य राजीनामा तथा अपरीक्षित साक्षी संयुक्त रूप से अपराधी को दण्ड से बचाने में सहायक होते है यही सर्वाधिक कानूनी मजबूरी है । जगन्नाथन । 1978 । का मत है कि अधिकतर सामाजिक विधायन की कमजोरी यह होती है कि इसमें रूचि रखने वाली ऊर्जा के समर्थन का अभाव रहता है ।

वर्तमान अध्ययन में प्राप्त पीड़ितों का स्वयं अपने विरूद्ध इतनी अधिक प्रतिशत में साक्ष्य देना, हमारी न्याय व्यवस्था पर प्रश्न चिन्ह

हैं । सम्पूर्ण अपराधिक न्याय प्रक्रिया को देखने से यह स्पष्ट होता है कि अपराधिक विधि में पीड़ित को कुछ भी प्राप्त नहीं होता है । अपराधिक विधि में प्रत्येक स्तर पर अपराधी के हितों का ध्यान रखा गया है, किन्तु पीड़ित के हितों की उपयोगी चर्चा का अभाव है । कानून के अतिरिक्त सामाजिक चिन्तन भी अपराधियों के हितों में व्याप्त है । वेनुगोपाल (1983) के मतानुसार अपराधियों के सुधार एवं पुर्नवास पर अधिक जोर देने से दण्ड की अवधारणा का अवमूल्यन हुआ है । जनसंख्या के उस भाग पर जिसकी असमाजिक,प्रवृत्तियां अधिक हैं । उस चिन्तन का विपरीत प्रभाव पड़ा है । यार्लवौरी (1967) ने कहा है कि समाज का अपराधियों के लिए होना यह दर्शाता है कि अपराध के पीड़ितों से कोई सम्बन्ध नहीं है । समाज अपराध के पीड़ित केलिए क्रूर है एवं अपराधियों के विरुद्ध नहीं है । पीड़ितों की उपेक्षा भारतीय समाज के इतिहास में प्रथम बार ब्रिटिश शासन काल में विकसित हुयी है । प्राचीन भारतीय न्यायिक इतिहास देखने से स्पष्ट है कि प्रत्येक युग में पीड़ितों की क्षति पूर्ति की गयी है ।

आर्य एवं वैदिक युग में बहादुर (1979) के मतानुसार आर्य एवं वैदिक युग में चोरी के अभियोग में दण्ड का उद्देश्य पीड़ित को क्षतिपूर्ति करना होता तथा खून की कीमत भी दी जाती है। ब्राहमण युग में भी चोरी का पीड़ित राजकोष से क्षति पूर्ति के लिये वर्णित था ।

इग्लैण्ड में भी सातवीं शताब्दी में केटनिश विधि में सभी अपराधों के पीड़ितों की क्षतिपूर्ति की सूची थी । दुष्कृति विधि के उदभव के कारण अपराधिक विधि में पीड़ित की क्षतिपूर्ति के प्राविधान लुप्त हो गए हैं । व्यवहारिक रूप से देखने में यह स्पष्ट हो जाता है कि अपराध के पीड़ित को सम्पूर्ण न्यायिक कार्यवाही में अनेकों परेशानियां असुरक्षा, कार्य की क्षति, ग्रामीण अंचलों से न्यायालय तक आने में कष्ट, पुलिस एवं अनेकों

अधिकारियों व्दारा निरन्तर पूछतांछ, कई बार साक्ष्य हेतु न्यायालयों के चक्कर लगाना आदि केअतिरिक्त उसे कुछ भी प्राप्त नहीं होता है । बार्नेस एवं टीटर ‡ 1951 ‡ ने कहा है कि "हम जो आज हैं उससे हमारे असभ्य पूर्वज अधिक बुद्धिमान एवं न्यायिक थे, क्यों कि उन्होंने पीड़ितों की पुर्नस्थापना का सिद्धान्त स्वीकार किया था । जबकि हमने बेहतरी के सभी सम्बन्धितों की हानि के लिये त्याग दिये हैं । निश्चित रूप से यही कारण है कि पीड़ित स्वयं अपराधी को दण्ड दिलाने की पूरी कोशिश करता है । टेलर ‡ 1981 ‡ के अनुसार पीड़ित का प्रतिनिधित्व, आधुनिक अपराधिक विचारण में राज्य करता है और यह प्रतिनिधित्व इतना होता है कि पीड़ित पूरे दृश्य से बाहर कर दिया जाता है । इस तरह से विवरण में भाग लेने से इन्कार करना उसे लंगड़ा करना है । पीड़ित अपना वाद राज्य के लिये हार जाता है ।

शिक्षा के आधार पर साक्षियों के साक्ष्य का वर्गीकरण तालिका संख्या ‡ 13 ‡ में किया गया है । इस तालिका में केवल उन्हीं साक्षियों का वर्गीकरण किया गया है जो न्यायालय में साक्ष्य देने हेतु उपस्थित हुये हैं और उनका साक्ष्य लिया गया है । अशिक्षित साक्षियों में से 20 प्रतिशत पीड़ितों का समर्थन किया है जबकि शिक्षित साक्षियों में से 8.08 प्रतिशत ही पीड़ितों ‡हरिजनों‡ समर्थन किया है । शिक्षित साक्षी सामान्यता उच्च वर्गों के हैं और उनकी प्रवृत्ति हरिजनों पीड़ितों के समर्थन की नहीं रही है । शिक्षित साक्षियों से 66.66 प्रतिशत हरिजनों के विरोध में साक्ष्य दिया है । जबकि अशिक्षितों ने 53.33 प्रतिशत ही विरोधी साक्ष्य दिया है । इसका कारण यह है कि शिक्षित साक्षी सामान्यता उच्च वर्गों के हैं और उच्च वर्गों का न्यायिक कार्यों में हरिजनों को समर्थन प्राप्त नहीं है । विरोधाभासी साक्ष्य साक्षी की योग्यता पर निर्भर करता है । विरोधाभासी साक्ष्य वह साक्ष्य है जिसमें साक्षी अपने ही साक्ष्य के विपरीत साक्ष्य

तालिका संख्या ॥ 13 ॥ शिक्षा के आधार पर साक्षियों का

समर्थन या विरोध करने का वर्गीकरण

क्रम संख्या	साक्षियों का शैक्षणिक स्तर	समर्थन	विरोधी	विरोधाभासी	योग
1.	अशिक्षित	20	53.33	26.66	100
2.	शिक्षित	14.28	66.66	19.04	100

देता है । सामान्यता ऐसा साक्ष्य साक्षी की बुद्धि एवं वाक्य चातुर्य पर निर्भर करता है । अशिक्षित साक्षियों ने 26.66 प्रतिशत विरोधाभासी साक्ष्य दिया है । जबकि शिक्षित साक्षियों ने 19.04 प्रतिशत ही विरोधाभासी साक्ष्य दिया है । इसका कारण अशिक्षा है । गांव के अनपढ़ साक्षी विधि व्यवसायी के शब्दों के साथ में उलझकर सामान्यत: न को हां कहा जाता है । सामान्यतया साक्षी की मानसिक स्थिति इसके लिये उत्तरदायी होती है । ग्रामीण साक्षी जो शुद्ध हिन्दी भी नहीं जानते हैं । उनसे अंग्रेजी मिश्रित भाषा में प्रश्न पूछे जाते हैं और वे अज्ञात भय से बिना प्रश्न को समझे, कुछ भी उत्तर दे देते हैं ।

उक्त विवरण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि गवाह की शैक्षणिक स्थिति का न्यायिक प्रक्रिया पर प्रभाव दृष्टिगोचर है । इसके साथ यह भी सुस्पष्ट है कि शिक्षा से जातिगत भावनाएं समाप्त नहीं हुयीं हैं और अल्प शिक्षित सवर्ण साक्षी भी हरिजनों का विरोध न्यायिक कार्यवाहियों में करते हैं । इसके साथ ही यह भी स्पष्ट निष्कर्ष निकलता है कि शिक्षित और बुद्धिजीवी व्यक्ति न्यायिक प्रक्रिया से दूर रहते हैं ।

4. आयु एवं न्यायिक प्रक्रिया

व्यक्ति के कार्य उसकी शारीरिक क्षमता के अनुसार बदलते रहते हैं । अपराध के प्रकार और संख्या पर आयु का महत्व पूर्ण प्रभाव पड़ता है । सदरलैण्ड (1931) के मतानुसार अपराध की स सर्वाधिक आयु अपराधों के प्रकारों के अनुसार बदलती रहती है । हिंसात्मक अपराध सामान्यतया युवकों व्दारा ही किये जाते हैं । सर्वाधिक अपराध की दरें आयु बीत जाने पर क्रमश: कम होती जाती है । वास्तव में आयु के साथ-साथ शारीरिक रचना एवं क्षमता में परिवर्तन आने के साथ ही परिस्थितियां बदलती रहती हैं । नयी-नयी अन्त:क्रियाओं

तथा अन्तः सम्बन्धों के कारण व्यक्तिगत दृष्टिकोण, मनोवृत्तियाँ, रूचियाँ एवं हित भी बदलते रहते है ।

आयु के आधार परअहस्तक्षेपीय अपराधों के विचारण से सम्बन्धित पीड़ित, अपराधी एवं साक्षी का वर्गीकरण तालिका संख्या ‖ 14 ‖ में किया गया है । इस तालिका में पीड़ित, अपराधी, एवं साक्षियों को पांच-पांच वर्ष की आयु के अन्तर पर वर्गीकृत किया गया है । इस तालिका से यह स्पष्ट होता है कि 15 वर्ष तक की आयु के बालकों का सम्पूर्ण पीड़ितों में 2 प्रतिशत, इसी अपराधी । प्रतिशत है एवं इस आयु के साक्षियों का प्रतिशत शून्य पाया गया है । बालक पीड़ितों का बाल अपराधियों से अधिक प्रतिशत यह स्पष्ट करता है कि जनपद झाँसी में हरिजन बच्चे कम आयु में खेती मजदूरी आदि कार्य करने लगते हैं । इनकी अपेक्षा उच्च वर्ग के बालकों में बाल श्रम करने की प्रवृत्ति कम पायी जाती है 15 वर्ष से कम आयु के बालक साक्षियों का वर्तमान अध्ययन में नहीं पाया जाना यह स्पष्ट करता है कि जनपद में बालकों का साक्षियों के रूप में रखने की प्रवृत्ति नहीं है । ऐसा नहीं है कि बालक अहस्तक्षेपीय अपराधों की घटनायें नहीं देखते हों बल्कि इन्हें जानबूझ कर साक्षी के रूप में नहीं रखा जाता है । 16-20 वर्ष की आयु समूह के पीड़ित एवं गवाह दोनों ही 6 प्रतिशत पाये गये हैं, जबकि इसी आयु समूह के अपराधी 17 प्रतिशत पाये गये हैं । इस आयु समूह पर अपराधियों का प्रतिशत अत्यधिक बढ़ जाना यह इंगित करता है कि इस आयु समूह के व्यक्तियों को जनपद में उचित निर्देशन प्राप्त नहीं होता है । तालिका संख्या ‖ 11 ‖ में यह पाया गया है कि हाईस्कूल तक के शैक्षणिक स्तर के व्यक्तियों में अपराधिकता अधिक पायी गयी है । इससे स्पष्ट होता है कि जनपद झाँसी में किशोरों की उर्जा का उचित उपयोग नहीं हो पाता है । वर्ष 16-20 आयु समूह के पीड़ितों का प्रतिशत कम पाया जाना यह इंगित करता है कि इस आयु समूह के हरिजनों के विरूद्ध अहस्तक्षेपीय अपराध करने की कोशिश सामान्य

तालिका संख्या § 14 § अहस्तक्षेपीय अपराधों में पीड़ित, अपराधी एवं साक्षियों का आयु के अनुसार वर्गीकरण § प्रतिशत में §

क्र0 सं0	आयु समूह	पीड़ित प्रतिशत	अपराधी प्रतिशत	साक्षी प्रतिशत
1.	05-10	01	-	-
2.	10-15	01	01	-
3.	16-20	06	17	06
4.	21-25	18	19	20
5.	26-30	13	21	18
6.	31-35	13	13	13
7.	36-40	26	12	17
8.	41-45	09	06	16
9.	46-50	09	07	02
10.	51-55	01	01	03
11.	56-60	03	02	02
12.	61-65	--	01	01
13.	66-70	--	01	01
14.	70-75	--	--	01
	100	100	100	100

व्यक्ति कम करते हैं और इस आयु समूह के हरिजन युवकों में सामाजिक जागरूकता पायी जाती है । वर्ष 20-40 आयु समूह में कुल पीड़ितों का प्रतिशत 70 पाया गया है । इसी आयु समूह के अपराधियों का प्रतिशत 65 एवं साक्षियों का प्रतिशत 68 पाया गया है । इसका कारण यह है कि जनपद झाँसी में 20-40 आयु समूह के व्यक्ति ही अधिकांशतया न्यायिक गतिविधियों से सम्बन्धित हैं । 40 वर्ष की आयु के ऊपर के व्यक्ति पीड़ित एवं अपराधियों की अपेक्षा साक्षियों के रूप में अधिक पाये गये हैं । 40 साल से अधिक आयु के पीड़ितों का 22 प्रतिशत अपराधियों का 17 प्रतिशत एवं साक्षियों का 26 प्रतिशत पाया गया है । आज भी जनपद में अधिक आयु के साक्षियों का पाया जाना यह प्रदर्शित करता है कि बुजुर्गों की न्याय प्रशासन में महत्वपूर्ण भूमिका है । वर्तमान अध्ययन में 75 वर्ष की आयु के साक्षी न्यायालयों में परीक्षित हुये हैं इसके विपरीत 60 वर्ष से अधिक का कोई पीड़ित एवं 65 वर्ष से अधिक आयु का कोई अपराधी वर्तमान अध्ययन में उपलब्ध नहीं हुआ है । इसका कारण यह भी है कि बुजुर्ग व्यक्तियों पर प्रत्यक्ष रूप से कोई पारिवारिक उत्तरदायित्व नहीं रहता है और उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा रहती है । अतः इस आयु के व्यक्तियों के पास न्यायिक गतिविधियों के लिये समय एवं प्रतिष्ठा दोनों ही होती हैं । जनपद झाँसी में औपचारिक न्याय पंचायत व्यवस्था का कोई विशेष अस्तित्व नहीं है । सामान्य व्यक्तियों में पंचायत के प्रति अरूचि विभिन्न कारणों से पाई गयी है । इसलिये ग्रामीण बुजुर्ग अनौपचारिक पंचायतें करने साथ ही न्यायिक प्रक्रिया में योगदान देते हैं । इसका एक कारण यह भी है कि अधिक आयु के व्यक्ति अनुभवशील होते हैं और ग्रामीण लोग इनके अनुभव का लाभ उठाने का प्रयत्न करते हैं ।

अपराध के सन्दर्भ में सामाजीकरण का महत्वपूर्ण योगदान होता है । वर्तमान अध्ययन में प्राप्त पीड़ित एवं अपराधियों की आयु की सापेक्षता की

तालिका संख्या ॥ 15 ॥ में प्रदर्शित किया गया है । अपराधियों एवं पीड़ितों को 15-25, 26-35, 36-45, 46-55 एवं 56 के आयु समूहों में वर्गीकृत किया गया है । प्रत्येक आयु समूह के पीड़ितों के विरुद्ध अपराधियों के आयु समूहों का सापेक्ष विश्लेषण करने से स्पष्ट होता है कि 15-25 वर्ष आयु समूहों के पीड़ितों के विरुद्ध इसी आयु वर्ग के अधिकतम अपराधी पाये गये हैं । 26-35 वर्ष आयु समूह के 22.22 प्रतिशत, 46-55 आयु समूह के 11.11 प्रतिशत एवं 56 के ऊपर के मात्र 3.70 प्रतिशत अपराधी पाये गये हैं । वर्ष 36 से 45 आयु समूह के अपराधियों का प्रतिशत इस वर्ग के पीड़ितों के विरुद्ध शून्य पाया गया है । इसका कारण यह है कि इस आयु वर्ग के अपराधी स्वयं अपराध न करके अपराध का उत्प्रेरण करते हैं । इसका दूसरा कारण यह भी है कि 36-45 आयु समूह के व्यक्ति के पास बच्चों की शादी, रोजगार आदि सर्वाधिक उत्तरदायित्व रहते हैं और प्रत्यक्ष रूप से विवादों से दूर रहना चाहते हैं ।

तालिका संख्या ॥ 15 ॥ का अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि 56 वर्ष से अधिक आयु वर्ग का पीड़ित प्रतिशत शून्य पाया गया है और इसके विरुद्ध 56 वर्ष से अधिक आयु वर्ग के अपराधी वर्तमान अध्ययन में पाये गये हैं । इस तालिका से यह भी स्पष्ट होता है कि अहस्तक्षेपीय अपराधों के अधिकतर अपराधी प्रत्येक आयु समूह के पीड़ितों के विरोध में 15-35 वर्ष आयु समूह के है । वर्तमान अध्ययन में अधिक आयु के अपराधी अधिकांशतयासमान आयु के पीड़ितों के विरुद्ध अपराधी हैं ।

सिंह ॥ 1967 ॥ ने अपने अध्ययन में यह पाया है कि ठाकुरों एवं नये निम्न जाति के लोगों में अधिक तनाव है । अधिक आयु के अपराधियों के कम पाये जाने का कारण यह भी है कि अधिकतर उच्च जातियों के व्यक्ति अधिक आयु में स्वयं कृषि कार्य नहीं करते हैं ।

तालिका संख्या । 15 । विभिन्न आयु समूह के पीड़ितों के विरुद्ध अपराधियों का आयु समूह के आधार पर वर्गीकरण । प्रतिशत में ।

क्र० सं०	पीड़ित का आयु समूह	अपराधी का आयु समूह				
		15-25	26-35	36-45	46-55	56 से ऊपर
1.	15-25	62.96	22.22	-	11.11	3.70
2.	26-35	41.17	47.05	5.88	5.88	-
3.	36-45	30.55	38.88	25.00	2.77	2.77
4.	46-55	37.50	25.00	25.00	12.50	-
5.	56 से ऊपर	-	-	-	-	100

सामान्यतया यह कार्य अन्य सदस्य करते है । श्रीनिवास । 1973 । के अनुसार भी एक सम्पन्न व्यक्ति स्वयं खेती का कार्य नही करता है अपितु उसके लड़के, सेवक अथवा आसामी उसको कृषि का कार्य करते है ।

वर्तमान अध्ययन मैं पाये गये पीड़ितों का न्यायालय मैं अपराधियों के प्रति दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति का दृष्टिकोण तालिका संख्या । 16 । मैं प्रदर्शित किया गया है यह वर्गीकरण पीड़ितों की आयु परआधारित है । इस तालिका मैं प्राप्त पारणामों से स्पष्ट होता है कि कम आयु के पीड़ित अपराधियों को दण्ड दिलाने मैं अपेक्षाकृत अधिक उत्सुक रहे हैं । इसके सापेक्ष पीड़ितों की आयु मैं वृद्धि के साथ दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति उनमें कम होती गयी है । अर्थात उम्र के बढ़ने के साथ पीड़ितों मैं अहस्तक्षेपीय अपराधियों को दण्डित कराने की प्रवृत्ति कम पाई गई है । पीड़ित द्वारा स्वयं लिखाई गई प्रथम सूचना रिपोर्ट एवं विवेचनाधिकारी को दिये गये साक्ष्य के विपरीत ऐसा साक्ष्य जिससे अपराधी को दण्ड न मिल सके, देने की प्रवृत्ति कम आयु के पीड़ितों के सापेक्ष अधिक आयु के पीड़ितों मैं अधिक पाई गई है । इसका कारण यह है कि बुजुर्ग पीड़ित यह महसूस करते है । कि अपराधी को दण्ड मिलने से उन्हें कुछ प्राप्त नहीं होगा इसके विपरीत उन्हें सम्पन्न अपराधियों से आर्थिक, सामाजिक एवं शारीरिक क्षति की सम्भावना रहती है । इसका एक कारण यह भी है कि पीड़ितों के सही कथन विवेचनाधिकारी द्वारा नहीं लिखे जाते हैं । जनचर्चा के अनुसार प्रथम सूचना रिपोर्ट भी कभी-कभी पीड़ित की इच्छाओं के विपरीत लिखी जाती है । समझौता करने की प्रवृत्ति लगभग सभी आयु समूहों के पीड़ितों मैं समान पाई गयी है । इससे यह स्पष्ट होता है कि ग्रामीण समुदाय मैं अधिकांश व्यक्ति समझौता पर विश्वास करते हैं । यह प्रवृत्ति ग्रामीण समुदाय मैं प्राथमिक सम्पर्क समान हित एव सामाजिक व्यवस्था के कारण स्वाभाविक है । तालिका संख्या । 16 । के विश्लेषणसेयह निष्कर्ष

तालिका संख्या ॥ 16 ॥ वर्तमान अध्ययन में पीड़ितों की आयु के आधार पर उनके साक्ष्य का विवरण

॥ प्रतिशत में ॥

क्रम संख्या	साक्ष्य की प्रकृति	पीड़ित की आयु				
		15-25	26-35	36-45	46-55	56 से ऊपर
1.	समर्थन	40	30	20	10	—
2.	विरोध	15	20	25	20	20
3.	राजीनामा	20	25	20	21	14

निकलता है कि जनपद झांसी में अधिक आयु के पीड़ित सदभाव पूर्ण वातावरण बनाने की प्रवृत्ति वाले हैं और यह निश्चित रूप से ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में सम्भव हो सकता है।

सामाजीकरण प्रत्येक समाज में महत्वपूर्ण कारक होता है। पीड़ित एवं अपराधी के सापेक्ष ही साक्षियों की आयु का भी महत्वपूर्ण प्रभाव न्याय व्यवस्था पर पड़ता है। साक्षियों को 15 से 25, 26 से 35, 36 से 45, 46 से 56, एवं 56 वर्ष से ऊपर के आयु वर्गों में विभक्त करके पीड़ितों को समर्थन याविरोध करने की प्रवृत्ति का वर्गीकरण तालिका संख्या 17 में प्रदर्शित किया गया है। इस तालिका में प्राप्त परिणामों के अनुसार 15 से 25 एवं 26 से 35 आयु वर्गों के साक्षी अपराधी को दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति रखते हैं। इसके विपरीत 36 से 45 वर्ष आयु समूह के साक्षी अधिकतम अपराधी को दण्ड से बचाने की प्रवृत्ति रखते हैं। 45 वर्ष से अधिक आयु के साक्षी अपराधी को दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति वाले पाये गये हैं। इसका कारण यह है कि इस आयु समूह के साक्षियों का सामाजिक उत्तरदायित्व अपेक्षाकृत कम होता है और उनके पास विवादों में उलझने के लिए पर्याप्त समय होता है। 15 से 25 एवं 36 से 45 वर्ष आयु समूह के साक्षी अपरीक्षित रहे हैं। इसका कारण इन आयु समूहों के साक्षियोंका रोजगार के सम्बन्ध में अपने निवास स्थान से बाहर जाना है। इसका कारण यह भी है कि जनपद झांसी के ग्रामीण क्षेत्रों में उद्योग-धंधों की कमी है। अधिकांशतया ऐसे व्यक्ति जो शिक्षित है या मजदूरी-कारीगरी या अन्य विशेष योग्यता के कार्य करने के योग्य हैं, गांव छोड़कर रोजगार की तलाश में बाहर चले जाते हैं (तालिका 17)।

अपराधियों की संख्या एवं आयु का पीड़ित की आयु के सापेक्ष विश्लेषण करने पर ज्ञात हुआ है कि 80 प्रतिशत ऐसे वाद हैं जिनमें अपराधी 2 या इससे अधिक रहे हैं तो पीड़ित ने समझौता किया है। समझौता आयु

तालिका संख्या । 17 । साक्षियों का आयु के आधार पर साक्ष्य का मूल्यांकन (प्रतिशत में)

क्रम संख्या	साक्ष्य की प्रकृति	पीड़ित की आयु				
		15-25 वर्ष	26-35 वर्ष	36-45 वर्ष	46-55 वर्ष	56 वर्ष से ऊपर
1.	समर्थन	36.35	36.36	9.09	18.18	-
2.	विरोधी/ विरोधाभासी	13.33	26.66	40	6.66	13.33
3.	अपरीक्षित	50	-	50	-	-

का कोई उल्लेखनीय अन्तर प्राप्त नहीं हुआ है इसका कारण यह है कि अनेकों अपराधी अहस्तक्षेपीय वादों में सभी आयु समूह के पाये गये हैं। जिनमें अनेकों कारणों से पीड़ितों ने राजीनामा किया है। कम आयु के अपराधियों के वादों में अधिकांशतया अधिक आयु के पीड़ितों ने अपराधियों के हित में साक्ष्य दिया है। इनमें अपराधियों को दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति नहीं पाई गयी है। इससे यह स्पष्ट होता है कि अधिक आयु के पीड़ित या तो सामान्जस्य की प्रवृत्ति रखते हैं या वे जवान अपराधियों से भयभीत रहते हैं। अपराधियों की आयु के सापेक्ष इन्हें दण्ड दिलाने योग्य साक्ष्य देने वाले पीड़ितों के विश्लेषण में 0,60 प्रतिशत पीड़ित अपराधी के ही आयु समूह के पाये गये हैं।

5ख विश्लेषण

वर्तमान अध्ययन में स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर है कि जनपद झाँसी में जाति व्यवस्था का न्यायिक प्रक्रिया पर प्रभाव है। ब्राह्मण अपराधियों के विरोध में साक्ष्य देने की प्रवृत्ति उच्च वर्ग के साक्षियों की अपेक्षा न्यून वर्ग के साक्षियों में क्रमशः बढ़ती हुई पाई गयी है। ब्राह्मण अपराधियों के अहस्तक्षेपीय अपराधों के अभियोग में हरिजन साक्षी प्रायः हरिजन पीड़ितों का अधिक समर्थन करते हैं। इसके विपरीत पिछड़े वर्ग के साक्षी एवं उच्च वर्ग के साक्षियों में हरिजनों के समर्थन की प्रवृत्ति क्रमशः कम पाई गयी है। ब्राह्मणों की अपेक्षा क्षेत्रीय अपराधों के विरोध में हरिजन साक्षियों द्वारा साक्ष्य देने की प्रवृत्ति अधिक पाई गई है इस प्रकार प्रत्येक जाति के अपराधियों को दण्ड दिलाने का प्रवृत्ति साक्षी की जाति के अनुसार परिवर्तित पाई गयी है। यह बात निर्विवाद रूप से सत्य है कि साक्ष्य से न्यायिक प्रक्रिया प्रभावित होती है। अतः यह कहा जा सकता है कि जाति व्यवस्था न्यायिक व्यवस्था से प्रभावित करती है। कुछ व्यवसायिक जातियों के साक्षी अपने व्यवसायों को प्रमुखता देते हैं और अपनी जाति के

व्यक्तियों का समर्थन नहीं करते हैं । व्यवसायिक जातियाँ वे अपराधी समझौता करते हैं । साक्षियों में विशिष्ट जातियों के समर्थन एवं विरोध की प्रवृत्ति साक्षियों में पाई गयी है । सेवक जातियाँ जैसे नाई, लुहार, बढ़ई आदि के प्रति उच्च जातियों के व्यक्तियों में अधिक सहानुभूति पाई गयी है । अधिकांशतया पीड़ित एवं साक्षी अशिक्षित पाये गये हैं । हाई-स्कूल स्तर के शिक्षित अपराधियों में उचित निर्देशन के अभाव में अपराधी प्रवृत्ति अधिक पायी गयी है । उच्च शैक्षिणिक स्तर के व्यक्तियों का न्याय प्रक्रिया से सम्बन्ध नगण्य पाया गया है और उनका मात्र । प्रतिशत है । अल्प स्तर की शिक्षा अहस्तक्षेपीय अपराध रोकने में असफल सिद्ध हुई है । अशिक्षितों की अपेक्षा शिक्षित पीड़ित अपराधियों को दण्ड दिलाने की अधिक प्रवृत्ति रखते हैं । समझौता की प्रवृत्ति अशिक्षित पीड़ितों में अधिक पायी गयी है । शिक्षित साक्षी अशिक्षित साक्षियों की अपेक्षा दण्ड दिलाने में कम प्रवृत्ति है । शिक्षित साक्षी सामान्यतया उच्च वर्गों के हैं, किन्तु यदि साक्ष्य दिया है तब यह अशिक्षित साक्षियों के साक्ष्य की अपेक्षा दण्ड दिलाने में अधिक प्रभावी रहा है । इस प्रकार शिक्षा का प्रभाव भी न्यायिक प्रक्रिया पर अनुभव किया जाता है ।

वर्तमान अध्ययन में पीड़ितों की अपेक्षा अपराधी कम आयु के पाये गये हैं । अधिकांशतया विवाद समान आयु के पीड़ित एवं अपराधियों में पाये गये हैं । 15 वर्ष से कम आयु के बालक पीड़ितों के रूप में इसी आयु के अपराधियों की अपेक्षा अधिक पाया जाना यह दर्शाता है कि हरिजन बालक कम आयु में कृषि कार्य या मजदूरी में लग जाते हैं जिसका कारण इनकी दरिद्र आर्थिक स्थिति है । साक्षियों के रूप में अधिक आयु के व्यक्ति अधिक प्रतिशत में पाये गये हैं किन्तु यह साक्षीगण अपराधियों को दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति नहीं रखते हैं ।

वर्तमान अध्ययन में अधिकतर अपराधी युवा पाये गये हैं । अधिक आयु के अपराधियों द्वारा कारित अहस्तक्षेपीय वादों में पीड़ित किये गये व्यक्ति भी अधिक आयु के पाये गये हैं । अधिक आयु के पीड़ितों में दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति क्रमशः कम होती गयी है । इससे स्पष्ट होता है कि जनपद झाँसी के बुजुर्गों में समझौतावादी दृष्टिकोण है और उनमें क्षमा करने की प्रवृत्ति विद्यमान है । साक्षियों में लगभग यही प्रवृत्ति पायी गयी है । जिन वादों में अपराधी संख्या में अधिक रहे हैं, उन वादों में सामान्यतया पीड़ित ने राजीनामा किया है । वर्तमान अध्ययन से स्पष्ट है कि कम आयु के अपराधियों को दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति अधिक आयु के पीड़ितों में न्यून पायी गयी है । अधिकांशतया संघर्ष समान आयु पर अधिकतम पाये गये हैं ।

उपर्युक्त सम्पूर्ण विवरणों से स्पष्ट है कि एक दृश्य गन्तव्य तक सामाजिक कारकों का उचित प्रभाव न्यायिक प्रक्रिया पर है । इसका विभम तालिका संख्या ॥ 16 ॥ एवं ॥ 17 ॥ से स्पष्ट है कि 46 से 55 वर्ष आयु समूह में पीड़ितों का 20 प्रतिशत अहस्तक्षेपीय अपराधों के सम्बन्ध में विरोध में पाया गया है । इसी आयुसमूह के अन्तर्गत साक्षियों का अहस्तक्षेपीय अपराध से सम्बन्धित मात्र 6.66 प्रतिशत रहा है । इन आंकड़ों में सांख्यकीय तुलनात्मक दृष्टि से लगभग 3 गुने से अधिक का अन्तर है और यह तथ्य इस बात का सूचक है कि व्यवसायिक एवं सामाजिक उत्तर-दायित्व से व्यक्ति सामान्यतया 25-45 वर्ष की आयु तक संबंधित रहता है एवं इसके पश्चात उसका उत्तरदायित्व एवं कार्य क्षेत्र विश्राम तथा राजनैतिक क्रिया कलापों में रहता है । बुन्देलखण्ड की प्राचीन परम्परागत अलाव एवं चौपाल का हर ग्राम में विद्यमान रहना सामान्य व्यवस्था है । इन्हीं स्थानों के सामान्यतया 40 वर्ष से अधिक आयु के व्यक्तियों का सांयकाल एकत्रित होना समाज-धार्मिक व्यवहार है ।

बुन्देलखण्ड क्षेत्र में इस व्यवस्था का उपयोग निसन्देह रूप से अहस्तक्षेपीय अपराधों के सम्बन्ध में विद्यमान है। यह तथ्य स्पष्ट रूप से अध्याय के उपसंहार में वर्णनीय है कि इस आयु समूह के व्यक्तियों के आचरण एवं अन्य सामाजिक कारकों के कारण न्याय व्यवस्था अहस्तक्षेपीय अपराधों के सम्बन्ध में उचित निर्णय नहीं ले पाती है। न्याय के सन्दर्भ में साक्षियों द्वारा विरोधी साक्ष्य देना अहस्तक्षेपीय अपराधों की विभवता को कम करता है। अपराधिक न्यायिक प्रक्रिया में अपराधी पीड़ित एवं साक्षी विशेष रूप से सम्बन्धित रहते है। अहस्तक्षेपीय अपराधों में पीड़ित राज्य का पक्ष होता है और राज्य की ओर से अपराधी का भी अभियोजन किया जाता है। यदि अनुसूचित जाति अथवा अनुसूचित जनजाति के व्यक्तियों के विरूद्ध इन्हीं जातियों के व्दारा अपराध किये गये होते हैं तब राज्य की ओर से पीड़ित का प्रतिनिधित्व नहीं किया जाता है। इसी प्रकार सवर्ण व्यक्तियों व्दारा सवर्ण पीड़ितों के विरूद्ध किये गये इस प्रकार के अपराधों में राज्य अपराधी का अभियोजन नहीं करता है। इसके विपरीत यदि सवर्णों व्दारा अनुसूचित जाति या जनजाति के व्यक्तियों के विरूद्ध अहस्तक्षेपीय अपराध कारित किये जाते हैं तो सम्बन्धित पुलिस अधिकारी सक्षम मजिस्ट्रेट से विवेचना की अनुमति लेकर अपराध की विवेचना करता है, और राज्य की ओर से अपराधी का अभियोजन किया जाता है। विवेचना एवं अभियोजन में साक्ष्य का सर्वाधिक महत्व होता है। अपराधी, पीड़ित एवं साक्षी की सामाजिक परिस्थितियों का सम्पूर्ण न्यायिक प्रक्रिया में प्रत्येक स्तर पर प्रभाव पड़ता है। अपराधी के अपराध को सिद्ध करने में पीड़ित एवं साक्षियों के साक्ष्य तथा परिस्थितिजन्य साक्ष्य ही निर्णायक होते हैं। पीड़ित एवं साक्षियों का परीक्षण न्यायालयों में विधि के प्राविधानों के अनुसार ही किया जाता है।

उपर्युक्त वर्णित सम्पूर्ण व्याख्याओं के आधार पर यह निष्कर्ष प्रस्तावित होता है कि सामाजिक व्यवस्थाओं एवं न्यायिक प्रक्रिया स्पष्ट अर्थों में एक दूसरे से संलग्न हैं। विभिन्न क्षेत्रीय सामाजिक कारकों का प्रभाव न्यायिक प्रक्रिया के सन्दर्भ में वर्तमान अध्याय की उपलब्धियों के अन्तर्गत निहित है। वर्तमान शोध कार्य के समकक्ष समरूपता रखने वाले शोध पत्रों के अभाव में उपलब्ध तथ्यों का तुलनात्मक अध्ययन सम्भव प्रतीत नहीं हुआ। इस दिशा में जो भी शोध पत्र आंशिक समता रखने वाले प्राप्त हुये हैं, उन्हीं के आधार पर प्रस्तुत अध्याय के तथ्यों का मूल्यांकन किया जा सका। विधि के समाजशास्त्र को सरलीकृत करने की दिशा में इन उपलब्धियों को प्रारम्भिक सूचनाओं की दिशा में आधार प्रदान किया जा सकता है।

=:=:=:=:=:=:=:=:=

अध्याय - ४

न्याय प्रणाली एवं अर्थ व्यवस्था

१. सामान्य विवरण
२. आर्थिक कारक
३. विश्लेषण

1. सामान्य विवरण
============

परम्परागत भारतीय समुदायों में व्यवसाय जाति से निर्धारित होते थे। इसमें कुछ अपवाद भी हो सकते थे। इस व्यवस्था के अन्तर्गत कुछ अच्छे एवं लाभदायक कार्य विशिष्ट जातियों को ही करने की अनुमति थी। इसके विपरीत निम्न जातियों को अलाभकारी व्यवसाय करने पड़ते हैं। व्यवसाय से धनोपार्जन होता है और इससे सामाजिक प्रतिष्ठा भी प्राप्त होती है। वर्तमान भारतीय समुदाय में धन का विशेष महत्त्व है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में धन का विशेष प्रभाव है एवं बदलते हुये सामाजिक परिवेश में धन की आवश्यकता बढ़ गई है। कुछ मान्यताओं के अतिरिक्त सभी क्षेत्रों मे धन का प्रभाव बढ़ा है।

2. आर्थिक कारक
==========

वर्तमान शोध अध्ययन में आर्थिक कारकों का प्रभाव न्यायिक प्रक्रिया पर देखने का प्रयास किया गया है। वर्तमान सर्वेक्षण में व्यवसाय के आधार पर अहस्तक्षेपीय वादों के पक्षकारों की स्थिति तालिका संख्या 18 में प्रदर्शित की गयी है। इस तालिका के अनुसार 82 प्रतिशत अपराधी, 55 प्रतिशत पीड़ित एवं 67 प्रतिशत साक्ष्य खेती से सम्बन्धित हैं। प्राप्त तथ्यों से यह स्पष्ट है कि पीड़ित, अपराधी एवं साक्ष्य सभी अधिकांश कृषि व्यवस्था पर आधारित है। इसका कारण हरिजनों को जमीन पर कब्जा शासकीय प्रयासों के फलस्वरूप मिला है। अतः स्वाभाविक रूप से उनमें कृषि व्यवसायिक आपसी झगड़े होते हैं। अहस्तक्षेपीय विवादों में कृषक समुदाय की अधिकतम सम्बद्धता का कारण यह भी है कि खेत पास-पास हैं। रास्ते पालतू जानवरों के लिए घास के मैदान आदि सभी सामूहिक हैं। इन सभी सामूहिक साधनों का उपयोग एक समय किया जाता है। सामान्यतया सांय काल सभी किसानों कोअपने हल बैल लेकर घरों को वापिस आना होता है एवं प्रातः काल एक ही समय पर खेतों पर वापिस जानापड़ता है। खेतों का जुताई, बुआई, सिंचाई, कटाई, आदि सभी कार्य एक समय पर होते हैं। अतः इस प्रतिस्पर्धा में

तालिका संख्या ‡ 18 ‡

अध्ययनगत व्यक्तियों का व्यावसायिक वर्गीकरण

क्रम संख्या	कार्य	पीड़ित प्रतिशत	साक्षी प्रतिशत	अपराधी प्रतिशत
1.	कृषि	55	67	82
2.	मजदूरी	28	25	5
3.	नौकरी	5	2	4
4.	दुकानदारी	4	2	4
5.	घरेलू कार्य	4	-	1
6.	विद्यार्थी	3	-	3
7.	बेरोजगार	1	-	0.5
8.	जानवर चराना	-	-	0.5
9.	अन्य कार्य	-	4	-
	योग	100%	100%	100%

विवाद होना स्वाभाविक है। सामान्यतया अभियुक्त पीड़ितों की अपेक्षा अच्छी आर्थिक स्थिति में रहते हैं। वर्तमान अध्ययन में पीड़ित 28 प्रतिशत मजदूर हैं जबकि अपराधी का मात्र 5 प्रतिशत ही मजदूर है। नौकरी एवं दुकानदारी से सम्बन्धित पीड़ित व अपराधी समान प्रतिशत में हैं। जबकि इन व्यवसायों के व्यक्तियों का साक्षियों के रूप में बहुत कम प्रतिशत प्राप्त हुआ है। इससे स्पष्ट है कि जनपद झांसी में इन व्यवसायों के व्यक्ति अपने कार्य में अधिकरुचि लेते हैं और न्यायालयों में फौजदारी के वादों में आने की इनकी प्रवृत्ति बहुत कम है। इसके अतिरिक्त हड्डी का काम सिंचाई, कारीगरी एवं ठेकेदारी व्यवसायों से सम्बन्धित व्यक्ति न तो पीड़ित हैं और न अपराधी हैं। यद्यपि इनका बहुत कम प्रतिशत साक्ष्य के रूप में अवश्य है जिससे स्पष्ट है कि यह कोई स्वतंत्र व्यवसाय नहीं है बल्कि अन्य व्यवसायों का सहायक है। इसलिए इनका व्यवसायों के प्रतिनिधियों का प्राप्त प्रतिशत साक्षियों में है। सामान्यतः जनपद झांसी में विभिन्न जातियों के व्यक्ति अपने विशेषीकृत व्यवसायों के अतिरिक्त कुछ कृषि कार्य करते हैं। मजदूर वर्ग के व्यक्तियों के पास भी बहुत कम कृषि भूमि है और अतिरिक्त आमदनी हेतु कृषि कार्य के अतिरिक्त मजदूरी भी करते हैं। जनपद झांसी के ग्रामीण क्षेत्रों में बहुत कम व्यक्ति ऐसे हैं जो कृषि नहीं करते हैं। यह बात भी सत्य है कि अनेकों के पास पर्याप्त कृषि भूमि नहीं है। अतः कृषि के अतिरिक्त अन्य कार्यों पर जीविकोपार्जन हेतु निर्भर होना पड़ता है।

सामान्यतः पीड़ितों में उच्च वर्ग के अपराधियों को दण्डित कराने हेतु न्यायालयों में क्या रूख अपनाया है इसका अध्ययन करने पर जो निष्कर्ष प्राप्त हुये हैं उन्हें तालिका संख्या (19) में प्रदर्शित किया गया है। इस तालिका के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि अधिकांश पीड़ित न्यायालयों में अपराधी को दण्ड नहीं दिलाना चाहते हैं। वह सामान्य रूप से राजीनामा करते हैं, विरोधी ब्यान देते हैं अथवा अन्य कारणों से उन्हें न्यायालय में परीक्षित नहीं किया जाता है। तालिका से स्पष्ट है

तालिका संख्या ॥ 19 ॥ ऐसे अहस्तक्षेपीय वाद जिनमें अपराधी कृषक हैं, उनमें पीड़ितों द्वारा दण्ड दिलाने का विवरण व्यवसाय पर आधारित ॥ प्रतिशत में ॥

क्रम संख्या	पीड़ितों की न्यायालय में दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति	पीड़ितों का व्यवसाय के आधार पर वर्गीकरण						
		कृषि	मजदूरी	दुकानदारी	नौकरी	विद्यार्थी	घरेलू कार्य	बेरोजगारी
1.	राजीनामा/ विरोधीब्यान	57.44	47.6	100	-	50	-	-
2.	समर्थन	36.17	42.85	-	100	-	-	-
3.	अपरीक्षित	6.38	9.52	-	-	50	-	-
	योग	100	100	100	100	100	-	-

कि अधिकांश पीड़ितों में अपराधी को दण्ड दिलाने के योग्य साक्ष्य नहीं दिया है। इसका कारण यह है कि पीड़ित व अपराधी दोनों समान व्यवसायिक हितों के कारण शत्रुता बढ़ाने की अपेक्षा समझौता करने की प्रवृत्ति रखते हैं। यह तथ्य जातिगत भावनाओं से निहित प्रतीत होता है। इसी तालिका में मजदूर पीड़ितों का अध्ययन करने यह स्पष्ट होता कि कृषि व्यवसायी पीड़ितों की अपेक्षा, अपराधियों को दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति अधिक रखते हैं।

सभी दुकानदार पीड़ितों ने कृषक अपराधियों से समझौते किये हैं जो इंगित करता है कि दुकानदार व्यक्ति किसी न किसी प्रकार से उलझने की अपेक्षा, सुलझने पर अधिक विश्वास करता है। दुकानदार व्यक्तियों में पाई गई इस प्रवृत्ति के और भी कारण है जैसे उसके व्यापारिक हित एवं अन्य व्यक्तियों को उसकी दैनिक उपयोगिता। नौकरी वाले पीड़ित सवर्ण कृषक अपराधियों को दण्ड दिलाने की पूरी कोशिश करते हैं जिसका कारण नौकरी वाले पीड़ितों में सामाजिक चेतना, शिक्षा, एवं उनकी आर्थिक सम्पन्नता भी है। विद्यार्थी पीड़ित पूर्णतः समझौता वादी पाये गये हैं। इस तथ्य की पुष्टि सामान्य चर्चा के अन्तर्गत उत्तरदाताओं से की गई है। उत्तरदाताओं का सामान्य रूप से यह स्पष्ट मत है कि विद्यार्थी वर्ग को किसी भी प्रकार से अपराध में रूचि नहीं लेना चाहिए। इससे उनकी शिक्षा तथा भविष्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। अनेकों पीड़ित विद्यार्थियों में आंतरिक रूप से प्रति शोध लेने की प्रवृत्ति पाई गई किन्तु वे चाहते हुये भी अपने परिवार जनों व सामाजिक दबाव के कारण अपराधियों से राजीनामा करने को मजबूर हुये। इस तालिका में प्राप्त विभिन्न वर्गों की व्यवसायिक सम्बद्धता स्पष्ट रूप से न्यायिक प्रक्रिया में अपना योगदान प्रदर्शित करती है।

ऐसे अहस्तक्षेपीय वाद जिनमें अपराधी कृषक था एवं पीड़ित किसी भी व्यवसाय का था उनमें साक्षियों का व्यवसाय के आधार पर

वर्गीकरण करने पर जो निष्कर्ष प्राप्त हुये उनको तालिका संख्या ‡20‡ में प्रदर्शित किया गया है । इनमें अधिकतर साक्षी कृषक ही पाये गये है । इससे ऐसा प्रतीत होता है कि ये साक्षी अपने समान व्यवसाय के अपराधियों की सहायता करने में उत्सुक रहते हैं । संबन्धित साक्षियों की दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति का पुनः अध्ययन एवं वर्गीकरण किया गया और उसमें प्राप्त हुए निष्कर्षों में तालिका संख्या ‡ 21 ‡ में प्रदर्शित किया गया है । इस तालिका से प्राप्त सूचनाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि अहस्तक्षेपीय वादों में कृषक अपराधियों को दण्ड दिलाने प्रवृत्ति कृषक साक्षियों में मजदूर साक्षियों की अपेक्षा अधिक पाई जातीहै । वर्तमान शोध अध्ययन के पूर्व तक सम्भावतया अविश्लेषित परिणाम यह प्राप्त होता है कि जो मजदूर सामान्यतः निम्न आर्थिक स्थिति के होते हैं वे भी हरिजन पीड़ितों का समर्थन न करके उच्च वर्ग के अपराधियों की सहायता करते हैं एवं उन्हें दण्ड से बचाने की प्रवृत्ति इन साक्षियों में पाई जाती है । इसका कारण यह भी है कि मजदूर साक्षियों की आजीविका सम्पन्न अपराधियों पर निर्भर रहती है । और इसीलिए स्वाभाविक है कि इन साक्षियों में जाति और धर्म का कोई महत्व नहीं है और इनके आर्थिक हित प्रमुख भूमिका अदा करते हैं । व्यापारी साक्षी यद्यपी बहुत कम प्रतिशत में पाये गये हैं फिर भी इनमें दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति पाई गई है ।

ऐसे अहस्तक्षेपीय वाद जिनमें अपराधी एवं पीड़ित दोनों ही कृषक थे । में साक्षियों का व्यवसाय के आधार पर वर्गीकरण करने से जो निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं, उन्हें तालिका संख्या ‡ 22 ‡ में प्रदर्शित किया गया है । इस तालिका से स्पष्ट होता है कि अधिकांश साक्षी कृषि व्यवसायी हैं अन्य व्यवसायी अत्यल्प हैं इसका कारण व्यवसाय की समीपता ही प्रतीत होती है । इसका कारण यह भी है कि अधिकांश

तालिका संख्या 20 ऐसे वाद जिनमें अपराधी का व्यवसाय खेती था, साक्षियों का व्यवसाय के आधार पर वर्गीकरण

क्रम संख्या	उपलब्ध साक्षियों का व्यवसाय	प्रतिशत
1.	कृषि	71.41
2.	मजदूरी	26.78
3.	अन्य	1.78
	योग	100

तालिका संख्या ‖ 21 ‖ ऐसे वाद जिनमें अपराधी का व्यवसाय कृषि या उनमें साक्षियों का पीड़ित के सापेक्ष व्यवसायिक वर्गीकरण

क्रम संख्या	साक्षियों का व्यवसाय	पीड़ित का समर्थन	पीड़ित का विरोध	योग
1.	कृषि	50	50	100
2.	मजदूरी	20	80	100
3.	व्यापार	100	-	100

तालिका संख्या ‡ 22 ‡ ऐसे अहस्तक्षेपीय वाद जिनमें अपराधी कृषि व्यवसायी हैं एवं पीड़ित भी कृषि व्यवसायी हैं, साक्षियों का व्यवसाय के आधार पर वर्गीकरण‡प्रतिशत में‡

क्रम संख्या	उपलब्ध साक्षियों का व्यवसाय	पाया गया प्रतिशत
1.	कृषि	84.61
2.	मजदूरी	11.53
3.	व्यापारी	3.81
	यौग	100

अहस्तक्षेपीय वाद कृषि से सम्बन्धित कारणों से उत्पन्न होते हैं और ऐसी स्थिति में कृषक साक्षियों का उपलब्ध होना भी स्वाभाविक है ।

वर्तमान शोध अध्ययन से विस्तृत जानकारी प्राप्त करने की दिशा में अपराधी, पीड़ित एवं साक्षियों के व्यवसायिक आर्थिक स्तर के सापेक्ष वर्गीकृत कियागया है । तालिका संख्या (23) इसी क्रम में ऐसे अहस्तक्षेपीय वाद जिनमें अपराधी कृषि व्यवसायी था और पीड़ित मजदूर था तब साक्षियों की प्रवृत्ति, दण्ड दिलाने या न दिलाने का वर्गीकरण किया गया । ऐसे वादों में जो साक्षी उपलब्ध हुये हैं उनका प्रदर्शन तालिका संख्या (24) में किया गया है । इस तालिका से यह स्पष्ट होता है कि अधिकांश प्रतिशत साक्षीगण पीड़ित के व्यवसायिक समल्यता वाले थे । प्राप्त तथ्यों से स्पष्ट होता है कि मजदूर पीड़ितों के समर्थन में मजदूर साक्षी अपना सर्वाधिक योगदान करते हैं । जबकि कृषक साक्षी के मजदूर पीड़ितों का समर्थन की अपेक्षा विरोध करते हुये पाये गये हैं और इस तरह कृषक साक्षीगण कृषक अपराधी को दण्ड से बचाने की प्रवृत्ति रखते हैं । इससे यह स्पष्ट होता है कि यदि समान व्यवसाय के पीड़ित एवं साक्षी है तो साक्षियों का पीड़ितों के प्रति अधिकतम समर्थन पाया गया है । यदि अपराधी का व्यवसाय कृषि और पीड़ित दुकानदार था तब सभी अहस्तक्षेपीय वादों में राजीनामा हुआ और इससे यह स्पष्ट होता है कि दुकानदार व्यवसाय के व्यक्ति समझौतावादी अधिक होते है वह विवादों को आगे नहीं बढ़ाना चाहते हैं । यदि अपराधी कृषिवाला है और पीड़ित नौकरी करता है तब अहिस्तक्षेपीय वादों में साक्षियों के व्यवसाय के आधार पर अध्ययन करने पर यह पाया गया है कि इन वादों में अधिकतम प्रतिशत कृषक साक्षी हैं । तथा अन्य वर्ग के साक्षी कम पाये गये है" (तालिका संख्या 25)। इन साक्षियों की पीड़ित के समर्थन या विरोध की प्रवृत्ति का पुनः विश्लेषण किया

तालिका संख्या ‖ 23 ‖ ऐसे अहस्तक्षेपीय वाद जिनमें अपराधी कृषक था एवं पीड़ित मजदूर था, तब साक्षियों का व्यवसाय के आधार पर वर्गीकरण

‖ प्रतिशत में ‖

क्रम संख्या	साक्षियों का व्यवसाय	उपलब्ध संख्या ‖ साक्षियों की ‖ प्रतिशत में
1.	कृषि	25
2.	मजदूरी	75
	योग	100

तालिका संख्या ‡ 24 ‡ अहस्तक्षेपीय वाद जिनमें अपराधी कृषक एवं पीड़ित मजदूर था, साक्षियों का व्यवसाय के आधार पर पीड़ित के समर्थन या विरोध की प्रवृत्ति

‡ प्रतिशत में‡

क्रम संख्या	साक्ष्य की प्रवृत्ति	साक्षी का व्यवसाय	
		कृषि	मजदूरी
1.	समर्थन	33.33	100
2.	विरोध	66.66	-
	योग	100	100

तालिका संख्या ‖ 25 ‖ यदि अपराधी कृषक है और पीड़ित नौकरीवाला है तब साक्षियों की उपलब्धता ‖प्रतिशत में‖

क्रम संख्या	साक्षियों का व्यवसाय	उपलब्ध साक्षियों की संख्या ‖ प्रतिशत में ‖
1.	कृषि	66.66
2.	मजदूरी	33.33
	योग	100

गया और इससे ज्ञात परिणामों को तालिका संख्या ‡ 26 ‡ में प्रदर्शित किया गया है। इस तालिका से यह स्पष्ट होता है कि कृषक और मजदूर सभी व्यवसाय के साक्षी पीड़ितों का समर्थन करते हैं और अपराधियों को दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति रखते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि समाज में नौकरी करने वाले व्यक्तियों के प्रति सहानुभूति है और उनके प्रति होने वाले अहस्तक्षेपीय वादों में सभी साक्षीगण अपराधी को दण्ड दिलाना चाहते हैं। इससे समाज में बदलती हुई मान्यतायें दृष्टिगोचर होती है और ऐसा प्रतीत होता है कि जनपद झाँसी में नौकरी के व्यवसाय को सम्मीनबीय अन्य व्यवसायों की अपेक्षा माना जाता है।

कृषि के अतिरिक्त अहस्तक्षेपीय अपराधों के अन्य व्यवसाय के अपराधियों का अध्ययन करने पर पाया गया है कि जहाँ अपराधी नौकरी करता था और पीड़ित किसी भी व्यवसाय का था। ऐसे कुल 5 प्रतिशत वाद ही वर्तमान अध्ययन में पाये गये हैं। इन 5 प्रतिशत वादों में से पीड़ित के व्यवसाय के आधार पर यह वर्गीकरण किया गया कि उनमें दण्ड दिलाने या न दिलाने की क्या प्रवृत्ति है। इससे यह स्पष्ट होता है कि कृषि वाले पीड़ित नौकरी वाले अपराधी से समझौता करने की प्रवृत्ति अधिक रखते हैं और बहुत कम प्रवृत्ति अपराधियों को दण्ड दिलाने की कृषक पीड़ितों में पाई गई है। नौकरी वाले पीड़ित समझौता और दण्ड दिलाने का प्रवृत्ति बराबर रखते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि व्यवसाय का प्रभाव न्यायिक व्यवस्था पर होता है। क्योंकि इससे पूर्व वर्ग की तालिका में नौकरी वाले पीड़ित दण्ड दिलाने की सर्वाधिक प्रवृत्ति वाले पाये गये हैं। किन्तु जब अपराधी भी नौकरीवाला था तब नौकरी वाले पीड़ितों में, नौकरी वाले अपराधियों को दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति कम पाई गई है ‡ तालिका संख्या 27 ‡।

तालिका संख्या ॥ 26 ॥ अहस्तक्षेपीय वादों में जिनमें अपराधी कृषक है एवं पीड़ित नौकरी करता है साक्षियों में पीड़ित के समर्थन या विरोध की प्रवृत्ति का व्यवसाय के आधार पर वर्गीकरण ॥ प्रतिशत में ॥

क्रम संख्या	साक्ष्य की प्रवृत्ति	साक्षी का व्यवसाय	
		कृषि	मजदूरी
1.	समर्थन	100	100
2.	विरोध	-	-
	योग	100	100

तालिका संख्या ॥ 27 ॥ ऐसे अहस्तक्षेपीय वाद जिनमें अपराधी नौकरी करता था वहाँ पीड़ित के व्यवसाय के आधार पर, उसकी दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति का वर्गीकरण

॥ प्रतिशत में ॥

क्रम संख्या	साक्ष्य की किस्म	पीड़ित का व्यवसाय			
		कृषि	मजदूरी	दुकानदारी	नौकरी
1.	राजीनामा या विरोधी साक्ष्य	66.66	-	-	50
2.	समर्थन	33.33	-	-	50
	योग	100	-	-	100

नौकरी वाले अपराधियों का कोई विवाद दुकानदार या मजदूर पीड़ित से वर्तमान अध्ययन में नहीं पाया गया है। इसका कारण यह है कि नौकरी वाले अपेक्षाकृत अधिक शिक्षित होते हैं और व्यवसाय के कारण विवाद होने की इनमें न्यूनतम संभावना पाई जाती है। नौकरी वाले अपराधियों के सन्दर्भ में पीड़ितों की समझौता करने की प्रवृत्ति, नौकरी के प्रति सामाजिक प्रतिष्ठा के आभास की ओर इंगित करती है।

नौकरी वाले अहस्तक्षेपीय अपराधियों के वादों में (साक्षीयों के) समर्थन या विरोध की प्रवृत्ति [illegible] का विश्लेषण करने पर यह पाया गया कि वर्तमान अध्ययन में प्राप्त [illegible] आधे वादों में कोई साक्षी परीक्षित नहीं हुआ है। यह साक्षी मजदूर थे और परीक्षण हेतु उपलब्ध नहीं हुये जिसका लाभ अपराधी को मिला शेष आधे वादों में अपराधी एवं पीड़ित दोनों नौकरी वाले थे। और परीक्षित होने वाले साक्षी कृषि नौकरी वाले पाये गये। सभी साक्षियों में अपराधी को दण्डित कराने की प्रवृत्ति पाई गई और इससे पुनः इस तथ्य की प्रतिष्ठा होती है कि जनपद में नौकरी वालों के प्रति एक सहानुभूति पाई जाती है।

ऐसे अहस्तक्षेपीय वाद जहाँ अपराधी मजदूर था, पीड़ित का व्यवसाय के आधार पर अध्ययन किया गया और पाया गया कि इन वादों में पीड़ित अधिकांशतया मजदूर एवं घरेलू कार्य वाले पाये गये हैं। इसका स्वाभाविक कारण यह है कि मजदूर एवं घरेलू कार्य करने वालों से ही अधिकतम सम्बन्ध मजदूर अपराधियों का होता है। इस अध्ययन में जो परिणाम प्राप्त हुये हैं। पीड़ित के व्यवसाय के आधार पर, इनमें अपराधी को दण्डित कराने की प्रवृत्ति का पुनः विश्लेषण किया गया। प्राप्त तथ्यों से यह स्पष्ट होता है कि मजदूर अपराधियों से कृषक पीड़ित शत प्रतिशत समझौता करने की प्रवृत्ति रखते हैं अर्थात कृषक पीड़ित मजदूर अपराधियों को दण्डित नहीं कराना चाहते हैं।

इसका कारण यह हो सकता है कि अपराधी अपनी सेवाओं के द्वारा कृषकों को प्रसन्न कर लेते हैं । इसका एक कारण यह भी सम्भव है कि चतुर कृषक पीड़ित, इन मजदूर अपराधियों से समझौता करके उन्हें कृतार्थ करते हैं । इस क्षमादान के बदले पीड़ित इनका भविष्य में शोषण करते रहते हैं । मजदूर अपराधी के वाद में मजदूर पीड़ितों में दण्डित कराने और न कराने की प्रवृत्ति बराबर पाई जाती है । दुकानदार पीड़ित, मजदूर अपराधियों को दण्ड दिलाने की अधिकतम प्रवृत्ति रखते हैं । नौकरी वाले पीड़ित भी कृषक पीड़ितों की तरह मजदूर अपराधियों से शत-प्रतिशत समझौता करने की प्रवृत्ति रखते हैं । इसका कारण भी सम्भवतः यह हो सकता है कि यह पीड़ित मजदूर अपराधियों को अपने विश्वास में लेकर भविष्य में मजदूरों द्वारा सेवायें सुरक्षित करने का विश्वास रखते हैं । घरेलू कार्य करने वाले पीड़ितों में पचास प्रतिशत दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति पाई गई है। तालिका संख्या 28, 29। उपर्युक्त निष्कर्षों के अतिरिक्त अन्य परिणाम भी प्राप्त हुये हैं । जो इस प्रकार है :-

यदि अपराधी मजदूर है एवं पीड़ित भी मजदूर है तब ऐसे 50 प्रतिशत अहस्तक्षेपीय वादों में समझौते हुये हैं एवं शेष 50 प्रतिशत वादों में, पीड़ितों में अपराधियों को दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति पाई गई है । इन 50 प्रतिशत वादों में मजदूर तथा दुकानदार साक्षी थे । इन दोनों वर्गों के साक्षियों ने पीड़ितों के समर्थन की अधिकतम रुचि दिखाई है । इससे पुनः स्पष्ट होता है कि समान व्यवसाय के अपराधी तथा पीड़ित के मध्य न्यायिक प्रक्रिया अधिक प्रभावित होती है । ऐसे अहस्तक्षेपीय वाद जिनमें अपराधी मजदूर है तथा पीड़ित खेती वाला है । ऐसा मात्र एक प्रतिशत वाद ही वर्तमान अध्ययन में पाया गया और इसके पक्षकारों में समझौता करने की प्रवृत्ति

तालिका संख्या ‡28‡ ऐसे अहस्तक्षेपीय वाद जहाँ अपराधी मजदूर था उनमें पाये गये पीड़ितों का व्यवसाय के आधार पर वर्गीकरण

‡ प्रतिशत में ‡

क्रम संख्या	पीड़ितका व्यवसाय	उपलब्ध साक्षी
1.	कृषि	14.28
2.	मजदूरी	28.57
3.	दुकानदारी	14.28
4.	नौकरी	14.28
5.	घरेलू कार्य	28.57
	योग	100

तालिका संख्या ॥ 29 ॥ ऐसे अहस्तक्षेपीय वाद जिनमें अपराधी मजदूर था, पीड़िता व्यवसाय के आधार पर दण्डित कराने की प्रवृत्ति का वर्गीकरण ॥प्रतिशत में ॥

क्रम संख्या	साक्ष्य की किस्म	पीड़ित का व्यवसाय					
		कृषि	मजदूरी	दुकानदारी	नौकरी	घरेलू काम	अन्य
1.	राजीनामा या विरोधी साक्ष्य	100	50	-	100	-	-
2.	समर्थन	-	50	100	-	50	50
3.	अपरीक्षित	-	--	-	-	50	-
	योग	100	100	100	100	100	-

पाई है ।

अपराधी मजदूर एवं घरेलू काम करने वाले पीड़ित केवाद का अध्ययन करने पर पाया गया कि साक्षीगण पीड़ितों का शत-प्रतिशत समर्थन करते हैं । इसका कारण पीड़ितों की आर्थिक निर्भरता है । इसके साथ-साथ ही घरेलू काम करने वाले पीड़ितों के विरुद्ध मजदूर अपराधी अधिकांशतया बहुत कम आर्थिक स्थिति के हैं । पीड़ितों की सामाजिक प्रतिष्ठा का अपराधियों की अपेक्षा श्रेष्ठ होना स्वाभाविक था ।

यदि अपराधी मजदूर हैं एवं पीड़ित दुकानदार है ऐसे वादों में कृषक साक्षी पाये गये । इन साक्षियों ने शत-प्रतिशत पीड़ितों का समर्थन किया है । इससे स्पष्ट होता है कि दुकानदार पीड़ितों से कृषकों की सहानुभूति है । इसका एक कारणयह भी है कि पीड़ित की सम्पन्न स्थिति ‌॥आर्थिक॥ होने के कारण उसे समर्थन मिलना स्वाभाविक था ।

ऐसे अहस्तक्षेपीय वादों में जिनमें अपराधी मजदूर था एवं पीड़ित नौकरीवाला था, समझौता हुआ है । इसका कारण यह है कि अपराधी द्वारा सेवा किया जाना भी सम्भव है । जन-चर्चाओं के अनुसार यह भी सम्भव है कि मजदूर अपराधी को षड़यंत्र द्वारा उसे नीचा दिखाने हेतु या उसकी सेवायें प्राप्त करने हेतु झूठा फँसा दिया गया हो । ऐसे अहस्तक्षेपीय वाद जिनमें अपराधी दुकानदार तथा पीड़ित किसी भी व्यवसाय का था उन सभी वादों समझौते हुये हैं । इससे स्पष्ट होताहै कि दुकानदार व्यक्ति समझौतावादी एवं विनम्र व्यवहार का होता है । इसका एक कारण यह भी है कि ग्राम्य क्षेत्रों में दुकानदार बहुत उपयोगी होता है । दैनिक आवश्यकताओं की प्रत्येक

वस्तु के लिए हर वर्ग के व्यक्ति से उसका काम पड़ता है । अतः इनका सामाजिक स्वभाव भी ग्रामीण क्षेत्रों में है । इस सम्बन्ध में दुकानदार अपराधियों का पाया जाना मात्र संयोगवश हो सकता है । ऐसे अहस्तक्षेपीय वाद जिनमें अपराधी विद्यार्थी थे एवं पीड़ित किसी भी व्यवसाय के थे., 80 प्रतिशत राजीनामे हुये हैं । तथा शेष वादों में साक्षीगण मजदूर एवं खेती वाले थे और इनमें पीड़ितों के समर्थन की प्रवृत्ति पाई गई है ।

3. विश्लेषण

शोध प्रबन्ध के वर्तमान अध्याय में यह प्रयास किया गया कि अपराधी पीड़ित एवं साक्षियों का व्यवसायिक दृष्टि से जनपद झाँसी में क्या स्तर है । परम्परागत व्यवसायिक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण कारकों का वर्गीकरण इस अध्याय में किया गया है । वर्तमान अध्याय को पूर्णरूप से विश्लेषित करने पर प्रतीत होता है कि जनपद झाँसी में अहस्तक्षेपीय अपराधों के सन्दर्भ में अधिकांशतया समझौते की प्रवृत्ति पायी गई है । ऐसे अहस्तक्षेपीय वाद जिनमें समझौता नहीं हुआ है, वहाँ व्यवसायिक लगाव पाया गया है । जिन अभियोगों मेंपीड़ित के समान व्यवसाय के ही साक्षी हैं उनमें साक्षियों ने अधिकांशतया पीड़ितों का समर्थन किया है । निर्धनता के कारण मजदूर व्यक्ति धनिक अपराधियों का समर्थन करते हैं । जिन वादों में पीड़ित एवं अपराधी समान व्यवसाय से सम्बन्धित है उनवादों में मजदूर साक्षी अपराधियों को दण्ड दिलाने में प्रवृत्त हैं । यदि अपराधी और पीड़ित दोनों समान व्यवसाय के हैं तो अन्य साक्षीगण पीड़ित का समर्थन करते हैं और उनके लिये जाति महत्वहीन हो जाती है ।

प्रस्तुतशोध प्रबन्ध के वर्तमान अध्याय की उपलब्धियों का समाजशास्त्रीय मूल्यांकन करने से स्पष्ट होता है कि जनपद झाँसी में समान व्यवसायिक वर्ग समझौतावादी दृष्टिकोण के हैं। यदि संबधित अहस्तक्षेपीय वादों में समझौता सम्भव नहीं हो पाया है तो इस प्रकार के वादों में अधिकांशतः साक्षियों का प्रतिशत पीड़ितों के पक्ष में समर्थन प्रदर्शित करता है। इसप्रकार से यह साक्षी अपराधियों को दण्ड दिलाने की न्यायिक प्रक्रिया में स्वतः का समर्थन देते हैं। जनपद झाँसी की आर्थिक व्यवस्था मूलतः कृषि कार्यों पर ही आधारित है। इसलिये वर्तमान अध्ययन के अहस्तक्षेपीय वादों के सन्दर्भ में कृषि व्यवसायी व्यक्ति ही अधिक पाये गये हैं। इस अध्याय में प्राप्त सम्पूर्ण तथ्यों की विवेचना करने से स्पष्ट होता है कि जो अपराधी नौकरी से सम्बन्धित थे उन्हें अन्य किसी भी व्यवसायिक वर्ग के पीड़ितों द्वारा दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति अल्प प्रतिशत में पायी गई है। इस दिशा में यह भी उल्लेखनीय है कि नौकरी करने वाले पीड़ितों के प्रति सामान्यतः सद्भावना की प्रवृत्ति जनपद झाँसी के ग्रामीण समुदाय के व्यक्तियों में विद्यमान है। इस उपलब्धि के लिये सामाजिक विकास का प्रभाव तथा ग्रामीण बौद्धिक स्तर एवं व्यक्तित्व पर कहना उचित नहीं होगा। वर्तमान अध्ययन से स्पष्ट है कि कृषक वर्ग भी मजदूर अपराधियों के प्रति समझौता की प्रवृत्ति रखते हैं। इसका एकमात्र कारण मजदूरों द्वारा कृषि कार्य के लिये प्रदत्त सहयोग ही स्पष्ट किया जा सकता है।

वर्तमान शोध अध्ययन में संकलित सम्पूर्ण अहस्तक्षेपीय वादों से संबंधित व्यक्तियों से प्राप्त सूचनाओं एवं कार्यालयीन अभिलेखों से स्पष्ट होता है कि अधिकांश अहस्तक्षेपीय वादों में समझौता हुआ है। इसका कारण यह है कि ग्रामीण क्षेत्रों में निहित व्यवसायिक सहयोग निश्चित

रूप से अहस्तक्षेपीय वादों में न्यायिक प्रक्रिया को प्रोत्साहित नहीं होने देता है। परिस्थितियोंवश यदि कोई अहस्तक्षेपीय अपराध घटित भी हो गया तो उन्हें स्थानीय स्तर पर सुलझाने का प्रयास किया जाता है। ऐसी स्थितिमें निश्चित रूप से पीड़ितों के सम्पूर्ण हितों को उचित स्थान न देकर शोषण की प्रवृत्ति का विकास होना स्वाभाविक है। यदि न्यायिक प्रक्रिया की जटिलतायें न हों तो शायद पीड़ित अपनी क्षति-पूर्ति के लिये शत-प्रतिशत रूप से अहस्तक्षेपीय वादों के बारे में सरकार को प्रत्यावेदन कर सकें। वास्तविकता इसके विपरीत ही है। इस आशय की पुष्टि वर्तमान अध्ययन में प्राप्त विभिन्न तथ्यों के विश्लेषण से होती है।

वर्तमान अध्याय में प्राप्त तथ्यों से स्पष्ट होता है कि उन अहस्तक्षेपीय वादों में भी समझौता हुआ है जिनमें विद्यार्थी वर्ग सम्मिलित था। इसका कारण यह भी हो सकता है कि पारिवारिक सदस्यों ने मध्यस्थता की हो। जिससे कि शैक्षणिक कार्यों में व्यवधान न उत्पन्न हो सके। व्यवसायिक दृष्टि से विभिन्नआयु वर्गों की व्यवहारिक असमानता को चौधरी (1965) द्वारा भी संस्तुति प्रदान की गई है।

वर्तमान अध्ययन की सम्पूर्ण उपलब्धियों के आधार पर यह निष्कर्ष प्रस्तावित किया जा सकता है कि पीड़ित, अपराधी एवं साक्षी व्यक्तियों के आर्थिक स्तर का प्रभाव न्यायिक प्रक्रिया पर परोक्ष अथवा अपरोक्ष रूप से अवश्य पड़ता है।

=:=:=:=:=:=:=:=:=

अध्याय - ५

न्याय प्रणाली एवं राजनयिक व्यवस्था

१. सामान्य विवरण
२. जाति पर आधारित राजनैतिक गतिविधियाँ
३. शिक्षा पर आधारित राजनैतिक गतिविधियाँ
४. आयु पर आधारित राजनैतिक गतिविधियाँ
५. व्यवसाय पर आधारित राजनैतिक गतिविधियाँ
६. विश्लेषण

1- सामान्य विवरण
=============

वर्तमान अध्याय में अहस्तक क्षेत्रीय अपराधों के सन्दर्भ में राजनैतिक कारकों का योगदान मूल्यांकित किया गया है । प्रस्तुत अध्याय के लिये विषय सामग्री विभिन्न क्षेत्रों से एकत्रित की गई है । बुन्देलखण्ड क्षेत्र का जनपद झाँसी भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में महत्वपूर्ण भूमिका प्रदान कर चुका है । इस जनपद में राजनैतिक गतिविधियाँ प्राचीन समय से ही विद्यमान रही हैं । ब्रिटिश शासन काल में इस जनपद के प्रतिनिधियों का स्वतंत्रता संग्राम में योगदान एक ऐतिहासिक एवं स्वतंत्र विषय बन गया है । इस जनपद के व्यक्तियों की शौर्य गाथाओं को विश्व के विभिन्न शिक्षाविद् अत्याधिक जागरूकता से अनुभव करना चाहते हैं । स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं एवं पुरुषों का सक्रिय योगदान यह प्रदर्शित करता है कि सामाजिक सम्बन्ध आवश्यकता अनुसार इतने प्रगाढ़ थे कि विश्व में समकक्ष उदाहरण सहज प्राप्त नहीं होता है । सन् 1857 के संग्राम के पश्चात इस जनपद में विभिन्न क्रांतिकारियों का केन्द्र स्थापित हुआ । इसके माध्यम से होने वाली गतिविधियों के फलस्वरूप ब्रिटिश शासन के अधिकारी अत्यधिक पीड़ित अनुभव किया करते थे । प्रसिद्ध काकोरी कांड के पश्चात सन् 1924 में क्रांतिकारी दल का मुख्यालय वर्तमान झाँसी से मात्र 15 किलोमीटर दूर सातार नदी के तट पर था । यह एक ऐतिहासिक स्थल है और स्वतंत्रता सेनानी चन्द्रशेखर आजाद इस स्थान पर अधिक समय रहे हैं । ऐसे प्रमाण ऐतिहासिक अभिलेखों से स्पष्ट होते हैं (शर्मा, 1982) ।

भारत वर्ष के आजादी के बाद कांग्रेस देश की प्रमुख राजनैतिक पार्टी बनी और देश के सभी राज्यों एवं केन्द्र में इस दल की सरकार बनी/संविधान समिति के गठन में जनपद झाँसी के प्रतिनिधि आर०वी० धुलेकर ने सक्रिय भाग लिया । शताब्दियों से शोषित पिछड़ी जातियों

के जीवन स्तर में सुधार करने के उद्देश्य से भारतीय संविधान में आरक्षण की व्यवस्था निर्मित की गई। समाज आर्थिक रूप से शोषित और पिछड़े हुये व्यक्तियों को राष्ट्र की प्रगति धारा में मिलाने के उद्देश्य से आरक्षण की नीति अपनाई गयी। संविधान में आरक्षण के प्राविधान संक्षेप में इस प्रकार हैं :-

अनुच्छेद 15 §3§ :- महिला एवं बच्चों के संरक्षण के लिये सरकारों को कानून बनाने का अधिकार ;

अनुच्छेद 15§4§ :- सामाजिक व शैक्षणिक रूप से पिछड़े हुये व्यक्तियों जिनमें अनुसूचित जाति जनजाति तथा पिछड़े वर्ग के व्यक्ति शामिल है, की प्रगति तथा उत्थान के लिये विशेष उपबन्ध करने की व्यवस्था,

अनुच्छेद16 §4§ :- पिछड़े तथा कमजोर वर्गों को सरकारी सेवाओं में समुचित प्रतिनिधित्व देने के लिये आरक्षण करने का सरकारों को अधिकार,

अनुच्छेद17 :- छुआछूत को अपराध घोषित किया गया और 1955 में अस्पृश्यता §अपराध§ अधिनियम तथा 1976 में नागरिक अधिकारी सुरक्षा अधिनियम पारित किया गया जिसके जिसके अनुसार छुआछूत बरतना हस्तक्षेपीय अपराध है ;

अनुच्छेद 19§1§§जी0§ :- हर जाति वर्ग के व्यक्ति कोई भी रोजगार जो वह स्वेच्छा से करना चाहे की स्वतंत्रता ;

अनुच्छेद 38§1§ :- राज्य लोक कल्याण की उन्नति के लिये ऐसी समाजिक व्यवस्था जिसमें सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और न्याय, राष्ट्रीय जीवन की सभी

संस्थाओं को अनुप्राणित करें, की स्थापना का भरसक प्रयत्न करेगा ;

अनुच्छेद 38[2] :- नये जोड़े गये इस अनुच्छेद के द्वारा आश्वासन दिया गया है कि राज्य विशेष रूप से विभिन्न क्षेत्रों में रहने वाले तथा पेशों में लगे व्यक्तियों की आमदनी की असमानता को कम करेगा तथा न केवल विभिन्न वर्गों के बीच व्याप्त सामाजिक स्तर की असमानता को समाप्त करेगा बल्कि उनकी सुविधाओं व अवसरों की असमानता को भी समाप्त करेगा ;

अनुच्छेद 39[ए] :- यह नया जोड़ा प्राविधान है । इसके द्वारा समाज के कमजोर व गरीब व्यक्तियों को निशुल्क कानूनी सहायता एवं न्याय दिलाने की सरकारों द्वारा व्यवस्था की गयी है ;

अनुच्छेद 43 :- राज्य उपयुक्त विधान या आर्थिक संगठन द्वारा अथवा अन्य उपायों से खेती उद्योग अथवा किसी भी अन्य प्रकार के काम में लगे मजदूरों को रोजगार देने, गुजर-बसर के लिये मजदूरी, जिससे वह अच्छा जीवन यापन कर सके, जीवन का पूर्ण आनन्द ले सके, की समुचित व्यवस्था करेगा और विशेष कर गांवों में, वैयक्तिक अथवा सहकारी आधार पर कुटीर-उद्योगों को बढ़ावा देने का प्रयास करेगा ;

अनुच्छेद 46 :- राज्य सरकार समाज के कमजोर वर्गों और खासकर अनुसूचित जाति/जनजातियों के आर्थिक व शैक्षिक

हितों को ध्यान रखकर उनकी उन्नति की विशेष व्यवस्था करेगा ;

अनुच्छेद 330 व 332 :- लोक सभा तथा विधान सभाओं में अनुसूचित को प्रतिनिधित्व देने हेतु स्थान आरक्षित इस प्राविधान के अनुसार किये गये हैं ;

अनुच्छेद 335 :- अनुसूचित जाति/जनजातियों को केन्द्र व प्रदेश सरकार की सेवाओं में आरक्षण व्दारा स्थान सुरक्षित करने की व्यवस्था है ;

अनुच्छेद 338 :- केन्द्र सरकार को एक विशेषाधिकारी नियुक्त करने का अधिकार दिया गया है, जो देखेगा कि अनुसूचित जातियों/जनजातियों को दिया गया आरक्षण पूरा हो रहा है या नहीं । वह समय-समय पर अपनी आख्या तैयार करके राष्ट्रपति के समक्ष प्रस्तुत करेगा जो संसद के दोनों सदनों के समक्ष रखी जावेगी और उस पर सदन में विचार हो सकेगा ;

अनुच्छेद 340॥1॥ :- सामाजिक शैक्षिणिक रूप से पिछड़े वर्ग के व्यक्तियों की दशा की जांच के लिये राष्ट्रपति एक पिछड़ा वर्ग कमीशन नियुक्त करेंगे । यह कमीशन पिछड़े वर्ग की दशा की जांच करके अपनी रिपोर्ट संस्तुतियों सहित राष्ट्रपति को पेश करेगा और बतायेगा कि पिछड़े वर्ग की गिरी हुई दशा को सुधारने के लिये केन्द्र व प्रदेश सरकार को क्या उपाय करना चाहिये ; एवं

अनुच्छेद 341 एवं 342 :- राष्ट्रपति, राज्यपाल तथा केन्द्र सरकार व्दारा जिन जातियों की संस्तुति की जावेगी उनको अनुसूचित जाति व जनजाति की सूची में सम्मिलित करने हेतु विज्ञापित किया जावेगा ।

भारत वर्ष एक प्रजातान्त्रिक देश है एवं वयस्क मताधिकार के आधार पर चुने गये जनप्रतिनिधि सरकार का निर्माण करते है । यह सरकार संविधान की सीमाओं के अन्तर्गत देश और प्रदेश पर शासन करती है । प्रत्येक नागरिक के मत का समान मूल्य होता है । अत: प्राचीन भारतवर्ष की अपेक्षा वर्तमान समय में राजनैतिक चेतना में वृद्धि होना स्वाभाविक है । प्रत्येक सामाजिक, आर्थिक एवं धार्मिक गतिविधियों पर राजनीति का प्रभाव पड़ता है । बुन्देलखण्ड क्षेत्र के जनपद झांसी में प्रमुख राष्ट्रीय राजनैतिक पार्टियों का अस्तित्व है ।

वर्तमान शोध अध्ययन के लिये अहस्तक्षेपीय अपराधों से संबंधित व्यक्तियों से यह जानने का प्रयास किया गया कि उनका क्षेत्रीय राजनैतिक गतिविधियों में कैसा सहयोग है । इस दिशा में प्राप्त तथ्यों का क्रमानुसार विवरण वर्तमान अध्याय का प्रमुख आधार है ।

2. जाति पर आधारित राजनैतिक गतिविधियां

वर्तमान अध्ययन में प्राप्त सूचनाओं को जाति के आधार पर पीड़ित, अपराधी एवं साक्षी वर्गीकृत किया गया है । इन उत्तरदाताओं ने ग्रामीण नेतृत्व से सम्बन्धता को स्वीकार किया था । इसका विवरण तालिका संख्या 30 में प्रदर्शित किया गया है । इस तालिका के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि अहस्तक्षेपीय अपराधों के हरिजन अपराधी, शतप्रतिशत रूप से ग्रामीण गुटबाजी से सम्बन्धित है । वर्तमान अध्ययन के अहस्तक्षेपीय अपराधों में हरिजन अपराधियों की संख्या बहुत कम पायी गयी है और यह ऐसे अपराधी है जिन्होंने सवर्ण अपराधियों के साथ में मिलकर हरिजन पीड़ितों के विरुद्ध अपराध कारित किये है । अत:

तालिका संख्या ‡ 30 ‡ जाति के आधार पर ग्रामीण नेतृत्व से संबद्धता ‡प्रतिशत में ‡

क्र० सं०	जाति	पीड़ित		अपराधी		साक्षी	
		संबद्धता	असंबद्धता	सम्बद्धता	असम्बद्धता	सम्बद्धता	असम्बद्धता
1.	चमार	40	60	100	--	90	10
2.	बुनकर	35	65	100	--	80	20
3.	धोबी	100	--	100	--	100	--
4.	बरार	20	80	--	--	90	10
5.	मेहतर	10	90	--	--	80	20
6.	खंगार	10	90	--	--	70	30
7.	खटीक	10	90	--	--	--	--
8.	सहारिया	05	95	--	--	70	30
9.	पासी	10	90	--	--	--	--
10.	यादव	--	--	90	10	90	10
11.	लोधी	--	--	90	10	90	10
12.	कुर्मी	--	--	85	15	90	10
13.	ठाकुर	--	--	100	--	100	--
14.	ब्राह्मण	--	--	90	10	90	10
15.	काछी	--	--	100	--	100	--
16.	वैश्य	--	--	50	50	50	50
17.	गड़रिया	--	--	50	50	50	50
18.	कायस्थ	--	--	100	--	--	--
19.	मुसलमान	--	--	90	10	90	10
20.	बढ़ई	--	--	40	60	60	40
21.	साहू	--	--	60	40	60	40
22.	जायसवाल	--	--	100	--	--	--
23.	नाई	--	--	30	70	30	70
24.	सुनार	--	--	25	75	50	50
25.	कुम्हार	--	--	20	80	50	50
26.	स्वर्णकार	--	--	50	50	--	--
27.	जोगी	--	--	50	50	--	--
28.	पंजाबी	--	--	100	--	--	--
29.	ढीमर	--	--	--	--	50	50

इनका ग्रामीण गुटबन्दी से पूर्ण संबंध पाया जाना स्वाभाविक है । अहस्तक्षेपीय वादों के मुख्य बरार, मेहतर, खंगार, खटीक, सहरिया, एवं पासी जातियों के व्यक्तियों का ग्रामीण गुटबन्दी से बहुत कम संबंध पाया गया है । प्राप्त तथ्यों का स्पष्टीकरण इस प्रकार दिया जा सकता है कि यह जातियाँ कृषि पर अपेक्षाकृत कम आश्रित हैं और व्यवसाय की दृष्टि से इनकी सेवायें समाज के सभी वर्गों के लिये उपयोगी होती है । अतः इन जातियों के व्यक्तियों का स्थानीय राजनीति या गुटबन्दी से कम संबंध पाया जाना स्वाभाविक है । अन्य पीड़ित जातियों की अपेक्षा चमार एवं बुनकर जातियों में ग्रामीण गुटबन्दी से अधिक सम्बद्धता चमार एवं बुनकर जाति के पीड़ितों की पायी गयी है । इसका कारण है कि जनपद झाँसी की यह अनुसूचित जातियाँ कृषि कार्यों में संलग्न हैं और इन जातियों में अपने हितों के प्रति जागरूकता अन्य अनुसूचित जातियों की तुलना में अधिक पाई जाती है । वर्तमान अध्ययन में धोबी जाति में ग्रामीण गुटबाजी से सम्बद्धता अधिक पायी गयी है इसका कारण ग्रामीण क्षेत्रों में इनके परम्परागत ग्राहकों की व्यवस्था का होना है । इस जाति के पीड़ित, अपराधी एवं साक्षी घात-प्रतिघात क्रम से ग्रामीण गुटबन्दी से सम्बद्धता प्रदर्शित करते हैं ।

तालिका संख्या 30 का विश्लेषण करने से स्पष्ट होता है कि सामान्यतया सभी कृषक जाति के अपराधियों में स्थानीय गुटबन्दी से सम्बद्धता अधिकतम पायी गयी है । इसका कारण यह है कि ग्रामीण क्षेत्रों में सवर्ण जातियों के पास अधिक उपजाऊ कृषि भूमि है । सामान्यतः मजदूर तथा कृषक मजदूर इनके कृषि कार्यों में सहयोग करते हैं । अपने व्यवसायिक कार्य दूसरों से करवाने के कारण इन सम्पन्न व्यक्तियों के पास राजनैतिक गतिविधियों के लिये अतिरिक्त समय रहता है । प्रायः ग्रामीण क्षेत्रों में अलाव तथा चौपालों पर बैठकर सम्पन्न व्यक्ति दलगत राजनीति की बातें करते हैं । वर्तमान अध्ययन में तथा सेवक जातियों

[illegible] के व्यक्तियों में ग्रामीण दलबन्दी से सम्बद्धता अपेक्षाकृत कम पायी गयी है । इसका कारण यह है कि व्यवसायिक जातियाँ सभी वर्गों से संबंधित होती हैं एवं दलबन्दी से इनके व्यवसाय को क्षति पहुँचाने की संभावना रहती है । अतः ग्रामीण गुटबन्दी से दूर रहने की प्रवृत्ति व्यवसायिक जातियों में होना स्वाभाविक सा प्रतीत होता है ।

तालिका संख्या 30 में विश्लेषित तथ्यों से स्पष्ट होता है कि व्यवसायिक एवं सेवक जाति के साक्षियों के अतिरिक्त अन्य साक्षियों में ग्रामीण दलबन्दी से सम्बद्धता अधिकतम पायी गयी है । वस्तुतः अहस्तक्षेपीय अपराधों में साक्षीगण निष्पक्ष नहीं पाये गये हैं । अतः अहस्तक्षेपीय अपराधों के संबंधित अधिकांश साक्षी किसी न किसी प्रकार से ग्रामीण गुटबन्दी से संबंधित रहते हैं । अपने प्रतिद्वन्दी को नीचा दिखाने अथवा पीड़ित या अपराधी को झुकाने की मनोवृत्ति भी साक्षियों में पाई गयी है ।

पंजाबी अपराधियों का शत-प्रतिशत स्थानीय गुटबाजी से संबंध होना यह प्रदर्शित करता है कि उनमें सामाजिक सुरक्षा की भावना अत्यधिक बलवती है इस कारण से उन्हें व्यक्तिगत हितों के लिये इस आधार पर चयन करना स्वाभाविक प्रतीत होता है । इस दिशा में विशेष स्पष्टीकरण मुख्यतः इनकी राजनैतिक गतिविधियों के आधार पर दिया जा सकता है ।

3. शिक्षा पर आधारित राजनैतिक गतिविधियाँ

अहस्तक्षेपीय अपराधों से संबंधित पक्षकार पीड़ित, अपराधी एवं साक्षियों का शैक्षिक आधार पर ग्रामीण दलबन्दी से सम्बन्धता की जानकारी के परिणामों को तालिका संख्या (31) में प्रदर्शित किया गया है ।

तालिका संख्या ॥ 31 ॥ वर्तमान अध्ययन में उपलब्ध पीड़ित अपराधी एवं साक्षियों का

शैक्षिक स्तर के आधार पर स्थानीय राजनीति से

संबंध ॥ प्रतिशत में ॥

क्रम संख्या	शिक्षा	पीड़ित		अपराधी		साक्षी	
		सम्बद्धता	असम्बद्धता	सम्बद्धता	असम्बद्धता	सम्बद्धता	असम्बद्धता
1.	अशिक्षित	30	70	80	20	90	10
2.	प्राइमरी	40	60	85	15	90	10
3.	जू0हा0स्कूल	--	--	100	--	--	--
4.	हाई स्कूल	100	--	100	--	100	--
5.	इण्टरमीडिएट	90	10	100	--	100	--
6.	स्नातक	--	--	100	--	--	--
7.	स्नातकोत्तर	--	--	--	--	--	--
8.	तकनीकी शिक्षा	--	--	--	--	--	--

इस अध्ययन से यह जानकारी प्राप्त होगी कि शिक्षा का ग्रामीण दलबन्दी से क्या संबंध है । इस तालिका से स्पष्ट होता है कि अशिक्षित पीड़ित, शिक्षित पीड़ितों की अपेक्षा ग्रामीण स्थानीय दलबन्दी से कम संबंधित है । इसका कारण इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है कि अशिक्षित पीड़ितों में कमजोर तथा हीन मनोवृत्ति विद्यमान है । इस मनोवृत्ति के कारण अशिक्षित पीड़ित राजनैतिक रूप से कम संगठित रहते हैं । प्राप्त तथ्यों से विदित होता है कि प्राईमरी तक की शिक्षा भी इनकी हीन मनो-वृत्ति को दूर करने में कम प्रभावी रही है । इसके सापेक्ष प्राइमरी से उच्च स्तर की ओर शिक्षित हरिजनों में ग्रामीण दलबन्दी से सम्बद्धता अधिक पाई गयी है । यह निश्चित रूप से शैक्षणिक विकास के कारण ही सम्भव प्रतीत होता है ।

तालिका संख्या । 3। । का अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि अशिक्षित अपराधियों की अपेक्षा, शिक्षित अपराधियों में ग्रामीण राजनैतिक गतिविधियाँ अपराधिक प्रवृत्ति वाले नेताओं में केन्द्रित होती जा रही हैं । साक्षियों का विश्लेषण करने से भी यही स्थिति पाई गयी है । इस तालिका से स्पष्ट है कि स्नातक या इससे ऊपर के शिक्षितव्यक्तियों में अपराधियों अपराधियों का प्रतिशत नगण्य पाया गया है और इस शिक्षा स्तर के साक्षी या पीड़ित कोई भी उपलब्ध नहीं हुये हैं । इससे यह स्पष्ट होता है कि उच्च शिक्षा प्राप्त व्यक्ति न्यायिक प्रक्रिया से दूर रहते हैं । शिक्षित व्यक्तियों को न्यायिक प्रक्रिया में रूचिरखने हेतु प्रेरित करने के लिये साक्षियों की सम्मानजनक स्थिति का निर्माण होना आवश्यक है ताकि बुद्धिजीवी वर्ग का न्यायिक प्रक्रिया में योगदान प्राप्त किया जा सके । वर्तमान अध्ययन में उच्च शिक्षा प्राप्त साक्षियों का उपलब्ध न होना प्रदर्शित करता है कि यह नौकरी आदि मे संलग्न रहने के कारण ग्रामीण जीवन से दूर हो रहा

है । जिसका अपरोक्ष प्रभाव न्यायिक प्रक्रिया पर अनुभव किया जा सकता है ।

इस समाजन्यायिक स्थिति को समाप्त करने के लिये आवश्यक है कि ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षित व्यक्तियों को स्व-रोजगार की प्रेरणा तथा कुशल संचालन के प्रशिक्षण प्रदान किये जायें । वर्तमान अध्ययन में स्नातकोत्तर तथा तकनीकी शिक्षा प्राप्त व्यक्ति अहस्तक्षेपीय अपराधों के संबंध में अपराधी, पीड़ित एवं साक्षी किसी भी वर्ग में उपलब्ध नहीं हुये हैं । वर्तमान संस्तुति का आशय यह नहीं है कि शिक्षितों की सेवायें सम्पूर्ण देश को न प्राप्त हो बल्कि यह है कि ग्रामीण क्षेत्रों में यदि शिक्षित व्यक्ति रहेंगे तो सामाजिक वातावरण में निश्चित रूप से सुधार की संभावना है । अतः इस बात की महती आवश्यकता है कि ऐसे उपयुक्त वातावरण का निर्माण किया जाये जिसमें प्रशिक्षित ग्रामीण नागरिक आदर्श समाज की स्थापना कर सके ।

4. आयु पर आधारित राजनैतिक गतितिविधियाँ

सामाजीकरण एवं ग्रामीण दलबंदी का तुलनात्मक अध्ययन करने के लिये पीड़ित अपराधी एवं साक्षियों का वर्गीकरण तालिका संख्या (32) में प्रदर्शित किया गया है । इस तालिका के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि वर्ष 15 से 25 आयु समूह के पीड़ितों में अन्य आयु के पीड़ितों की अपेक्षा ग्रामीण राजनैतिक सम्बद्धता अधिक पाई गई है । इसका कारण यह है कि इस आयु समूह के सदस्य शारीरिक दृष्टि से बलिष्ठ होते हैं एवं सामाजिक चेतना भी अपेक्षाकृत अधिक होती है । अतः यह वर्ग अधिकारी के प्रति जागरूक है एवं ग्रामीण दलबंदी से सम्बद्धता का कारण है । वर्ष 26 से 45 आयु के सदस्यों की ग्रामीण गुटबन्दी से न्यून सम्बद्धता यह दर्शाती है कि 26 से 45 वर्ष की आयु तक के हरिजन पीड़ितों में पारिवारिक उत्तरदायित्व अधिक रहते है । पारिवारिक उत्तरदायित्वों के निर्वाह करने में इनके पास राजनैतिक गतिविधियों के लिये समयाभाव रहता है । वर्तमान अध्ययन से

तालिका संख्या ः 32 ः वर्तमान अध्ययन में उपलब्ध पीड़ितों, अपराधियों एवं साक्षियों का आयु के आधार पर ग्रामीण राजनीति से सम्बन्ध।

क्रम संख्या	पत्रकारों का आयु समूह (वर्ष)	पीड़ित		अपराधी		साक्षी	
		सम्बद्धता	असम्बद्धता	सम्बद्धता	असम्बद्धता	सम्बद्धता	असम्बद्धता
1.	15-25	60	40	100	--	100	--
3.	26-35	10	90	40	60	60	40
4.	36-45	10	90	50	50	80	20
5.	46-55	40	60	95	05	95	05
6.	55 से ऊपर	--	--	20	80	25	75

स्पष्ट है कि वर्ष 46 से 55 आयु समूह के पीड़ितों में स्थानीय राजनीति से अधिक सम्बद्धता यह दर्शाती है कि 46 वर्ष से अधिक आयु के व्यक्ति पारिवारिक उत्तरदायित्वों से मुक्त होकर स्थानीय राजनीति में सक्रिय भाग लेने लगते हैं जो कि ग्रामीण क्षेत्रों की एक स्वभाविक प्रक्रिया है ।

तालिका संख्या ‹32› में प्रदर्शित विश्लेषण से स्पष्ट है कि अपराधियों में वर्ष 15 से 25, एवं वर्ष 46 से 55 आयु समूहों में अधिकतम ग्रामीण नेतृत्व या राजनीति से सम्बद्धता पायीगयी है । यह दोनों आयु समूह ऐसे हैं जिनमें व्यक्ति सामान्यत: पारिवारिक उत्तरदायित्वों से मुक्त रहता है और इनके पास अलाव तथा चौपालों, जोकि वास्तव में ग्रामीण राजनीति के संसद भवन हैं, के लिये अतिरिक्त समय उपलब्ध रहता है । वर्ष 26 से 45 के आयु समूह के पीड़ितों एवं अपराधियों का प्रतिशत देखने से यह स्पष्ट होता है कि पीड़ितों की अपेक्षा अपराधियों का ग्रामीण गुटबन्दी से अधिक सम्बन्ध पाया गया है । अपरोक्ष रूप में इससे स्पष्ट होता है कि पीड़ितों की अपेक्षा अपराधी अच्छी आर्थिक स्थिति में हैं और इनके पास संगठन तथा राजनैतिक चेतना अधिक है । सम्पूर्ण तालिका से यह स्पष्ट होता है कि पीड़ितों में राजनैतिक जागरूकता एवं संगठन अपराधियों की अपेक्षा प्रत्येक आयु पर कम पाया गया है और राजनैतिक जागरूकता एवं संगठन के अभाव में इनका शोषण स्वाभाविक है।

5. व्यवसाय पर आधारित राजनैतिक गतिविधियाँ

वर्तमान अध्ययन में अहस्तक्षेपीय अपराध से संबंधित पक्षकार पीड़ित, अपराधी एवं साक्षियों के व्यवसाय के आधार पर ग्रामीण राजनीति से सम्बद्धता को तालिका संख्या ‹ 33 › में प्रदर्शित किया गया है । इस तालिका के अवलोकन से स्पष्ट है कि विभिन्न व्यवसायों के व्यक्तियों का ग्रामीण राजनीति में क्या योग दान है । इस तालिका से यह स्पष्ट होता है किपीड़ितों में दुकानदारी, घरेलू कार्यों, विद्यार्थी एवं बेरोजगारों में ग्रामीण नेतृत्व से अधिकतम सम्बद्धता

पायी गयी है । प्राप्त निष्कर्षों में घरेलू कार्य, विद्यार्थी एवं बेरोजगारों में राजनैतिक सम्बद्धता का अधिकतम पाया जाना इस बात का प्रतीक है कि इनके पास अतिरिक्त समय उपलब्ध है । जिसके कारण यह व्यक्ति ग्रामीण राजनैतिक गतिविधियों में सक्रिय भाग लेते हैं । दुकानदारी करने वाले पीड़ितों में राजनैतिक सम्बद्धता अधिक पाये जाने का करण यह है कि ग्रामीण क्षेत्रों में सामान्यतया अधिकांश व्यक्ति कृषि कार्य करते हैं और दुकानदार व्यक्ति सम्पूर्ण समय अपनी दुकान पर ही उपलब्ध रहता है । वस्तुतः ग्रामीण क्षेत्रों में दुकान एक ऐसी जगह है जहाँ पर गाँव के व्यक्ति एकत्र होकर बीड़ी, तम्बाकू आदि खाते है । अतिरिक्त समय में दुकानों में बैठकर जनचर्चा करते हैं । इसी कारण दुकानदारों का संबंध गुटबन्दी से हो जाना प्रतीत होता है । वर्तमान अध्ययन से स्पष्ट है कि कृषि, मजदूरी, एवं नौकरी व्यवसाय वाले पीड़ितों में कम राजनैतिक सम्बद्धता का पाया जाना उनकी व्यवसायिक व्यस्तता तथा अधिक समय लेने वाले व्यवसाय है ।

तालिका संख्या । 33 । से निरूपित होता है कि कृषक अपराधियों में कृषक पीड़ितों की अपेक्षा बहुत अधिक ग्रामीण राजनीति से सम्बद्धता होने का कारण पीड़ित एवं अपराधियों की कृषि की परिस्थितियों में अन्तर है । वर्तमान अध्ययन के अहस्तक्षेपीय वादों के पीड़ितों के पास अपेक्षाकृत कम उपजाऊ कृषि भूमि है । जिसमें पीड़ितों को स्वयं कठोर परिश्रम करना पड़ता है । इसके विपरीत सवर्ण अपराधियों के पास क्षेत्रफल में अधिक तथा उपजाऊ कृषि भूमि है । सम्पन्न कृषक अपराधी आधुनिक तकनीकी यन्त्रों तथा मजदूरों द्वारा भी कृषि कार्य करवाते हैं और हरिजन पीड़ितों की अपेक्षा इनके पास राजनैतिक क्रिया-कलापों के लिये अतिरिक्त समय उपलब्ध रहता है ।

तालिका संख्या । 33 । के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि अन्य व्यवसायों के अपराधियों की अपेक्षा मजदूर एवं नौकरी वाले अपराधियों में ग्रामीण दलबन्दी से सम्बद्धता कम पायी गयी है । जो इनके व्यवसाय की

तालिका संख्या । 33 । वर्तमान अध्ययन में उपलब्ध पत्रकारों के आर्थिक स्तर के आधार पर ग्रामीण राजनीति से सम्बद्धता । प्रतिशत में ।

क्रम संख्या	पत्रकारों का व्यवसाय	पीड़ित		अपराधी		साक्षी	
		सम्बद्धता	असम्बद्धता	सम्बद्धता	असम्बद्धता	सम्बद्धता	असम्बद्धता
1.	कृषि	20	80	80	20	90	10
2.	मजदूरी	10	90	30	70	70	30
3.	नौकरी	10	90	10	90	--	--
4.	दुकानदारी	40	60	70	30	100	--
5.	घरेलू कार्य	60	40	100	--	--	--
6.	विद्यार्थी	100	--	100	--	--	--
7.	बेरोजगार	100	--	100	--	--	--
8.	जानवर चराना	--	--	--	--	--	--
9.	हड्डी का कार्य	--	--	--	--	100	--
10.	सिलाई	--	--	--	--	100	--
11.	कारीगर	--	--	--	--	100	--
12.	ठेकेदारी	--	--	--	--	100	--

परिस्थितियों के कारण स्वाभाविक है । वर्तमान अध्ययन में ही दुकानदार व्यक्ति समझौतावादी अधिकृतहुआ है किन्तु इसकी ग्रामीण नेतृत्व से अधिक सम्बद्धता का कारण खोजने पर ज्ञात हुआ है कि ग्रामीण क्षेत्र में दुकानदार ही पूर्ण समय उपलब्ध रहने वाला व्यक्ति होता है । दुकानदार के अतिरिक्त अन्य व्यवसायों के व्यक्ति अपने कार्यों पर चले जाते हैं और इन परिस्थितियों में वह व्यक्तिजिसके पास खाली समय होता दुकान पर आकर बैठता है । यह भी उल्लेखनीय है कि जनपद झाँसी के गाँवों में स्थानीय के अतिरिक्त बाहरी राजनीतिज्ञ भी दुकानदार को समय व्यतीत करने का माध्यम बनाते हैं । यहीकारण है कि दुकानदार सभी गुटों के लिये महत्वपूर्ण हो जाता है । भले ही वह स्वयं किसी दल विशेष का समर्थन या विरोध सक्रिय रूप से न करे किन्तु उसकी भूमिका निश्चित ही ग्रामीण दलबंदी में महत्वपूर्ण होती है ।

उपलब्ध विषय सामग्री में घरेलू कार्य, विद्यार्थी, बेरोजगार तथा जनवर चरानेवाले व्यवसाय करने वाले साक्षी वर्तमान अध्ययन में उपलब्ध नहीं हुये हैं । इसका कारण यह है कि इन व्यवसायों से संबंधित व्यक्तियों से अहस्तक्षेपीय वादों में पीड़ित तथा अपराधियों ने आपसी समझौते किये है एवं इन व्यक्तियों का रोजगार में लगजाने के कारण गाँवों से पलायन हो गया है जिसके कारण इस वर्ग के साक्षी उपलब्ध नहीं हो सके हैं ।

वर्तमान अध्ययन में हड्डी का कार्य, सिलाई, कारीगरी एवं ठेकेदारी करने वाले व्यक्ति पीड़ित एवं अपराधी के रूप में नहीं बल्कि साक्षी के रूप में पाये गये है और यह सभी ग्रामीण दलबंदी से संबंधित रहे हैं । इसका कारण यह है कि इन व्यवसायों का स्वभाव ऐसा है कि ग्राहकों का सहयोग हमेशा अपेक्षित रहताहै और लाभदायक होता है । इसलिये इन व्यवसायों के व्यक्ति पीड़ित एवं अपराधी तो प्राप्त नहीं हुये

किन्तु साक्षी के रूप में अवश्य पाये गये हैं और स्थानीय दलबन्दी से इनका सम्बन्ध है ।

6. विश्लेषण

सम्पूर्ण उपलब्ध विषय सामग्री का शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में वर्गीकरण किया गया है क्योंकि समाज शास्त्र की दृष्टिकोण से शहरी एवं ग्रामीण पर्यावरणों का अध्ययन अत्यधिक महत्वपूर्ण है । अतः वर्तमान अध्ययन से सम्पूर्ण अहस्तक्षेपीय अपराधों का शहरी एवं ग्रामीण वर्गीकरण किया गया और इससे प्राप्त परिणामों से स्पष्ट है कि शहरी क्षेत्रों में अहस्तक्षेपीय अपराध सम्पूर्ण अपराधों का 12% पाया गया है । जबकि शेष 88 प्रतिशत अपराध ग्रामीण क्षेत्रों के पाये गये हैं । इससे यह स्पष्ट होता है कि हरिजनों का उत्पीड़न शहरी क्षेत्र की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक है । परम्परागत सामाजिक रूढ़ियां, अशिक्षा, राजनैतिक चेतना का अभाव तथा निम्न आर्थिक स्तर उसका मुख्य कारण है ।

अध्ययन को अधिक सक्षम बनाने की दृष्टि से अपराधों के घटित होने के समय का भी वर्गीकरण किया गया है और इससे स्पष्ट हुआ कि शहरी क्षेत्रों में 61.53 प्रतिशत अपराध दिन में घटित हुये हैं तथा 38.46 प्रतिशत अपराध रात्रि में घटित हुये हैं । इसके विपरीत ग्रामीण क्षेत्रों में घटित होने वाले कुल अहस्तक्षेपीय अपराधों में से 92.40 प्रतिशत अपराध दिन में घटित हुये हैं जबकि केवल 7.59 प्रतिशत अपराध रात्रि में घटित हुये हैं । ग्रामीण क्षेत्रों मेंअधिकतम अपराध प्रातः 6 से 8 दोपहर 12 से 2 बजे एवं सायं 4 से 6 बजे के समय पर घटित हुये हैं । इसके अतिरिक्त अन्य समय में अहस्तक्षेपीय अपराधों का घटित होना नगण्य पाया गया है । इसका कारण यह है कि ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि से सम्बन्धित दिनचर्या होने के कारण प्रातः 6 से 8 बजे तक का समय कार्य प्रारम्भ करने का समय होता है । जानवरों का निकालना एक ही रास्ते से गुजरना., हल-बैल लेकर जाना,

महुआ आदि बीनना आदि सभी कार्य प्रातः 6 से 8 बजे तक ही होते हैं और स्वाभाविक है कि अधिकतम विवादों की सम्भावनायें इसी समय पर रहती हैं। प्रायः दोपहर में 12 से 2 बजे तक का समय आराम तथा भोजन का समय है एवं सायंकाल 4 से 6 बजे तक का समय खेतों से वापिसी का समय होता है। स्वाभाविक रूप से इन तीनों समयावधियों में अधिकतम सम्पर्क पाया जाता है और समान हित तथा कार्य का स्वभाव समान होने के कारण विभिन्नप्रकारों के विवादों की सम्भावनायें रहती हैं। यहाँ यह बात उल्लेखनीय है कि हस्तक्षेपीय अपराध गंभीर किस्म के अपराध होते हैं और इन अपराधों में आपराधिक प्रवृत्ति पायी जाती है किन्तु इसके विपरीत अहस्तक्षेपीय अपराध के अपराधियों में आपराधिक प्रवृत्ति षडयन्त्र आदि नहीं पाये जाते हैं। अपितु सामाजिक अहम तथा कार्य के प्रति अधिक लगाव होने के कारण इस तरह के अपराध घटित होते हैं। अहस्तक्षेपीय अपराधों का ग्रामीण क्षेत्रों में दिन के समय घटित होना भी यही दर्शाता है कि यह अपराध पूर्व नियोजित गंभीर अपराध नहीं बल्कि साधारण मानवीय व्यवहार में उत्पन्न होने वाले अपराध हैं जिनका विश्लेषण सामाजिक कारकों में ही किया जाना संभव है।

न्यायिक प्रक्रिया पर राजनैतिक कारकों के प्रभाव का अध्ययन करने में अत्यधिक कठिनाई का अनुभव किया गया है। कोई भी उत्तरदाता अपने राजनैतिक प्रभाव के प्रयोग को स्वीकार नहीं करता है। पीड़ित अपराधी एवं साक्षी कोई भी आसानी से सत्य बोलने को तैयार नहीं होता है। अतः सत्यता की जानकारी करने के लिये उत्तरदाताओं से प्राप्त उत्तरों के अतिरिक्त गाँव व पड़ोस के अन्य व्यक्तियों से भी पूछताछ कीगयी। पुलिस कर्मचारी एवं अन्य निष्पक्ष व्यक्तियों से भी

पूछताछ की गयी । पुलिस कर्मचारी एवं अन्य निष्पक्ष व्यक्तियों से भी सामान्य चर्चा की गयी । अनेक स्त्रोतों से प्राप्त जानकारी में यह पाया गया कि जनपद में अहस्तक्षेपीय अपराधों से राष्ट्रीय राजनीतिक पार्टियों का संबंध नगण्य पाया गया है । इन अपराधों के विचारण में भी राजनैतिक पार्टियों का प्रभाव नगण्य है । इसका संभावित कारण यह हो सकता है कि राजनैतिक रूप से प्रभावित अपराधी के विरुद्ध रिपोर्ट ही नहीं लिखी जाती हो या विवेचना नहीं की जाती हो । अहस्तक्षेपीय अपराध साधारण किस्म के अपराध होते हैं और जिन अहस्तक्षेपीय अपराधों की विवेचना पुलिस करती है, उनमें पीड़ित सामान्यतः निम्न सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति के होते हैं और उन्हें आसानी से दबाया जा सकता है । अहस्तक्षेपीय अपराधों के कारणों तथा विचारण में ग्रामीण स्तर की दलबन्दी एवं ग्रामीण नेतृत्व का भारी संबंध पायागया है । उत्तरदाताओं से बहुत सावधानी पूर्वक पूछने पर उन्होंने ग्रामीण गुटबन्दी से अपना संबंध होना स्वीकार किया है । गुटबन्दी या तो विवाद होने के कारण से रही है या विवाद होने के बाद प्रत्येक पीड़ित और अपराधी किसी गुट से संबंधित हो गये हैं ।

बुन्देलखण्ड क्षेत्र के जनपद झाँसी में सवर्ण जातियों में हरिजनों की अपेक्षा ग्रामीण नेतृत्व से सम्बद्धता अधिक पायी जाती है । साक्षियों में भी गुटबन्दी की प्रवृत्ति अधिक पायी गयी है । सेवक जातियों में अपेक्षाकृत कम संबंध गुटबन्दी से पाया गया है । अशिक्षितों की अपेक्षा शिक्षितों में ग्रामीण दलबन्दी से अधिक सम्बद्धता है । युवा एवं वृद्धों में राजनीति से अधिक लगाव पाया गया है । इसके विपरीत वयस्कों में राजनीति से कम सम्बन्ध पाया गया है । बेरोजगार तथा विद्यार्थियों में स्थानीय गुटबन्दी से सम्बद्धता सर्वाधिक पायी गयी है । पीड़ित कृषकों की अपेक्षा अपराधी तथा साक्षियों में ग्रामीण नेतृत्व से अधिक

सम्बद्धता पायी गयी है । राजनैतिक चेतना न होने के कारण हरिजनों के उत्थान पर विपरीत प्रभाव पड़ता है । अतः इनमें राजनैतिक चेतना शिक्षा तथा अन्य सामाजिक संस्थाओं द्वारा जागरूकता उत्पन्न की जानी चाहिये ।

बुन्देलखण्ड क्षेत्र के जनपद झाँसी के ग्रामीण क्षेत्रों के सामान्य व्यक्ति स्थानीय,प्रान्तीय एवं केन्द्रीय राजनैतिक गुटबन्दीओं से परिचित प्रतीत होते हैं । सामान्य व्यक्तियों से साक्षात्कार के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि सम्वैधानिक प्राविधानों के बारे में निम्न वर्गीय व्यक्तियों में जागरूकता नहीं है । यद्यपि वयस्क मताधिकार एवं प्रान्तीय व केन्द्रीय सरकारों द्वारा सुविधा के सम्बंध में जो नियम बनाये गये हैं उनके बारे में जानकारी जनपद के ग्रामीण अंचलों में विद्यमान है । ग्रामीण चुनावों में जिनमें ग्राम प्रधान एवं ब्लाक प्रमुख के पद प्रमुख हैं, ग्रामीण क्षेत्रीय जनता अत्यधिक जागरूक व सजग है । यद्यपि इसमें उनका आर्थिक स्तर बाधक बनता है और उसका लाभ लेकर सम्पन्न व्यक्ति स्थानीय निकायों के चुनाव में धन का दुरूपयोग करते हैं । वर्तमान शोध प्रबन्ध केलिये चयनित अहस्तक्षेपीय अपराधों के संबंधित ग्रामीण उत्तरदाताओं ने प्रत्यक्ष रूप से किसी राष्ट्रीय राजनैतिक व्यक्ति या दल से सम्बन्ध होना नहीं बताया है । वर्तमान शोध तथ्यों से समरूपता रखने वाले शोध पत्रों के अभाव में इसका तुलनात्मक अध्ययन नहीं किया जा सकता है ।

वर्तमान अध्ययन की उपलब्धियों के आधार पर यह स्पष्ट निष्कर्ष प्राप्त होता है कि व्यक्तियों का ग्रामीण दलबंदी से संबंध सामयिक एवं व्यवसायिक है। अतः अपरोक्ष रूप से अहस्तक्षेपीय अपराधों के सन्दर्भ की न्यायिक प्रक्रिया इन कारणों से प्रभावित

होती है । अतः प्रस्तावित परिकल्पना की पुष्टि का आधार वर्तमान अध्याय की उपलब्धियों के द्वारा निर्मित होता है ।

=:=:=:=:=:=:=:=:=:=

अध्याय - ६

न्याय प्रणाली एवं संबन्धित कारक

१. सामान्य विवरण
२. पुलिस प्रशासन
३. अहस्तक्षेपीय अपराधों का स्वरूप
४. न्याय प्राप्ति
५. दलाल
६. विश्लेषण

1. सामान्य विवरण
============

वर्तमान शोध विषय जो विषयवस्तु की दृष्टि से स्वतः में व्यापक है, के अन्तर्गत कुछ कारक ऐसे हैं, जिनका वर्णन पिछले अध्यायों में विस्तृत रूप से नहीं हो सका है । वर्तमान कार्य से सम्बन्धित इन कारकों का विवरण वर्तमान अध्याय में क्रमानुसार दिया जा रहा है । शोध विषय की तारकिकता एवं एकरूपता को देखते हुये यह आवश्यक है कि इस अध्याय में वर्णित कारकों को सामाजिक, आर्थिक राजनैतिक एवं धार्मिक व्यवस्थाओं की मात्र एक कड़ी ही समझा जाये ।

प्राचीन भारतवर्ष के समय में अपराध एवं दण्ड प्रक्रिया के संदर्भ में जो मान्यतायें विद्यमान थी उनका विवरण तालिका संख्या 34 में प्रदर्शित किया गया है । प्राचीनकाल में बुन्देलखण्ड क्षेत्र में शेष भारतवर्ष के समान निम्न वर्गों के व्यक्तियों को अधीनता में रखने के लिये प्रभुत्व सम्पन्न वर्ग व्दारा कानून एक यन्त्र के रूप में बनाया और उपयोग किया जाता था । इससे परिणामस्वरूप गरीबी का चिर स्थाईकरण हो गया । दार्शनिक प्लेटो के अनुसार कानून आचरण को नियन्त्रित करने की सोची हुई रूढ़ि है और इसीलिये यह एक स्वेच्छाचारी शक्ति है । जिसकी अवज्ञा करना व्यक्ति की क्षमता पर निर्भर करता है । प्राचीन युग में न्याय भी पक्षपातपूर्ण था । वस्तुतः सामान्य अपराधी के लिये अल्पतया निम्न वर्गों को दण्ड कठोर था । इस व्यवस्था में ब्राह्मणों को बहुत आसान दण्ड का प्राविधान था अनेकों भेदभाव पूर्ण कानून शूद्रों के हितों के विरूद्ध थे ।

वर्तमान शोध विषय के लिये तथ्य इकत्रित करते समय अहस्तक्षेपीय अपराधों के पीड़ित व्यक्तियों से अनुसूची के माध्यम से यह जानने का प्रयास किया गया कि वह अपराधी को दण्ड क्यों नहीं दिलाना चाहते हैं । अधिकांश पीड़ितों ने यह मत व्यक्त किया कि "जो कुछ घटित होना था वह तो घटित हो गया अब अपराधी को दण्ड अलौकिक शक्ति के व्दारा

तालिका संख्या ¦ 34 ¦ प्राचीन भारत वर्ष की दण्ड संहिता का

संक्षिप्त विवरण

क्र०सं० 1.	अपराध 2.	अपराधी 3.	पीड़ित 3.	अपराधी के लिये दण्ड 4.
1.	हत्या	कोई भी	क्षत्री	ब्राह्मण के लिये 100 गायें देना ।
2.	हत्या	कोई भी	वैश्य	ब्राह्मण के लिये 100 गायें देना ।
3.	हत्या	कोई भी	शूद्र	ब्राह्मण के लिये 10 गायें देना ।
4.	गाली देना	क्षत्री	ब्राह्मण	कर्षमण
5.	गाली देना	क्षत्री	ब्राह्मण	200 कर्षमण
6.	गाली देना	वैश्य	ब्राह्मण	150 कर्षमण
7.	गाली देना	ब्राह्मण	क्षत्री	50 कर्षमण
8.	गाली देना	ब्राह्मण	वैश्य	25 कर्षमण
9.	गाली देना	ब्राह्मण	शूद्र	कोई सजा नहीं ।
10.	गाली देना ¦झिड़कना¦	वैश्य	क्षत्री	100 पण
11.	झिड़कना	क्षत्री	वैश्य	50 पण
12.	गाली देना ¦झिड़कना¦	क्षत्री	शूद्र	20 पण
13.	गाली देना	शूद्र	वैश्य	जुर्माना
14.	गाली देना ¦झिड़कना¦	शूद्र	क्षत्री	नं. 13 से दुगुना जुर्माना ।
15.	गाली देना "	शूद्र	ब्राह्मण	अधिकतम जुर्माना।
16.	गाली देना "	क्षत्री	ब्राह्मण	100 पण
17.	गाली देना "	वैश्य	ब्राह्मण	150 से 200 पण
18.	गाली देना "	शूद्र	ब्राह्मण	शारीरिक दण्ड

1	2.	3.	4.	5.
19.	अपमान	ब्राह्मण	क्षत्री	50 पण
20.	अपमान	ब्राह्मण	वैश्य	25 पण
21.	अपमान	ब्राह्मण	शूद्र	12 पण
22.	हत्या	कोई भी	ब्राह्मण	प्रायश्चित
23.	हत्या	कोई भी	क्षत्री	ब्राह्मण की हत्या के दण्ड का 1/4,
24.	हत्या	कोई भी	वैश्य	ब्राह्मण की हत्या के दण्ड का 1/8,
25.	हत्या	कोई भी	शूद्र	ब्राह्मण की हत्या दण्ड का 1/16,
26.	वध करना	ब्राह्मण	क्षत्री	100 गायें तथा बैल या कठिन कारावास।
27.	वध करना	ब्राह्मण	वैश्य	एक वर्ष की सजा एवं ब्राह्मण को 10 गायें देना।
28.	वध करना (स्वेच्छा से)	कोई भी	शूद्र	6 माह की सजा कठोरतापूर्वक या 10 सफेद गायें या एक बैल ब्राह्मण को देना।
29.	निम्न वर्ग द्वारा उच्च जाति का अपमान	कोई भी	उच्च जाति	हाथ पैर काटना।
30.	अपमान -			
(1)	उच्चासन पर बैठकर अनियमितता करना	कोई भी	" "	चूतड़ों को दागना।
(2)	उच्चजाति पर थूकना	"	" "	दोनों ओंठ काटना।
(3)	उच्चजाति के विरुद्ध वातावरण बनाना	"	" "	पिछला हिस्सा काटना।
(4)	अनुचित भाषा	"	" "	जीभ काटना।
(5)	उच्चजाति को गर्व के साथ कर्तव्यों का निर्देश	"	" "	गर्म तेल मुँह में डालना।
(6)	उच्च वर्ग का नाम अपमानित भाषा में लेना	"	" "	10 अंगुली लम्बी गर्म लोहे की पिन मुंह में डालना

1.	2.	3.	4.	5.
6।	उच्चवर्ग का नाम	कोई भी		10 अंगुली लम्बी गर्म लोहे की पिन मुंह में डालना ।
7।	धर्म का उपदेश देना और ब्राह्मण की अवमानना करते हुये वेदोच्चारण	शूद्र		जीभ काटना ।
8।	जानबूझ कर वेद सुनना	शूद्र		पिघला तांबा कान में भरना ।
9।	वेद का पाठ करना।	शूद्र		जीभ काटना ।
10।	शूद्रों को पढ़ाना या उनसे सीखना ।	द्विज		धार्मिक कार्यों में आमन्त्रित होने के अयोग्य होना ।
11।	शूद्रों को भोजन देने की सलाह देने ।	द्विज		नरक के अंधेरेमें शूद्र के साथ डूबेगा ।
12।	धार्मिक मामलों में निर्देश देना ।	द्विज		नरक के अंधेरे में शूद्र के साथ डूबेगा ।
13।	जारता	द्विज	शूद्र महिला	लुप्त हो जायेगा ।
14।	जारता	शूद्र	द्विजमहिला	मृत्यु दण्ड ।
15।	अपराधिक बलात्कार	शूद्र	कोईऔरत	लिंग काटा जायेगा एवं सम्पत्ति राज्य साथ होगी ।
16।	द्विज की लड़की से प्यार करना।	शूद्र	द्विजऔरत	शारीरिक दण्ड ।
17।	द्विज की लड़कीसे सहवास करना ।	शूद्र	द्विजऔरत	यदि लड़की संरक्षित नहीं है तो अपराध के सदस्यों को नष्ट करना एवं सम्पत्ति जप्त करना ।
18।				
18।	अपराधिक गाली देना या प्रहार करना आग्रह पूर्वक ।	शूद्र	द्विज औरत	जिस अंग से अपराध करे उस अंग को काटना ।
19।	बात-चीत में नीचा दिखाना या बराबरी करना ।	शूद्र	द्विजऔरत	शारीरिक दण्ड ।

1.	2.	3.	4.	5.
।20।	कठोर शब्दों से प्रहार	शूद्र	द्विज	जीभ काटना ।
।21।	अपमानित करते हुये नाम लेना ।	शूद्र	द्विज	10 अंगुल लम्बी गर्म लोहे छड़ डालना ।
।22।	पुजारी को कर्तव्य निर्देश देना।	शूद्र	ब्राह्मण	खौलता हुआ तेल मुंह,कानों में डालना ।
।23।	हाथ उठाना ।	शूद्र	द्विज	हाथ काटना।
।24।	पंजों से मारना ।	शूद्र	द्विज	पैर काटना ।
।25।	उच्च वर्ग के बगल में बैठना ।	शूद्र	द्विज	चूतड़ दागकर देश निकाला देना या पिछलाहिस्साकाटना।
।26।	थूकना ।	शूद्र	द्विज	होंठ काटना ।
।27।	पेशाब करना ।	शूद्र	द्विज	लिंग काटना ।
।28।	वातावरण प्रदूषितकरना	शूद्र	द्विज	गुदा काटना ।
।29।	बाल रखना ।	शूद्र	द्विज	दोनों हाथ काटना।
।30।	झूठा आरोप लगाना।	शूद्र	द्विज	जीभ काटना ।
।31।	अपमानित करते हुये अवमानना करना ।	शूद्र	द्विज	जीभ काटना, गर्म छड़ 10 अंगुल लम्बी मुंह में घुसेड़ना ।
।32।	ब्राह्मणों को कर्तव्य	शूद्र	ब्राह्मण	गर्म तेल मुंह, कान में डालना ।
।33।	अपराध करना ।	शूद्र	द्विज	संबंधित अंग काटना ।
।34।	उच्च जाति के साथ बैठना ।	शूद्र	द्विज	चूतड़ पर दाग कर देश निकाला देना ।
।35।	उद्दण्डतापूर्वक थूकना	शूद्र	द्विज	दोनों ओंठ काटना ।

स्रोत : काम्बले, 1982 ।

ही प्राप्त होगा" । अनेकों भौतिक कारकों के साथ ही यह मनोवैज्ञानिक व धार्मिक कारक भी न्यायिक प्रक्रिया को अधिक सीमा तक प्रभावित करता है । वर्तमान अध्ययन में बहुत कम पीड़ितों में प्रतिशोध की भवना पायी गयी है । बुन्देलखण्ड क्षेत्र की संस्कृति परम्परागत रूप से धर्म प्रधान होने के कारण इस अध्ययन के अन्तर्गत धार्मिक विश्वास पीड़ितों में अधिक पाया गया है । वर्तमान अध्ययन के अपराधियों से तत्संबंधित अपराध की वास्तविकता पूछने पर सभी अपराधी यह कहते है कि उन्होंने कुछ नहीं किया है । वर्तमान शोधकार्य में ऐसे अनेकों दृष्टान्त मिले है जिनमें यह निश्चित जानकारी मिली कि अपराधी व्दारा अपराध कारित किया गया था एवं ऐसे अपराधियों ने भी अपराध के संदर्भ में नकारात्मक मत व्यक्त किया है । इसके फलस्वरूप इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है कि असत्तक्षेपीय अपराध उच्च वर्ग के अपराधियों की दृष्टि में कोई अपराध नहीं होते हैं । प्राय: अपराधों की रिपोर्ट पुलिस थाने पर की जाती है या नहीं यह तथ्य अपराधी के सामाजिक प्रभाव पर निर्भर करता है । प्राचीन भारतीय परम्पराओं में उच्च वर्ग के व्यक्तियों को विभिन्न वर्ग के व्यक्तियों के विरुद्ध साधारण अपराध कारित करने का विशेष अधिकार प्राप्त था । वर्तमान समय में इस विशेष अधिकार के समाप्त होने से उच्च वर्गों के अपराधियों का अभियान किया जाता है । अत: अपराधी यह नहीं मानते है कि उन्होंने कोई अपराध किया है । बल्कि अपराधी के विरुद्ध रिपोर्ट करने को प्रोत्साहन देने वालों के तथा साक्षियों को इसका उत्तरदायी मानते हैं । इस निष्कर्ष की पुष्टि वेनुगोपाल । 1983 । के व्दारा भी होती है । इन्होंने अपने अध्ययन में व्यक्त किया है कि यदि गम्भीरता से कानून पर विश्वास नहीं किया जाये तो इसप्रकार के कानूनों का उल्लंघन हमें कभी अपराध प्रतीत नहीं होगा ।

वर्तमान अध्ययन में साक्षियों का अधिकतम प्रतिशत इस मत का है कि अपराधियों से विरोध नहीं लेना चाहिये । इस अध्ययन में साक्षियों का अभाव पाया गया है । अधिकांश साक्षी अपने हितों के अनुरूप साक्ष्य देने में प्रवृत्त दिखाई देते हैं । भारतीय अपराधिक न्याय प्रशासन में साक्षी अपने व्यक्तिगत महत्व से परिचत है । साकि इनमें निष्पक्ष साक्ष्य देने की भावना के विपरीत अपराधी पीड़ित या इनके संबंधियों के प्रभाव के अनुरूप साक्ष्य देने की प्रवृत्ति विद्यमान है । साक्षियों की इस प्रवृत्ति के बारे में जानकारी प्राप्त करने पर उनका कहना है कि परेशानियों के अतिरिक्त उन्हें और क्या मिलना है । सामान्यतः परेशानियों से बचाव के लिये साक्षीगण पीड़ित एवं अपराधी के मध्य समझौता कराने का प्रयास भी करते हैं । किसी सीमा तक अपने साक्ष्य का मूल्य भी अनेकों प्रकार से प्राप्त करना साक्षियों की प्रवृत्ति है । ✓सहनशीलता और क्षमा करने की प्रवृत्ति निर्धन एवं अल्प विकसित पीड़ित व्यक्तियों में अधिक पायी गयी है । इसका कारण उनकी प्राचीन सामाजिक मान्यतायें एवं दुर्बल सामाजिक परिस्थितियां हैं । (1983) के मतानुसार बहुत आध्यात्मिक परम्पराओं के बाद भी, भारतीय समाज ने कभी भौतिक मूल्यों को समाप्त नहीं किया है । जिस तरह भारतीय प्राचीन संस्कृति में भौतिक एवं आध्यात्मिक पहलू साथ-साथ चलते रहे हैं, इसी तरह आज भी समाज में दोनों पहलू विद्यमान हैं । यही कारण है कि चोर बाजारी करने वाले व्यक्ति सामाजिक एवं धार्मिक संस्थाओं को दान देते हैं । अनैतिक रूप से प्राप्त सम्पत्ति का लोग मन्दिर, मस्जिद एवं अन्य धार्मिक कार्यों में देते है । वर्तमान समाज के अपराधकर्मी समाज की दृष्टि में अधिकांश समय पूजा पाठ एवं धार्मिक आडम्बरों में लिप्त देखे जाते हैं । इस तरह की दोहरी मान्यतायें आज भी इस देश में विद्यमान हैं ।

2. पुलिस प्रशासन

पुलिस तथा अन्य सामाजिक संस्थाओं का प्रभाव न्यायिक प्रक्रिया पर रहता है । भारत वर्ष में पुलिस सदैव आलोचना की शिकार रही है । इसका मूल कारण अंग्रेजों व्दारा छोड़ी गयी परम्परायें हैं । भारतीय ग्रामीण जनता का पुलिस पर विश्वास नहीं है । आम नागरिक कानून की पेचीदागियां नहीं समझता है और पुलिस को प्राय: वास्तविकता के विपरीत जोड़ घटा कर तथ्य पेश करने होते है । अधिकांश अपराध ऐसी परिस्थितियों होते है जहां कोई साक्षी नहीं होता है अथवा साक्षी साक्ष्य नहीं देना चाहते है । वर्तमान कानून साक्ष्य के अभाव में अपराधी को दण्डित नहीं कर सकता है । ऐसी परिस्थितियों में मिथ्या साक्ष्य का होना स्वाभाविक है ।

3. अहस्तक्षेपीय अपराधों का स्वरूप

सामान्यत: अहस्तक्षेपीय अपराधो जैसे डकैती आदि जघन्य अपराधों में अपराधी को पीड़ित घटना के पूर्व से नहीं जानता है । न्याय-प्रशासन की दृष्टि से पीड़ित एवं साक्षियों से अपराधी की शिनाख्त करवाई जाती है । अपराधी के चेहरे के विशिष्ट चिन्ह जैसे, तिल, मस्सा, चोट का निशान आदि को छिपा लिया जाता है और ऐसे ही दस अन्य बन्दियों के साथ मिलाकर अपराधी को खड़ा किया जाता है । मजिस्ट्रेट के सामने साक्षी को उस अपराधी को पहिचानने के लिये कहा जाता है, जिसने अपराध कारित किया था । प्राय: इस शिनाख्त कार्यवाही में साक्षी अपराधी को नहीं पहचानते है । इसके अनेकों कारण है । साक्षी को जेल के के अन्दर जाने में मानसिक कष्ट होता है । जेल के अन्दर सभी कैदी

अपराधी की सहायता करना चाहते हैं और साक्षियों का मनोबल गिरता है। साक्षियों को यह भय भी रहता है कि शिनाख्त के बाद उनकी क्या सुरक्षा है। शिनाख्त कार्यवाही से संबंधित अधिकांश कार्य जेल के अन्दर कैदी करते हैं, जो प्रायः अपराधी के सहायक होते हैं और निश्चित ही इसका प्रभाव साक्षी पर पड़ता है। अपराध कारित करते समय अपराधी अपना वेष बदले रहता है और इससे शिनाख्त करने में कठिनाई होती है। सम्पत्ति की शिनाख्त के समय और भी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। पीड़ित की सम्पत्ति के समान ही अन्य तीन सम्पत्तियां रख दी जाती है तथा शिनाख्त किये जाने वाली सम्पत्ति के विशिष्ट चिन्ह छिपा दिये जाते हैं। इस समय पीड़ित को अपनी सम्पत्ति उठाकर भी नहीं देखने दिया जाता है। एक ही सांचे में ढली सम्पत्ति जेवरातों को कैसे पहिचाना जाये यह कठिन समस्या है किन्तु अपराधिक न्याय प्रशासन में अपराधी के हितों के संरक्षण के कारण पीड़ित अपनी ही सम्पत्ति को नहीं पहिचान पाता है। कभी कभी यह भी देखा गया है कि अपराधी कानून की पेचीदगियों का लाभ उठा कर पीड़ित की सम्पत्ति को अपना कह देते हैं और साक्ष्य देकर सम्पत्ति प्राप्त करने में भी सफल हो जाते हैं। पीड़ित अपनी निर्धनता के कारण उच्च स्तरीय विधि सहायता के अभाव में माल का स्वामी होते हुये भी उसे प्राप्त नहीं कर पाता है। ऐसी स्थिति में पीड़ित का न्याय प्रक्रिया से विश्वास उठाना स्वाभाविक प्रतीत होता है।

4. न्याय प्राप्ति

अहस्तक्षेपीय अपराधों की वैधानिक स्थिति यह है कि इन अपराधों में प्राथमिक सूचना रिपोर्ट से लेकर न्यायालय में आरोप-पत्र देने तक की प्रक्रिया में अपराधी पुलिस के सम्पर्क में नहीं आता है। इसके विपरीत

पीड़ित एवं साक्षी को विवेचना के दौरान अनेकों बार पुलिस के सम्पर्क में आना पड़ता है । जिससे पीड़ितों एवं साक्षियों के नित्य कार्यों की क्षति होती है और पुलिस के अरूचिकर व्यवहार के कारण उन्हें कठिनाई होती है । इसके विपरीत अपराधी सीधा न्यायालय में उपस्थित होता है तथा जमानत उसे अधिकार स्वरूप प्रदान की जाती है । अनेकों बार पुलिस कार्यवाही से पीड़ित तंग अनुभव करने लगता है और उसका मनोबल गिर जाता है । विचारण के दौरान भी न्यायालय में अपराधी अच्छी आर्थिक स्थिति के कारण सक्षम वकील की सहायता से अपनी प्रतिष्ठा स्थापित कर लेता है इसके विपरीत पीड़ित असहाय आर्थिक स्थिति में रहता है । इस कारण उसमें हीनता की भावना आती है जिसका प्रभाव उसके साक्ष्य के माध्यम से न्यायिक प्रक्रिया पर पड़ता है ।

5. दलाल

अपराधिक न्याय प्रशासन की जटिलताओं के कारण कुछ व्यक्ति अवैधानिक रूप से न्याय प्रशासन की प्रक्रिया में संलग्न हो गये हैं । ग्रामीण क्षेत्रों की अधिकांश जनता न्यायालयों व प्रशासकीय विधियों से अनभिज्ञ होती है । इस अनभिज्ञता का लाभ कतिपय व्यक्ति उठाते हैं । ऐसे व्यक्ति स्वयं कोई कार्य नहीं करते है बल्कि स्वयं को किसी अधिकारी, कर्मचारी, अभिभक्ता नेता या किसी प्रभावशाली व्यक्ति या उनके संबंधियों से संबंधित बताते हैं । गांव के अनपढ़ व्यक्तियों की समस्याओं का समाधान करने का आश्वासन ऐसे लोग देते हैं तथा रिश्वत एवं खर्चे के नाम पर ग्रामीणों से पैसा वसूल करते हैं । यह व्यक्ति अपराध होते ही सक्रिय हो जाते है और विवेचना से लेकर विचारण तक किसी न किसी रूप में किसी भी पक्ष से संबंधित रहते हैं । ग्रामीण जन इन्हें अपना शुभचिन्तक समझते हैं, किन्तु वास्तव में यह व्यक्ति दलाली करते हैं । इन कार्यों में सदैव संलग्न रहने के कारण आम नागरिक की अपेक्षा इनके संबंध वकीलों से अच्छे बन जाते हैं ।

ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षित व्यक्तियों की कमी के कारण यही दलाल ग्रामीण क्षेत्रों में कानूनी सलाहकार होते हैं । साक्षियों को प्रभावित करने के लिये अनेकों तरीकों का प्रयोग इनके व्दारा होता है । इनमें सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक कारक प्रमुखता रखते है । न्यायालयों व्दारा निर्गत सम्मन आदि दस्तावेजो पर अपने पक्षकार के हित की आख्या लगवा कर, विरोधियों को परेशान करने का कौशल दलाल करवाते है । प्रत्यक्ष रूप से दलालों की गतिविधियों का प्रभाव न्यायिक कार्यवाही पर अपेक्षाकृत कम होता है किन्तु इनके व्दारा निर्मित वातावरण से प्रभावित होकर पीड़ित व साक्षियों का मनोबल गिर जाता है । इसका कारण यह अपनी सफलता को संदिग्ध मानकर अपना साक्ष्य बदल देते है । आवश्यकता पड़ने पर यह दलाल साक्ष्य एवं जमानत देते हैं और अनेकों अवैधानिक गतिविधियाँ करते है । अत: ग्रामीण जनपदों में नि:शुल्क कानूनी सलाह की गतिविधियों के बढ़ाये जाने की महती आवश्यकता है । अन्यथा प्रत्येक गांव में उपस्थित यह दलाल व्यक्ति अपने प्रभाव से नागरिकों का शोषण करते रहेंगें । इसके फलस्वरूप न्यायिक प्रक्रिया प्रभावित होती रहेगी ।

वर्तमान अध्ययन में अत्याधिक महत्वपूर्ण तथ्य यह विश्लेषित किया गया कि भौतिक विकास के साथ ही समाज की नैतिक मान्यतायें समाप्त होती जा रही हैं । ग्रामीण व्यक्ति भी यह चाहते है कि किसी भी प्रकार से उनका काम बने । आम नागरिकों में भ्रष्ट साधनों व्दारा अर्जित की गयी उपलब्धियों को भी उचित मानने की प्रवृत्ति पायी गयी है । ऐसा अनुभव किया जाता है कि निष्ठावान और ईमानदार व्यक्तियों का प्रभाव समाज में अपेक्षाकृत कम होता जा रहा है । यह धारणा विशेष कर न्याय प्रशासन के संबंध में सही प्रतीत होती है ।

सामान्यतः अधिकांश व्यक्ति साधनों की अपेक्षा साध्य पर बल देते हैं। दुर्भाग्य से यह प्रवृत्ति सम्पूर्ण समाज में दृष्टिगोचर होती है और यही कारण है कि दलालों को सामाजिक प्रतिष्ठा भी प्राप्त है।

न्यायाधीशों की निर्धारित कोटा व्यवस्था भी किसी हदतक अप्रत्यक्ष रूप से न्याय की गरिमा को प्रभावित करती है। प्रत्येक मजिस्ट्रेट को एक माह में एक निश्चित संख्या में वाद निर्णीत करने होते हैं। इस कोटा को पूरा करने में अहस्तक्षेपीय वाद, मजिस्ट्रेटों के लिये बहुत उपयोगी सिद्ध होते हैं। विरोधी साक्षी का साक्ष्य लिखने में न्यायालय का कम समय लगता है और उसकी व्याख्या करने में भी न्यायाधीश को कम समय देना पड़ता है। अतः कोटा व्यवस्था के कारण विरोधी साक्ष्य लिखने में न्यायालय का रुझान होना स्वाभाविक बात है। ऐसे साक्षी से वकील भी कम समय चर्चा करते है। इसके विपरीत अभियोजन का समर्थन करने वाली साक्षी के साथ में अधिक समय लगता है।

6. विश्लेषण

उपलब्ध विषय सामग्री में पुलिस एवं न्यायाधीन अभिलेखों साक्षात्कार अनुसूची एवं अवलोकन से प्राप्त जनकारी के आधार पर अहस्तक्षेपीय अपराधों के कारणों का विश्लेषण किया गया और इसमें प्राप्त निष्कर्षों को तालिका संख्या 35 से प्रदर्शित किया गया है। इस तालिका में प्राप्त विवरणों से यह ज्ञात होता है कि अहस्तक्षेपीय अपराधों का होना धार्मिक कारणों से मात्र एक प्रतिशत है। इससे निष्कर्ष निकलता है कि जनपद में धर्म सामाजिक नियन्त्रण में तो सहायक है किन्तु विघटन में इसकी कोई भूमिका नहीं है। वर्तमान अध्ययन में 25 प्रतिशत अपराध आर्थिक कारणों से होना पाया गया है। इनमें अधिकांशतया भूमि, जानवर, सिंचाई, फसलों आदि के कारण हुये है। कृषि प्रमुख जीविकोपार्जन का साधन है और अन्य व्यवसायों की कमी

होने के कारण कृषि के कारण विवाद होना स्वाभाविक है ।
स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद से भारत वर्ष में आर्थिक क्रियाकलापो में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुये हैं । पिछड़े और कमजोर वर्ग के व्यक्तियों को कृषि योग्य जमीने दी गयी हैं ।
स्वतन्त्रता एवं प्रजातन्त्रीकरण के परिणामस्वरूप निम्न जातियों के समर्थन के आधार पर शक्ति का नया ध्रुवीकरण हुआ है । आर्थिक गतिविधियों का भी विकेन्द्रीकरण हुआ है । व्यक्तिगत-स्तर से संघर्ष ग्राम पंचायत तथा नगरपालिकाओं के नेतृत्व तक बढ़े है । प्रजातान्त्रिक प्रणाली के विकास के कारण हरिजनों में चेतना जाग्रत हुई है । इससे उनकी स्थिति में निरन्तरता, हस्तानान्तरण, संघर्ष और विचलन की नयी धारणा बनी है । वर्तमान अध्ययन में सर्वाधिक 37 प्रतिशत अपराध अनेक पुराने कारणों से पाये गये हैं । वर्तमान में भारतीय ग्रामों में स्थानीय गुटबन्दी संघर्ष का प्रमुख कारण है । वस्तुतः राजनीति का कोई स्पष्ट प्रमाण अहस्तक्षेपीय अपराधों में कारण के रूप प्राप्त नहीं हुआ है । किन्तु अप्रत्यक्षरूप से ग्रामीण गुटबन्दी राजनीति का ही रूप प्रतीत होती है । शक्ति सम्पन्न वर्ग प्राचीन काल से अपराधिकता में प्रवृत्त रहा है । इतिहास से विदित है कि भारत के राजाओं में अपराधिकता किसी अन्य वर्ग से अधिक रही है । शारीरिक बल प्रयोग के अतिरिक्त अनेक गूढ़ माध्यमों व्दारा समाज में अपराध कारित किये जाते है । अनेक हस्तक्षेपीय अपराधों से पीड़ित ऐसे पाये जाते हैं जिनको मात्र इसलिये उत्पीड़ित किया गया कि वह अपराधी के विरोधी व्यक्ति के यहाँ मजदूरी या अन्य कार्य करते हैं । जनपद झाँसी में ग्रामीण नेतृत्व सवर्णों में निहित है और शक्ति का संतुलन बनाये रखने हेतु हरिजनों को व्यक्तिगत क्षमता व्दारा गुटों में बांट दिया गया है । जिससे हरिजनों का उत्पीड़न एवं हितवर्धन भी होता है ।

तालिका संख्या (35) का अवलोकन करने से स्पष्ट है कि सामाजिक अपराध 12 प्रतिशत पाये गये हैं । यह अपराध सामान्यतया कुँये के पानी, रास्ता, बालश्रम, भोज, विद्यालय एवं जातिगत विद्वेष के कारण पाये गये हैं । इसके अतिरिक्त अन्य कई कारण भी असत्सक्षेपीय अपराधों के पाये गये हैं जैसे दुर्घटना, साक्ष्य का प्रतिशोध, शराब पीना, औरतों से अवैध संबंध एवं अपराधिक कृत्य आदि । इस तरह के सामाजिक अपराध निश्चित ही परम्परागत मनोवृत्तियों तथा मान्यताओं के कारण उत्पन्न हुये हैं । इससे यह स्पष्ट होता है कि वर्तमान समय में झाँसी जनपद का ग्रामीण सामाजिक ढाँचा परिवर्तन के क्रम में है और प्राचीन मान्यतायें पूर्णतया समाप्त नहीं हुई हैं । मनोवैज्ञानिक कारण भी प्राचीन रूढ़ियों से संबंधित हैं और इनमें सुधार की आवश्यकता है ।

उपलब्ध विषय सामग्री के असत्सक्षेपीय वादों के विचारण में अधिकांश वादों में पीड़ित एवं अपराधियों में समझौते हुये हैं । जिन वादों में न्यायालय में समझौते स्वीकार नहीं हो सके, उनमें पक्षकारों ने न्यायालय कक्ष के बाहर राजीनामे किये हैं और अपने साक्ष्य को बदल कर अभियुक्तों को विमुक्त कराया है । अतः स्वाभाविक रूप से यह जिज्ञासा उत्पन्न होती है कि अधिकांश समझौते के क्या कारण हैं । दण्ड प्रक्रिया संहिता 1973 की धारा 320 में भारतीय दण्ड विधान 1860 में उन अपराधों का वर्गीकरण है जिनमें सुलह हो सकती है । इसी धारा में यह भी उल्लेख है कि कौन व्यक्ति सुलह कर सकता है । सामान्यतः साधारण अपराध जो अधिकतर असत्सक्षेपीय होते हैं इस धारा के अन्तर्गत सुलह किये जा सकते हैं और सुलह करने का अधिकार पीड़ित को दिया गया है । इस धारा की उपधारा 2 में भारतीय दण्ड विधान के उन अपराधों का उल्लेख किया गया है जो कि पीड़ित

तालिका संख्या । 35 । जनपद झाँसी में अहस्तक्षेपी अपराधों के कारणों का वर्गीकरण । प्रतिशत में ।

क्रम संख्या	अपराध के कारण	अहस्तक्षेपीय अपराधों का प्रतिशत
1.	सामाजिक	12
2.	आर्थिक	25
3.	राजनैतिक	37
4.	मनोवैज्ञानिक	15
5.	धार्मिक	01
6.	अन्य	10
	कुल योग	100 प्रतिशत

द्वारा उस न्यायालय की आज्ञा से जिसमें अपराध का विचारण होना है सुलह किये जा सकते है । इसकीउपधारा । की अपेक्षा कुछ गम्भीर तथा अधिकांशतः हस्तक्षेपीय अपराध हैं । धारा 320 दण्ड प्रक्रिया संहिता 1974 में अपराधों के वर्गीकरण का आधार राज्य के लिये अपराध की गंभीरता है । नागरिकों के विरुद्ध छोटे अपराध जिनमें समुदाय या राज्य की गंभीर छति नहीं होती है बिना राज्य की आज्ञा के पीड़ित द्वारा सुलह किये जा सकते हैं । दूसरे प्रकार अपराध वे हैं जिनमें राज्य की क्षति तो है लेकिन राज्य न्यायिक अधिकारियों के विवेक के आधार पर पीड़ित की अनुमति से सुलह करना उचित समझती है । सियोद्री । 1977 । के मतानुसार न्यायालय को सुलह की अनुमति देते समय अपने विवेक का न्यायिक रूप से प्रयोग करना चाहिये । अपराध की प्रकृति, अपराध कारित करने की परिस्थितियां पक्षकारों के मध्य सुलह होने के बाद संबंध पक्षकारों की शान्ति एवं सदभाव से रहने की संभावनायें आदि कुछ ऐसे तथ्य हैं जिनका ध्यान स्वीकृति देते समय रखा जाना चाहिये । कानून मात्र इतना चाहता है कि पक्षकारों के विवाद समाप्त करने के लिये कुछ व्यवस्था होनी चाहिये ।

उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सुलह का अधिकार पीड़ित को है और उसका यह अधिकार स्वतंत्र इच्छा से प्रयुक्त होना चाहिये । प्राचीन भारतीय समाज में भी खून के मूल्य एवं क्षति पूर्ति की व्यवस्था विद्यमान रही है । किन्तु सुलह क्षति पूर्ति की अपेक्षा अधिक विस्तृत है । यदि पीड़ित सुलह नहीं करना चाहता है तो अपराधी को उसके अपराध की सजा मिलनी अनिवार्य है । अपराधी को सजा के अतिरिक्त क्षति पूर्ति भी पीड़ित पा सकता है । भारतीय विधान द्वारा प्रदत्त सुलह के इस अधिकार का पीड़ितों ने कितना सदुपयोग किया है यह विचारणीय विषय

है । वर्तमान अध्ययन से स्पष्ट है कि शिक्षितों की अपेक्षा अशिक्षित पीड़ितों ने राजीनामें अधिक किये है । पीड़ितों का विरोधी साक्ष्य दो कारणों से होता है :- पहला कारण तो यह है कि पीड़ित ने सुलह कर लिया है किन्तु औपचारिक न्यायिक रूप से सुलह होना संभव नहीं है और पीड़ित को परीक्षित करके अपराध का विचारण किया गया है । इसके फलस्वरूप पीड़ित अपराधी को दण्ड से बचाने केलिये स्वयं अपने पूर्व कथन के विरोधी साक्ष्य देता है ; दूसरा कारण अभियोजन व्दारा तथ्यों को यथावत न्यायलय के समक्ष पेश न करके तोड़ मरोड़ कर प्रस्तुत करना है । अशिक्षित पीड़ित यह भी नहीं जान पाते है कि विवेचनाधिकारी ने उनके क्या ब्यान लिखे हैं एवं प्रथम सूचना रिपोर्ट में क्या लिखा है । परिणाम स्वरूप पीड़ित स्वयं विरोधी घोषित हो जाता है और अपराधी को लाभ मिलता है । यदि विरोधी साक्ष्य एवं राजीनामा को एक मान कर देखा जाये तो अशिक्षित ने कुल 57.04 प्रतिशत राजीनामे किये हैं । इसके सापेक्ष शिक्षितों ने52 प्रतिशत राजीनामा किये है । यदि यह सुलहनामे वास्तव में कानून की भावना के अनुसार हुये हैं तो यह समाज के लिये अच्छा प्रतीक है ।

संघर्ष और सहयोग किसी भी समाज के अनिवार्य लक्षण हैं । कुप्पूस्वामी ‡ 1982 ‡ के मतानुसार "समाज का अस्तित्व उसके लचीलेपन पर निर्भर करता है" एवं भारतीय समाज में लचीलेपन की विशेषता इसकी अनोखा गुण है"। नोरमन ‡ 1975 ‡ के मतानुसार भारतवर्ष में जाति एवं सांस्कृतिक परम्परायें सारी दुनिया से विशिष्ट है । सामाजिक परिवर्तन की गति के अतिरिक्त भी प्राचीन मान्यतायें स्थाई प्रतीत होती हैं ।

तालिका संख्या (36) से यह स्पष्ट होता है कि समझौतों का प्रतिशत यह दर्शाता है कि समाज में संघर्ष के साथ ही सहयोग की प्रक्रिया विद्यमान है । किन्तु यदि यह राजीनामे अन्यथा हैं तब इन पर कड़ी दृष्टि रखना परम आवश्यक है । वर्तमान अध्ययन में प्राप्त समझौता के पक्षकारों से यह तथ्य प्रकाश में आया है कि 15 प्रतिशत व्यक्तियों ने स्वेच्छा से समझौता किया है । इसके सापेक्ष 20 प्रतिशत रिश्तेदारी एवं सामाजिक दवाव में आकर राजीनामा हुये हैं । अध्ययन में 15 प्रतिशत ऐसे समझौते है जिनमें अपराधियों ने पीड़ित से क्षमा माँगी है एवं 15 प्रतिशत राजीनामे पंचायत के कहने से हुये हैं । तालिका संख्या (36) से स्पष्ट है कि 10 प्रतिशत राजीनामे आर्थिक हितों तथा 5 प्रतिशत समझौते ऐसे है जिनमें पीड़ितों ने क्षतिपूर्ति लेकर समझौता किया है । वर्तमान अध्ययन में 10 प्रतिशत ऐसे पीड़ितहैजिन्होंने निरन्तर गवाही देने से बचने के लिये समझौता किया है एवं 10 प्रतिशत पीड़ितो ने राजनैतिक कारणों से समझौते किये हैं । इन प्राप्त आंकड़ों से स्पष्ट है कि सम्पूर्ण समझौतो में 30 प्रतिशत ऐसे है जिनमें पक्षकारों ने स्वेच्छा से राजीनामा किया है एवं 70 प्रतिशत राजीनामे किसी न किसी दवाव के कारण हुये है । सर्वाधिक 20 प्रतिशत राजीनामा रिश्तेदारी एवं सामाजिक दवाव के कारण प्राप्त हुये है । भारतीय ग्रामीण सामाजिक व्यवस्था में दुबे (1965) के मतानुसार व्यक्ति केवल एक ग्रामीण समुदाय का ही सदस्य नहीं है, वह एक जाति एवं धार्मिक समूह का भी सदस्य है । जिसका क्षेत्र विस्तार अधिक है । भारतीय समुदाय में प्राथमिक नियंत्रण के साधन जाति, धर्म, पंचायत एवं परिवार आदि हैं । किन्तु झाँसी जनपद में सामाजिक प्रतिष्ठित व्यक्तियों का सम्मान विद्यमान है । सामाजिक मर्यादाओं का पालन करने वाला पीड़ित इन व्यक्तियों

तालिका संख्या । 36 । वर्तमान अध्ययन में पीड़ितों से प्राप्त मत के आधार पर समझौते के कारण का विश्लेषण । प्रतिशत में ।

क्रम संख्या	समझौता का कारण	प्रतिशत
1.	पंचायत के दवाव से	15
2.	रिश्तेदारी और सामाजिक दवावों से	20
3.	आर्थिक हितों से	10
4.	अपराधी ने माफी माँग ली है	15
5.	क्षतिपूर्ति पाने से	05
6.	स्वेच्छा से	15
7.	बार-बार अदालत व थाने से बचने के लिये	10
8.	राजनैतिक कारणों से	10

के दबावों के कारण सुलह कर लेता है । रिश्तेदारों एवं सामाजिक दबाव में हुये राजीनामों का अधिकतम प्रतिशत यह सिद्ध करता है कि सामाजिक दबाव आज भी इस क्षेत्र के ग्रामीण जीवन में सबसे प्रभावशाली भूमिका न्यायिक प्रक्रिया के संदर्भ में निभाते हैं । तालिका संख्या ‡36 ‡ का मूल्यांकन करने से स्पष्ट है कि 15 प्रतिशत राजीनामे पंचायत के कहने के कारण हुये है । इसका कारण यह हो सकता है कि ग्राम पंचायत प्रणाली भारतवर्ष की ऐतिहासिक विरासत है । इस देश में प्रत्येक युग में ग्राम पंचायत व्यवस्था रही है/बहादुर ‡ 1980 ‡ के मतानुसार ग्रामीण क्षेत्रों में जहाँ अधिकतम जनसंख्या रहती थी, के अपने न्यायालय थे । प्रत्येक गांव में पंचायत होती थी जो व्यवहार तथा फौजदारी के वादों का निस्तारण करती थी । यह एक निर्वाचित संस्था होती थी एवं गांव के प्रमुख तथा योग्य व्यक्ति इसके सदस्य होते थे । स्थानीय होने के कारण पंच स्थानीय रीति रिवाज तथा परम्पराओं के बारे में अधिक जानकारी रखते थे । वर्तमान उपलब्धि से यह सिद्ध होता है कि जनपद झाँसी का अनौपचारिक पंचायत व्यवस्था आज भी व्यक्तियों के चरित्र को नियन्त्रित करती है तथा औपचारिक न्याय प्रक्रिया में प्रभाव डालती है । उत्तर प्रदेश प्रान्त के अन्य जनपदों की अपेक्षा जनपद झाँसी में विधि न्यायालयों की अपेक्षा न्याय पंचायतों द्वारा वादों का निपटारा प्रचलित है परन्तु वर्तमान अध्ययन से प्राप्त प्रतिशत अपेक्षाकृत रूप से कम है ।

वर्तमान अध्ययन में 10 प्रतिशत सुलहनामे आर्थिक हितों के कारण हुये है एवं 5 प्रतिशत सुलहनामे इसलिये हुये हैं कि पीड़ितों को अपराधियों द्वारा हर्जाना दे दिया गया है । इस दिशा में प्राप्त तथ्यों से स्पष्ट है कि 10 प्रतिशत सुलहनामे पीड़ितों ने बार-बार की प्रशासनिक उलझनों से बचने के लिये किये है । प्राप्त प्रतिशत यद्यपि कम है फिर भी यह हमारे न्यायिक प्रक्रिया तथा पुलिस कार्यवाही

की ओर इंगित करता है । पीड़ित को अपना दैनिक व्यवसाय छोड़ कर अनेकों बार पुलिस द्वारा थाने पर विवेचना के लिये बुलाना, उनसे पूंछताछ में सहृदयता न बरतना एवं न्यायालय में असम्मानजनक स्थितियों से गुजरना आदि ऐसे कारण है कि शान्तिप्रिय नागरिक यथा संभव पुलिस तथा न्यायालय से दूर रहना चाहता है । प्रायः सामान्य नागरिक पुलिस की सहायता मजदूरी में लेना चाहता है । वर्तमान में पुलिस प्रशासन की समस्या भारतवर्ष में ही नहीं अपितु विश्व के अनेक विकसित देशों में विद्यमान है । रैकलेस । 1970 । ने व्यक्त किया है कि पुलिस के विचार तथा कार्यकलापों में अन्तर है । अमेरिका तथा इंगलैण्ड की पुलिस अपनी समाज से अलगाव की स्थिति में है ।

वर्तमान अध्ययन में अत्याधिक महत्वपूर्ण तथ्य यह प्रकाश में आया है कि अपराधियों में से मात्र 10प्रतिशत को पुलिस से शिकायत है इसके सापेक्ष 50 प्रतिशत पीड़ितों को पुलिस कार्यवाही से शिकायत है । इसके कारणों की जानकारी करने पर प्राप्त हुआ है कि असंज्ञेयक्षेत्रीय अपराधों में पुलिस अभियुक्त को बिना वारण्ट गिरफ्तार नहीं कर सकती है । यदि अपराधीपुलिस की विवेचना में सही पाया जाता है तो आरोप-पत्र सीधे न्यायालय भेज दिया जाता है । जहाँ अपराधी का विचारण होता है अर्थात अपराधी को पुलिस के सम्पर्क में नहीं आना होता है जबकि पीड़ित को वाद की सम्पूर्ण अवधि में पुलिस की विवेचना में जाना पड़ता है । यही कारण है कि अपराधियों की अपेक्षा पीड़ितो को पुलिस से अधिक शिकायत है । यह एक मात्र अशिक्षा के कारण है । न्यायालयों में अनेकों बार आने की शिकायत भी पीड़ितों को है । सत्य तो यह है कि जनपदीय न्यायालयों में पक्षकारों के बैठने तक की भी उचित व्यवस्था नहीं है ।

इसके अतिरिक्त प्रायः पीड़ित एवं साक्षी अपने घर से प्रातः 7 बजे न्यायालय अपने के लिये निकलते हैं और ठीक 10 बजे उन्हें न्यायालय कक्ष में उपस्थित होना पड़ता है। इसके बाद वह निरन्तर इस प्रतीक्षा में रहते हैं कि कब न्यायिक अधिकारियों द्वारा बुलाया जायेगा। ऐसा भी होता है कि समयाभाव के कारण न्यायालय द्वारा सायंकाल अगली तारीख दे दी जाती है। इस प्रकार वह रात्रि में या अगले दिन घर वापिस पहुंचते हैं। इस प्रक्रिया में साक्षी एवं पीड़ितों के दो दिन का समय नष्ट होता है इससे उनके व्यवसायों की भी हानि होती है। इस अवसर का लाभ उठाकर अपराधी या असामाजिक तत्व उनकी फसल को भी क्षति कर देते हैं। इन सभी परेशानियों में पीड़ित को कुछ भी प्राप्त नहीं होता है और यही कारण है कि अधिकांश पीड़ित राजीनामा करके अपराधियों से टकराव की स्थिति से बचना चाहते हैं।

वर्तमान अध्याय की उपलब्धियां स्पष्ट रूप से इंगित करती है कि विभिन्न सामाजिक क्रियाकलापों एवं प्रशासनिक व्यवस्थाओं का जनपद झांसी के अहस्तक्षेपीय अपराधों की न्यायिक प्रक्रिया में परोक्ष अथवा अपरोक्ष योगदान है।

=:=:=:=:=:=:=:=:=

अध्याय - ७

व्यक्तिगत अध्ययन

१. पीड़ित
२. अपराधी
३. साक्षी

प्रस्तुत अध्याय में अहस्तक्षेपीय अपराधों से सम्बन्धित क्रमशः पीड़ित, अपराधी तथा साक्षी के व्यक्तिगत अध्ययनों को सम्मिलित किया गया है । यह संकलन समाजवैज्ञानिक दृष्टिकोण से प्रगतिशील विचारों एवं भावनाओं को अभिव्यक्त करने के लिये आवश्यक था । वर्तमान अध्ययन में प्रत्येक वर्ग में दस व्यक्तिगत अध्ययन संकलित किये गये हैं । इस प्रकार से 30 व्यक्तिगत अध्ययनों को प्रस्तुत अध्याय में समायोजित किया गया है । विषय वस्तु परोक्ष रूप से न्यायिक प्रक्रिया से सम्बन्धित होने के कारण व्यक्तियों के नाम तथा पते के सम्बन्ध में गोपनीयता रखी गयी है । यह विषय सामग्री विभिन्न व्यक्तियों की मनोवृत्तियों एवं विचारधाराओं को अक्षरशः प्रस्तुत करेगी ।

1. पीड़ित
======

(अ) व्यक्ति का पूर्व इतिहास :- कोई कृषि योग्य भूमि नहीं है, पत्नी के अतिरिक्त 4 बच्चे हैं । सभी कृषि मजदूरी में संलग्न हैं । अपराधिक इतिहास नहीं है ।

(ब) वर्तमान अहस्तक्षेपीय अपराध के बारे में मत :- यह व्यक्ति एकाकी परिवार का मुखिया है । खानदानी मजदूर है । अपराध के बारे में पूछने पर दुःखों से संतृप्तभाव से कहता है कि "महाराज अपने भाग में तो जुल्म सहना ही लिखा है । गाली गलौज तथा साधारण मारपीट सहना तो हमारी दिनचर्या है"। जुल्मों का प्रसंग छेड़ने पर अनेकों ऐसे जुर्म गिनाये जिनको लिखना यहाँ संभव नहीं है । सरकार सुविधायें तो दे रही है किन्तु बड़े लोगों के कारण सुविधाओं का लाभ गरीब लोगों को नहीं मिल पाता है । प्रत्येक प्रश्न पर संदर्भ से परे हट कर अपनी कहानियाँ सुनाता है । वर्तमान अपराध के बारे में कहता है कि अपराध तो हुआ था किन्तु वह यह अनुभव नहीं कर सका कि ये जुल्म था क्यों इतना जुल्म सहना उसकी आदत हो गयी है । अपराध की रिपोर्ट थाने में लिखाने का

साहस उसका नहीं था किन्तु गांव के दूसरे प्रभावशाली व्यक्ति की प्रेरणा तथा सक्रिय सहयोग से ही थाने तक जाना संभव हो सका है। अपराधी के इन विपक्षी महोदय ने उत्तरदाता को मजदूरी पर कामभी दिया था। पुलिस के प्रति उस के मन में भारी असन्तोष है। वह मायूस एवं डरे हुये भाव से कहता है कि पुलिस वालों के व्दारा भी उसे अनेकों बार गालियां तथा थप्पड़ खाने पड़े हैं। पुलिस वालों को नम्बरदार ने खाना खिलाया था और पुलिस वाले पीड़ित के काम से आये थे अतः नम्बरदार के यहाँ उसे 10 दिन तक मुफ्त में मजदूरी करनी पड़ी है तथा सुरक्षा प्रदान कराने के बहाने पीड़ित को बन्धुआ मजदूर की तरह सपरिवार नम्बरदार के यहाँ काम करना पड़ा है। उसने बताया कि वह तीन बार कचहरी गया है और इस खर्च के लिये उसने अपनी पत्नी के जेवर बेचे हैं। साथ ही मजदूरी न कर पाने के कारण नम्बरदार का कर्जदार हो गया है। इसने बताया है कि इन सब परेशानियों से बचने के लिये ही उसने राजीनामा किया है और वह अपराधी का एहसानमन्द है कि उन्होंने राजीनामा कर लिया है। इस एहसान को चुकाने के लिये वह उसी अपराधी के यहाँ कम रूपयों पर मजदूरी कर रहा है।

स। तथ्य विश्लेषण :- वर्तमान अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि न्याय के मूल भूत सिध्दान्तों के ठीक विपरीत वर्तमान व्यवस्था में पीड़ित का शोषण ही परिलक्षित हो रहा है। प्रशासन एवं न्यायिक व्यवस्था इतनी दूषित हो चुकी है कि उत्तरदाता का विश्वास किसी भी संस्था, पुलिस, न्यायालय में नहीं है। इस पीड़ित के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि गरीबी और सामाजिक असमान्यता के कारण एक वर्ग में पीड़ित मानसिकता बन गयी है और ऐसे व्यक्ति जुल्म का प्रतिकार करने की अपेक्षा जुर्म सहने में अधिक सुरक्षित महसूस करते हैं। यहाँ यह

कहने में अतिशयोक्ति नहीं होगी कि हमारी वर्तमान प्रशासनिक व्यवस्था हमारे परिवेश में सामन्जस्य नहीं कर पा रही है।

क्रमांक- ।2। ।अ। व्यक्ति का पूर्व इतिहास :- गरीब घर से सम्बन्धित होने के कारण मजदूरी करती है। किशोर अवस्था के कारण सुन्दर तथा चंचल है घर में माँ, बाप, तथा 2 छोटे भाई हैं।

।ब। वर्तमान अपराध के बारे में मत :- यह शादीशुदा लड़की है और अपराध सेक्स से सम्बन्धित होने के कारणसूचनायें एकत्र करने में असुविधा हुई है। उसने बताया कि उसकी इज्जत लूटी गयी है। किन्तु समाज और घर वालों के डर से उसने किसी को नहीं बताया था। गांव के अन्य युवक व्दारा मुझे चिल्लाता हुआ देख लेने के कारण उसने गांव में कह दिया था। लड़की के पिता स्वयं भी रिपोर्ट लिखाने को उत्सुक नहीं थे किन्तु पुलिस वाले मुल्जिम को पकड़ ले गये और पुलिस तथा मुखिया की संतुष्टि न होने के कारण दो दिन बाद मुखिया के दवाव से उत्तरदाता के पिता ने रिपोर्ट थाना में लिखाई थी। पुलिस वालों से उसे कोई शिकायत नहीं है किन्तु पुलिस का घर के दरवाजे आना भी उसे भयभीत करता है।

पीड़ित एवं उसके पिता ने हाथ जोड़ कर कहा कि पीड़ित के पति को इस मुकदमें की जानकारी नहीं है और ससुराल से किसी बहाने से मायके बुलाकर कचहरी में ब्यान देने के लिये लाया गया है। पीड़ित ने यह भी बताया कि आज ही ब्यान कराने के लिये उसने सम्बन्धित व्यक्तियों को खुश किया है और निवेदन किया कि इस मुकदमें की जानकारी किसी को न दी जाय। उत्तरदाता ने बताया

कि वह स्वयं मुकदमें को शीघ्र समाप्त कराना चाहती है क्योंकि इस मुकदमें से उसे हानि के अतिरिक्त कुछ भी नहीं मिला है। कहीं उसकी ससुराल वालों को पता लग गया तो उसे और भी कष्ट भोगने पड़ सकते हैं। इसे मुखिया और पुलिस वालों से यह शिकायत है कि इन लोगों को अपराधी से पैसा न मिलने के कारण उसके पिता को रिपोर्ट लिखाने हेतु बाध्य किया था। अन्तरंग भाव को छूने पर लड़की क्रोधित हो गयी तथा उसने कहा कि उसका वश चले तो अपराधी का कत्ल कर सकती हूँ किन्तु उसका बाप गरीब है और गांव में आम मजदूरों की लड़कियों के साथ यही सब होता है जिसको बर्दाश्त करना उनकी मजबूरी है। इसके बाद उसने और कुछ बताने से इन्कार कर दिया।

(स) तथ्य विश्लेषण :- झूठी सामाजिक मान्यतायें जुल्म सहने को विवश करती हैं। इससे अपराधियों के हौसले बढ़ते हैं तथा पीड़ित अपने आपको असहाय महसूस करता है। दुर्भाग्य से प्रशासनिक मशीनरी इन परिस्थितियों को नजर अन्दाज करके अनावश्यक लाभ प्राप्त करते हैं। उत्तरदाता स्वयं मुकदमा समाप्त कराना चाहती है और परिस्थितियोंवश अपराधी को दण्ड दिलाने में कोई रूचि नहीं है। सामाजिक न्याय की जटिल समस्या है जिसका निराकरण समाज और कानून के सामन्जस्य से ही संभव हो सकता है। यह विडम्बना है कि उत्तरदाता ने अपना सब कुछ खो दिया है और उसे अपूर्णनीय क्षति हुई है किन्तु न तो उसकी रूचि रिपोर्ट करने की थी और मुकदमा भी उसने स्वयं बिगाड़ कर अपराधी को उसने स्वयं दण्ड देने से बचाया है।

क्रमांक-3 (अ) व्यक्ति का पूर्ण इतिहास :- अन्य हरिजनों की अपेक्षा अच्छी आर्थिक स्थिति है। अपनी जाति का मुखिया है। लड़के तथा

जाती है गांव सभा का सदस्य है ।

(ब) वर्तमान अपराध के बारे में मत :- साधारण वेशभूषा धारण किये हुये वृद्ध व्यक्ति है । उसका मानना है कि उस पर अनेकों जुल्म जीवन में हुये हैं । अब सरकार की नीतियों के कारण हरिजनों की स्थिति में सुधार हुआ है । वर्तमान अपराध के बारे में उसका कहना है कि घटना सही है और उसने भी तुरन्त रिपोर्ट लिखा कर मदद मांगी थी किन्तु पुलिस वालों ने न तो अपराधी को गिरफ्तार किया और न ही उससे कुछ कहा । पुलिस वालों ने उसे कई बार थाने पूछताछ के बहाने बुलाया और अपेक्षाकृत कम सम्मानजनक व्यौहार किया । उससे कभी भी सहानुभूति पूर्वक व्यौहार नहीं किया गया है । उसने बच्चों के भविष्य को ध्यान में रख कर राजीनामा किया है । वह 3 बार ब्यान देने अदालत आया किन्तु किसी न किसी बहाने तारीख बढ़ गयी । उसके गवाही ठाकुर तथा लुहार थे औरऐभी निरन्तर राजीनामा करने के लिये प्रेरित करते रहे । प्रत्येक बार गवाह लाने का खर्चा भी उसे वहन करना पड़ता था । वह महसूस करता है कि सरकार की नीतियों का सही क्रियान्वयन अधिकारी कर्मचारी नहीं करते हैं और हरिजनों में अभी इतनी सामर्थ्यनहीं है कि वे लड़कर अधिकार मांग सकें ।

(स) तथ्य विश्लेषण :- सरकारी मशीनरी पूर्ण समर्पित [illegible] भाव से हरिजन पीड़ितों की सेवा नहीं करती है बल्कि किसी हद तक सम्पन्न अपराधियों के प्रति सहानुभूति का भाव उनमें पाया गया है । वृद्ध हरिजन रंजिश बढ़ाने की अपेक्षा समझौता पर विश्वास करते हैं इसमें अनेकों कारण हैं चूंकि हरिजन गरीब आर्थिक स्तर में है और उन्हें उसी गांव में रहना है अतः तालाब में रह कर के मगर से दुश्मनी नहीं ले सकते हैं वस्तुतः जब तक वे आर्थिक रूप से सम्पन्न तथा शिक्षित नहीं होंगे, उचित न्याय प्राप्त

होने में संदेह है । अपराधी की स्थिति गांव के अतिरिक्त न्यायालय परिसर में भी उच्च रहती है कारण कि वे पैसा देकर अच्छा वकील करते है जबकि पीड़ित पक्ष को निश्चित वेतन वाला, व्यस्त वकील मिलता है जो स्वाभाविक रूप से इतना ध्यान अपने पक्षकार का नहीं रख सकता है जितना कि स्वतन्त्र वकील ।

क्रमांक-4 (अ) व्यक्ति का पूर्व इतिहास :- सामान्य आर्थिक स्थिति का व्यक्ति है । किसी हद तक हरिजनों का नेता भी कहा जा सकता है । जुल्म के विरुद्ध आवाज उठाने की ताकत है ।

(ब) वर्तमान अपराध के बारे में मत :- घटना सही है और इसका कारण कुंये से पानी का विवाद है । उसका कहना है कि ब्राह्मण जो अपराधी है अब भी छुआछूत मानते हैं और हमारे पानी के छींटे उन्हें अपवित्र कर देते हैं किन्तु घर में घुस कर मारने से उनका धर्म भ्रष्ट नहीं होता है । पुलिस का प्रशंसक नहीं है । पीड़ित कहता है कि अपराधियों को गिरफ्तार नहीं किया गया तथा उन्हें अदालत से जमानत कराने को कहा गया । मेरे ब्यान दरोगा जी ने ठीक से नहीं लिखे तथा अपने मन से लिख दिये हैं अदालत में मेरे दोनों गवाहों ने अच्छे ब्यान दिये किन्तु दरोगा जी के ब्यान से मेल नहीं खाये इसलिये मुकद्दमा छूट गया है ।

अपराधी पढ़े लिखे तथा नौजवान लड़के है और उनमें बड़ी ठसक है । मुझे बराबर ब्यान बदलने के लिये धमकाते रहे । अदालत में भी कोर्टसाहब ने भी मेरी पूरी मदद नहीं की । उनका वकील जितनी जिरह करता था उतनी कोर्टसाहब नहीं करते थे । दो बार अदालत ब्यान देने गया किन्तु कोई खर्चा नहीं मिला । दिन भर बैठे रहने के बाद भी गैर हाजिर दिखाकर तारीख बढ़ाई गयी है । अदालत में न बैठने की जगह

है और न तो पानी पीने की व्यवस्था । मेरे हर बार जाने पर 50/- रु0 खर्च होते हैं । गवाहों का खर्चा भी मुझे प्रत्येक तारीख पर वहन करना पड़ता था । उसके अनुसार अदालतों में कोई सुनवाई नहीं होती है सिर्फ पैसे वालों की सुनवाई होती है । पीड़ित ने बताया कि उसे निरन्तर गवाहों को खुश रखना पड़ा है और वह अब भी उनके ऐहसान से दबा है । और हम अपराधियों का कुछ भी नहीं बिगाड़ सके हैं और वह आज भी सीना तान कर चलते हैं । पुलिस के बारे में उसका कहना है कि जिस तरह वैश्यावृत्ति से समाज के भले घर सुरक्षित रहे है उसीप्रकार पुलिस मुकदमें के कारण उदण्ड किस्म के व्यक्ति एक संगठन में कानूनी सुरक्षा के अन्तर्गत वहाँ रहते हैं ।

(स) तथ्य विश्लेषण :- पीड़ित को कोई उपलब्धि न होने के कारण उसका न्याय पर विश्वास नहीं है जो ठीक भी है । आखिर पीड़ित को क्या मिलता है । पत्रावली के अध्ययन से प्राप्त हुआ है कि अभियुक्तों को संदेह का लाभ देकर दोष मुक्त किया गया है किन्तु इसमें पीड़ित का कोई दोष नहीं है । सरकारी पक्ष के वकील वेतनभोगी होने के कारण अपनी फर्ज अदायगी मात्र करते है और उनकी रुचि अपने पक्षकार में इतनी नहीं हो सकती है जितनी कि अपराधी के वकील की । उत्तर-दाता को दुख है कि उसके साक्षियों के पूर्ण समर्थन के बाद भी अभियुक्त को तक्नीकी आधारों पर छोड़ा गया है । इसमें कोई संदेह नहीं है कि हमारे उच्चाधिकार प्राप्त न्यायाधीश वातानुकूलित भवनों में बैठकर जंगलों का न्याय करते है और उनकी व्याख्या सामाजिक परिवेश के हिसाब से सहीं होती है, इसमें संदेह है । इस न्यायिक व्यवस्था से ग्रामीण क्षेत्रों में दुश्मनी बढ़ना स्वाभाविक है और जब अपराधी दोष मुक्त हो जाते हैं तो उनका साहस हमेशा के लिये बढ़ जाता है । इसके विपरीत पीड़ित हतोत्साहित हो जाते हैं । पीड़ित की संतुष्टि

के लिये प्रशासन को अनिवार्य रूप से कोई व्यवस्था करनी चाहिये ।

क्रमांक-5 (अ) व्यक्ति का पूर्व इतिहास :- कमजोर आर्थिक स्थिति का व्यक्ति है परिवार में पत्नि तथा 3 लड़के हैं । पत्नि भी मजदूरी करती है ।

(ब) वर्तमान अपराध के बारे में मत:- पीड़ित बहुत दुखी मन से कहता है कि उसका बकरा अपराधी ने काट कर खा लिया और उलाहना दिया तो मारा-पीटा तथा गालियाँ दी । पुलिस ने उसकी कोई मदद नहीं की और न ही उससे सम्मानजनक व्यौहार किया है । पीड़ित कहता है कि पुलिस पैसों वालों की मदद करती है । न्यायालय में, पीड़ित का कहना है उसने सही व्यान दिया किन्तु कोई सजा अपराधी को नहीं दी गयी बल्कि उल्टे उसे ही हर जगह डाँट फटकार दी गयी । अनेकों बार पुलिस तथा अदालत के चक्कर लगाने पड़े तथा पैसा खर्च करना पड़ा । अपराधी ठाकुर तथा बड़े आदमी है अतः उसे अनेक प्रकार से धमकाया गया । न्यायालय परिसर में भी उसे राजीनामा करने हेतु दबाव डाला गया । पैसे का प्रलोभन भी दिया गया किन्तु वह नहीं मुड़ा । जब जब वह अदालत गया उसके घर पर उसकी पत्नि को प्रताड़ित किया गया तथा बच्चों की मारपीट की गयी । अदालत ने न्याय नहीं किया और पीड़ित महसूस करता है कि हमारी नियति ही जुल्म सहने की है ।

(स) तथ्य विश्लेषण :- पत्रावली के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि पीड़ित के साक्ष्य को विश्वसनीय नहीं माना गया है । उसके न्यायालय में लिये गये व्यान तथा विवेचना अधिकारी के द्वारा लिये गये व्यानों में विरोधाभास है । यह सब उसकी अशिक्षा के कारण चतुर वकील की व्यवसायिक योग्यता के कारण हुआ है । पीड़ित का बकरा चुराने का

कोई आरोप अपराधी पर नहीं लगाया गया है जो कि विवेचना अधिकारी की तथा मशीनरी की लापरवाही के कारण संभव हुआ है । ऐसा प्रतीत होता है कि अशिक्षित तथा ग्रामीण क्षेत्र का व्यक्ति जिरह के दौरान अपनी मूल बात को शब्द जाल में भूल जाता है और घबराकर अपने ही विरुद्ध उत्तर दे देता है । चूंकि संदेह का लाभ अभियुक्त को दिया जाता है अतः पीड़ित की अशिक्षा तथा बुद्धिहीनता का लाभ अपराधी ले जाता है ।

वर्तमान वाद से स्पष्ट होता है कि यदि पीड़ित हौंसले वाला हो और न्याय की अपेक्षा रखे तो भी डिफेक्टिव न्यायिक प्रक्रिया के कारण उसे हताश ही होना पड़ता है जिससे गांव के अन्य लोग भी सम्पन्न व्यक्तियों से टकराने की कोशिश नहीं करते है और न्याय के नाम पर अन्याय होता प्रतीत होता है ।

क्रमांक 6 , अ। व्यक्ति का पूर्व इतिहास:- कोई अपराधिक इतिहास नहीं है । पहली बार रिपोर्ट लिखाई है । राजनैतिक सम्बद्धता शून्य है । मात्र 2.00 एकड़ जमीन पट्टे में मिली है जो अनुपजाऊ है ।

ब। वर्तमान अपराध के बारे में मत :- अपने जीवन में प्रथम बार न्यायालय में आया था । अपराध घटित होने से अब तक की सभी प्रक्रियाओं से उसने अनभिज्ञता प्रकट की है । स्पष्ट रूप से घटना के बारे में पूछने पर उसने बताया कि "महराज गाली-गलौज तो रोज ही सुनते हैं।" उसका कहना है कि पुलिस वालों ने कोरे कागज पर अंगूठा लगवाया था । अपराधी को दण्ड दिलवाने के बारे में उसका कहना है कि हम नीच जाति के हैं और हमारा धरम ही सबकी सेवा करना है । पूर्व जन्म के पाप के कारण हमें सब सहना पड़ता है, यदि इस जन्म में भी धर्म का निर्वाह नहीं किया तो फिर भुगताना पड़ेगा । उसके अनुसार दण्ड तो अर

वाला देता है । जिनके हम चरण छूते है और नमक खाया है उन्हें दण्ड दिलवाना हमारे वश का काम नहीं है ।

सरकारी सहायता की बात आते ही कहता है कि गांव में हमें रहना है । बड़ों का ही चलावा है पुलिस वाले उनके घर पर रुकते हैं और भोजन करते हैं । हमारी मदद करने भगवान के अलावा कोई नहीं आ सकता है, दो जून की रोटी बड़ों की कृपा से ही मिलती हैं । पार्टी बन्दी और राजनीति के प्रश्न पर वह कहता है कि बड़ों का काम है हमसे क्या मतलब । राजीनामा के बारे में उसका कहना है कि हम जिनसे लड़ नहीं सकते, तो वही करते हैं जो वे कहते हैं । उससे कुछ गांव के लोगों ने राजीनामा न करने को कहा था । किन्तु उसने सबसे हाथ जोड़कर माफी मांगी और अदालत के चक्कर से दूर रखने की प्रार्थना की । न्यायालय से सम्मन मिलने पर उसने अपराधी से क्षमा मांगी तथा याचना की कि उसे निपटा दिया जाये । बहुत डरते हुए वह अपराधियों के कहने के अनुसार न्यायालय आता है ।

(स) तथ्य विश्लेषण :- उत्तरदाता अपने मालिकों जो कि अपराधी है की अनुमति से ही साक्षात्कार देने को तैयार हुआ था । वह अति भयभीत दिखाई दे रहा था । बहुत सांत्वना तथा आश्वासन के बाद ही उसने कहानी सुनाई है । व्यक्ति धर्म भीरु है , ऐसी बात नहीं है किन्तु सच तो यह है कि दमन और शोषण की अविरल प्रक्रिया के कारण उसने उसे ही अपना भाग्य मान लिया है । इसके अतिरिक्त इसके पास कोई विकल्प नहीं है । पीड़ित के क्या अधिकार तथा उसकी सम्पूर्ण न्यायिक प्रक्रिया में क्या स्थिति है इसका ऐहसास उसे नहीं हो पाता है । इस पीड़ित के वार्तालाप से ऐसा लगा जैसे वह स्वयं को अपराधी मानता रहा हो ।

इसके विपरीत कि अपराधी क्षमा मांगे, पीड़ित ने स्वयं क्षमा याचना की तथा अपनी सुरक्षा हेतु अपराधी से याचना की है। सामान्य गाली-गलौज, जैसे कोई अपराध ही नहीं है और इसका घटित होना जैसे सामान्य प्रक्रिया या वार्तालाप का भाग माना जाता है। उच्च समाज आर्थिक स्थिति के व्यक्तियों ने कमजोर व्यक्तियों के विरुद्ध इसे अपना अधिकार मान लिया है। इसका कारण ऐतिहासिक पृष्ठ-भूमि है जिसके अनुसार कुछ जातियों को हरिजनों को गाली-गलौज करने का विशेष अधिकार था। देखें मनुस्मृति।।

प्रशासनिक अधिकारियों में सामाजिक परिस्थितियों का ज्ञान तथा उनसे निपटने की सूझ-बूझ की महती आवश्यकता है।

क्रमांक 7 (अ) व्यक्ति का पूर्व इतिहास :- सामान्य किस्म का विद्यार्थी है। मां-बाप की आर्थिक स्थिति मध्यम है। अपराधिक इतिहास नहीं है।

(ब) वर्तमान अपराध के बारे में मत :- यह अध्ययन गांव में जाकर किया गया। इस समय बी0ए0 पास करके बेरोजगार है। अपराध के बारे में उसका कहना है कि जब हम लोग (पीड़ित एवं अपराधी) इण्टरमीडिएट में पढ़ते थे तब की बात है। घटना सही है। मैंने पुस्तक देने से मना किया तो अपराधी जो ब्राह्मण है ने गालियाँ देते हुये मारा था। गुस्से में मैंने रिपोर्ट लिखा दी थी किन्तु सन् 1982 में पता चला कि मुकदमा छूट गया है। मुझे न्यायालय का कोई सम्मन नहीं मिला है। दोनों गवाहान अपराधी के आदमी थे और इन्हें पुलिस वालों ने जबरदस्ती गवाह

बनाया था इसलिये वे अपराधी का समर्थन न्यायालय में कर गये है । उसे गवाही के लिये न बुलाया जाना अन्याय है । पीड़ित बेरोजगार होने के कारण सम्पूर्ण व्यवस्था से परेशान है और उसका कहना है कि पुलिस वालों के कारण सही तथ्य न्यायालय के समक्ष पेश नहीं हो पाते हैं ।

।स। तथ्य विश्लेषण :- न्यायिक पत्रावली देखने से यह स्पष्ट हुआ है कि बिना पीड़ित को परीक्षित किये मुकद्दमा निर्णीत किया गया है । दो साक्षियों के बयान लिये गये है । दोनों ने कहा कि उन्होंने न कोई घटना देखी और न ही विवेचक ने उनसे बयान लिया है । बस इसीलिये अपराधी को बरी कर दिया गया है ।

ऐसा ज्ञात होता है कि गवाह वास्तविक नहीं थे और न्यायालय द्वारा निस्तारण शीघ्रता के नाम पर बिना पीड़ित को परीक्षित किये अपना निर्णय घोषित किया था । न्यायालय के पास कार्याधिक्य तथा कार्यकारी एजेन्सी की — भ्रष्टता के कारण कभी-कभी ऐसा भी हो जाता है कि पीड़ित को बिना पता लगे उसका वाद निर्णीत हो जाता है ।

गवाही देना एक टेढ़ा काम है और सामान्य नागरिक इस कार्य से दूर रहना चाहता है । न्यायालय साक्ष्य मांगता है और इसी मजबूरी के कारण पुलिस को साक्ष्य का इंतजाम करना पड़ता है । इस इंतजाम में या तो पीड़ित अपने विश्वसनीय व्यक्तियों को पुलिस को साक्षियों के रूप में देता है । या पुलिस स्वयं अपने लोगों को जो पुलिस का होने का अवैध लाभ उठाते है, साक्षी बनाती है। या तो अपराधी स्वयं पुलिस से मिलकर अपने पक्ष के व्यक्तियों को साक्षी के रूप में नामांकित करवाता है । जो वाद में विचारण के दौरान अपराधी का हित-पोषण करते है । आम नागरिकों की न्यायालय प्रक्रिया से दूर रहने की प्रवृत्ति भी इस झूठे साक्षियों को बढ़ावा देती है इसके लिये साक्षियों का उचित संरक्षण,

भुगतान तथा सम्मानजनक परिस्थितियों के निर्माण की आवश्यकता है । यदि विवेचक ईमानदार तथा विश्वसनीय है तो मात्र इसका साक्ष्य एवं परिस्थिति जन्य साक्ष्य ही अपराधी को यथेष्ट दण्ड दिला सकता है ।

क्रमांक 8 (अ) <u>व्यक्ति का पूर्व इतिहास</u> :- 4 एकड़ पट्टे की जमीन है । पत्नि के अतिरिक्त 2 बच्चे, माँ-बाप घर में हैं । अपराधिक इतिहास नहीं है ।

(ब) <u>वर्तमान अपराध के बारे में मत</u> :- उसे घर में घुसकर मारा-पीटा गया तथा उसके वर्तन फोड़े गये एवं पत्नि को भी लात मारी गयी वह थाने गया तो दरोगा जी से काफी मिन्नते करने के वाद रिपोर्ट अपने मन से लिख ली । अभियुक्त को नहीं पकड़ा गया उल्टे उससे ही कई बार पूछताछ की गयी । एक दिन तो वह सुबह से शाम तक थाने बैठा रहा और शाम को कहा गया कि दरोगा जी कल आयेंगे । वह जमीन पर बैठा रहा जबकि उसके ही सामने अपराधी कुर्सी पर बैठे चाय पीते रहे । पीड़ित अदालत 3 तीन वार आया किन्तु वयान नहीं हुआ चौथी वार कोर्ट साहव ने व्यान लिखाया तो वास्तविकता के विपरीत था । पीड़ित ने वास्तविकता बताई तो कोर्ट साहव झल्ला पड़े और कहा किजो दरोगा जी ने लिखा है । वही कहना वरना मुकद्दमा छूट सकता है ।दरोगा जी ने विना गवाहों के रिपोर्ट लिखने से मना कर दिया था । मौके पर कई लोगों ने घटना देखी थी किन्तु कोई कहने को तैयार न था इसलिये मैंने दरोगा जी से निवेदन किया था कि गवाह मेरे पास नहीं है तो उन्होंने उन लोगों को गवाह बना

दिया जो अपराधी के पक्ष के व्यक्ति थे। न्यायालय के सम्मन पहुचने बाद कथित गवाहों ने धमकी दी थी कि राजीनामा कर लो वरना हम तुम्हारे खिलाफ गवाही देंगे और मुकद्दमा छूटने पर उल्टा मानहानि का मुकद्दमा चलेगा।

(स) तथ्य विश्लेषण :- दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 155 के अनुसार असंज्ञेय अपराध की रिपोर्ट थानाध्यक्ष सारांश के रूप में लिखेगा और इसे सक्षम न्यायालय को संप्रेषित करेगा। वस्तुत: न तो इस रिपोर्ट पर सूचना करने वाले के हस्ताक्षर आवश्यक हैं और न ही इसे वादी के शब्दों में लिखा जाना आवश्यक है। यह धारा, थानाध्यक्ष को विस्तृत अधिकार देती है। यदि थानाध्यक्ष गलत रिपोर्ट अपने मन से भी दर्ज कर ले तो भी वादी का इस पर कोई नियन्त्रण नहीं है। अनेकों वादी जो न्यायालय में प्र0 सू0 रि0 एवं 161 द0 प्र0 सं0 के ब्यानों से विपरीत अन्य कहानी सुनाते है उसका मूल कारण यही धारा 155 है। विवेचना की अनुमति मिलने पर भी अपराधी को असंज्ञेय अपराध में गिरफ्तार नहीं किया जाता है और इससे भी पीड़ित में असंतोष ही बढ़ता है। कानून की कमियों को पीड़ित प्रशासन की भ्रष्टता तथा बड़ों का चलावा मानता है और यदि थानाध्यक्ष अन्यथा काम करना चाहे तो उसे उस धारा के अन्तर्गत स्वविवेक से रिपोर्ट लिखने तथा गवाह बनाने का अधिकार है।

जब पीड़ित को थाने वाला ब्यान अदालत में भी देने को सरकारी वकील द्वारा बाध्य किया जाता है तो पीड़ित को सम्पूर्ण मशीनरी भ्रष्ट लगती है और उसका विश्वास उठ जाता है। जो स्वाभाविक है क्योंकि पीड़ित अपना वाद सरकार की कथित मेहरबानी के कारण हार जाता है जिससे अपराधियों का मनोबल बढ़ता है एवं पीड़ित का गिर जाता है।

साक्षियों कीसमस्या प्रत्येक पीड़ित के सामने रहती है और फरजी साक्षियों के निर्माण से पुलिस अपने अधिकारों का उपयोग कर सकती है एवं फरजी बनावटी साक्षी पुलिस से मिल कर अनुचित लाभ उठा सकते है । यदि हस्तक्षेपीय अपराधों की सूचना के समान ही - अहस्तक्षेपीय अपराधों की भी प्रथम सूचना लिखी जाय तो कुछ सुधार हो सकता है ।

क्रमांक 9 अ। <u>व्यक्ति का पूर्व इतिहास</u> :- पढा लिखा सामान्य व्यक्तित्व का आदमी है । सरकारी कार्यालय में बाबू है । हरिजन उत्थान के प्रति चेतना है और कानून की सामान्य जानकारी है ।

ब। <u>वर्तमान अपराध के बारे में मत</u> :- जब तक हरिजनों में स्वयं पूर्वचेतना नहीं होगी कोई उसका भला नहीं कर सकता है । वह सरकारी नीतियों का समर्थक तथा मशीनरी का आलोचक है । उससे कोई पूछताछ दरोगा जी ने नहीं की तथा उसकी रिपोर्ट एवं ब्यान दोनों वास्तविकता से विपरीत लिखे है । पुलिस व्दारा गवाह मांगने पर उसने अपने एक दोस्त तथा रिश्तेदार को लिखाया था । उसकी मारपीट महज इसलिये की गयी क्योंकि वह अपने आपको जाति के आधार पर छोटा नहीं समझता है । न्यायालय के उसने अनेकों चक्कर लगाये तथा पैसा खर्च किया किन्तु अपराधी को दण्डित नहीं करा सका । वह सारी परेशानीयों की जड़ पुलिस को मानता है। अदालत में पीड़ित एवं गवाहान की असम्मानीय स्थिति को भी दोषी मानता है ।

स। <u>तथ्य विश्लेषण</u> :- शिक्षित और मध्यम आर्थिक (स्तर) वाले हरिजन भी न्याय नहीं पा सकते है तथा उनमें भारी आक्रोष व्यवस्था के प्रति है । यह स्थिति उचित नहीं है । पीड़ित स्वयं मानता है कि उसने बनावटी साक्षी बनाये और उनके साक्ष्य के आधार पर न्यायालय का विश्वास न करना उचित ही है किन्तु घटना सच्ची थी और फिर भी अपराधी दण्ड पाने से बच गये । यह स्थिति विचारणीय है । कानून बिना साक्ष्य के दण्ड नहीं

दे सकता, यह मात्र कहानियों की बात है । यदि जो भी साक्ष्य जिस रूप में हो निष्ठापूर्वक न्यायालय के समक्ष सक्षमता के साथ रखा जाये तो कानून में उसे अस्वीकार करने का कोई कारण नहीं है किन्तु विवेचक की अज्ञानता के कारण अनावश्यक रूप से सही तथ्यों को झूठ का जामा पहना कर पेश करने के कारण परिणाम उल्टा ही निकलता है ।

यह बात सही है कि हमारी पुलिस के साक्ष्य पर न्यायालय कम विश्वास करते हैं । इलाहाबाद उच्च न्यायालय के एक शस्त्र अधिनियम के वाद में 4 उप निरीक्षों के साक्ष्य को भी जनसाक्ष्य के समर्थन के अभाव में विश्वसनीय नहीं माना है । यह भी सही है कि सर्वोच्च न्यायालय एवं अनेकों उच्च न्यायालय ने पुलिस को कभी-कभी प्रोत्साहन दिया है किन्तु स्वयं साक्ष्य अधिनियम की कुछ धाराओं में पुलिस की साक्ष्य को विश्वसनीय नहीं माना है तथा कानून निर्माताओं ने भी पुलिस को अविश्वास के सख्त संदेह के घेरे रखते हुये, विवेचक व्दारा लिये गवाहों के ब्यानों को पुष्टिकारक न मानकर सही या :- झूठ साबित करने के लिये ही माना है । पुलिस की कार्यप्रणाली के कारण वह अविश्वसनीय है या न्यायालय तथा जनअविश्वास के कारण पुलिस भ्रष्ट है जो भी कारण हो इसका निराकरण आवश्यक प्रतीत होता है ।

क्रमांक 10 <u>व्यक्ति का पूर्व इतिहास</u> :- सामान्य ज्ञान एवं जागृति से दूर जाति एवं धर्म का ज्ञान के कारण धर्म भीरू है तथा शारीरिक बलिष्ठता के कारण अपने कार्य में कुशल है । आर्थिक स्थिति सामान्य है । परिवार में एक भाई तथा पत्नि एवं बच्चे हैं ।

(ब) <u>वर्तमान अपराध के बारे में मत</u> :- अपभ्रंश अधकचरी भाषा में उत्तरदाता कहता है कि "मोय नइयां पतों के काय को मुकद्दमा आय" याद दिलाने पर यहकहता है कि "ऐसों गारी गुल्ला तो रोजई होतरत, हमें का हो गयो " बडे लापरवाही पूर्ण अन्दाज में वह कहता है कि -

दरोगा जी मैं बुलायें अंगूठा दिखाओ तो, उनकी मुल्जिम से नाराजी हुयी। उस को किसी से कोई शिकायत नहीं है। बस उन लोगों से उसको शिकायत है जो जानवर चराई के पैसे नहीं देते है तथा जंगल विभाग के जो लोग जानवर नहीं चरने देते है। उसे जानकारी नहीं है कि सरकार उन्हें क्या मदद कर रही है और क्या होना चाहिये। उसके अनुसार फुर्सत में रहने वाले लोग ऐसी बाते करते है। प्रत्येक बात पर वह जंगल और जानवरों से संबन्धित बातें करता है। कुछ सामान्य सी गालियाँ तो उसकी तकिया कलाम ही हैं।

तथ्य विश्लेषण :- सामान्य गाली गलौज अपराध हैं, यह बात संदेहात्मक है। ऐसा लगता है कि ग्रामीण क्षेत्रों मे कुछ शब्द जिन्हें सभ्य समाज में गाली कहा जाता है। बोलचाल की आदत है और जब तक पीड़ित या अपराधी में इतनी चेतना नहीं आ जाती है तब तक भा०द०वि० की 504/506 धाराओं की तकनीकी में समायोजित करके बोलचाल की भाषा को अपराध मानकर अभियोजन एवं विवेचना अनावश्यक प्रतीत होती है। अपराधी और पीड़ित कोई भी जिसे अपराध नहीं मानता है। सरकार अनावश्यक रूप में इनका अभियोजन करके समय एवं धन का अपव्यय करने के साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों में रंजिश के बीज बोती है।

जैसी कि व्यवस्था है, यदि आवश्यक हो तो इनका विचारण ग्राम पंचायतों द्वारा किया जाना चाहिये। न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष इनका विचारण अवांछनीय है।

अपराधिक विचारण के लिये आशय आवश्यक तथ्य है किन्तु दुर्भाग्य से विवेचक घटना की वास्तविकता को न समझ कर उसे खींच-तान कर भा०द०वि० के तहत लाते है जिससे कोई लाभ समाज का नहीं है बल्कि

पुलिस की छवि ही धूमिल होती है । यदि गाली भाषा के रूप में प्रयुक्त होकर आपराधिक आशय से नहीं दी गयी है तो क्या आवश्यकता अभियोजन की है । इसी कारण अभियोजन को पीड़ित पक्ष का सक्रिय सहयोग नहीं मिलता है और अनावश्यक वादकारिता बढ़ती है ।

2. अपराधी
======

क्रमांक-1 ¤अ¤ व्यक्ति का पूर्व इतिहास :- सम्पन्न और समाज में प्रभावशाली व्यक्ति हैं । 2 लड़के है, एक शहर में पढ़ता है । खेती स्वयं तथा मजदूरों से करवाता है । भाई अलग है । गावं सभा का सदस्य है । आपराधिक इतिहास नहीं है । नेताओं से परिचित है ।

¤ब¤ वर्तमान अपराध के बारें में मत :- साफ, स्वच्छ कपड़े पहिने हुये, रोबदार व्यक्तित्व से जब अपराध के बारें में पूछा गया तो लापरवाही से अस्वीकृति प्रकट की तथा कहा कि सभापति के चुनाव में मेरी पार्टीबन्दी चल रही है और इसी रंजिश से नीचा दिखाने के लिये विरोधियों ने रिपोर्ट लिखवा दी है । हमारे विरोधी पूरे तरीके से मुझे सजा दिलाना चाहते थे लेकिन "सिखाये पूत दरवाजे नहीं हैं" और मुद्दई का ब्यान खुद ही बिगड़ गया था । अकेलो एक गवाह जो मुद्दई की बिरादरी को हतो बैऊ आजो तो, दूसरो हमारी बिरादरी को हतो वो गवाई देने आओ नई हतो । जे हरिजन बिचारे कछू नई करत हैं बस बड़े आदमियन की रंजिश खो इनके व्दारा निकाली जात है । कचहरियन में कछू नहीं होत है । जैसी गवाही दे दो सो होत है । हमें कोनउ परेशानी नई भई । बस आउने जाने परो है बो भी हमारे वकील साहब संहाल लेत हैं ।

¤स¤ तथ्य विश्लेषण :- अपराधी सम्पन्न और प्रतिष्ठित व्यक्ति है । पीड़ित के व्यक्तित्व का उसे समक्ष कोई मूल्य नहीं है । पीड़ित की

जाति का ही एक साक्षी परीक्षित हुआ जिसका साक्ष्य पीड़ित के साक्ष्य से विरोधाभासी रहा है । अपराधी को न्यायिक प्रक्रिया से कोई भय नहीं है न ही उसे पीड़ित या साक्षियों से कोई भय है । इस अभियोग को वह विरोधियों की चाल मानता है । आपसी गुटबन्दी के कारण व्यक्ति एक दूसरे को नीचा दिखाने का मौका देखते रहते हैं । अपराधी के साक्षात्कार से यह प्रतीत होता है कि यदि दलबन्दी न होती तो शायद यह रिपोर्ट नहीं होती । ऐसा प्रतीत होता है कि हरिजन स्वयं अत्याचारों के विरूद्ध लड़ने की स्थिति में नहीं है और इन्हें किसी सहारे की आवश्यकता है इनके हित में यह गुटबन्दी सहयोगी सिद्ध होती है किन्तु विचारण में भी हरिजन अस्तित्वहीन और स्थानीय नेतृत्व गतिशील रहता है । सम्पूर्ण न्यायिक प्रक्रिया के दौरान पीड़ित भयभीत रहता है किन्तु इसके विपरीत अपराधी निश्चिन्त दिखाई देता है । इसका कारण दोषपूर्ण प्रक्रिया है ।

क्रमांक-2 अ। <u>व्यक्ति का पूर्व इतिहास</u> :- थोड़ी कृषि भूमि है जिसपर पिता तथा भाई कृषि कार्य करते हैं । घर में लकड़ी का कार्य भी होता है । यद्यपि आर्थिक स्तर बहुत अच्छा नहीं है किन्तु सामान्य आर्थिक स्थिति है । तीन भाई एवं पिता सब एक साथ रहते हैं ।

ब। <u>वर्तमान अपराध के बारें में मत</u> :- अपराध के बारें में जानकारी करने पर यह पाया गया कि अपराधी अब भी यह मानता है कि उसने कोई कसूर नहीं किया है । उसके अनुसार "साथ में हमाई मताई, भौजाई और वैन पानी भर रईती , तो ई चमार ने हमारे वासनन पे छिटका डार दये मैं दौर के आओ और डाट दयो । तो उल्टी सीदी बातें करन लगी । बस ई बात पै शोर कर दई । महाराज तुमई बताओ मैंने का कसूर करो है । न्यायालयीन कार्यवाही के बारें में पूछने पर उसने कहा कि महाराज

रपोट तो पैलऊ नई हो रईती हमाव एक खेत की झंझट, गांव के ठाकुरों से है और वे हमें दवावे की की फिराक में रहत हैं उनई ने वादी पे रंग धर कें जबरजस्ती रिपोर्ट करा दई हती । दरोगा जी ने हमारी बातई नई सुनी । बुलाव तो गारी दई और कई सारे पूरे खानदान खों जेल में डाल देहें । उनकी सेवा करी, सोई कहन लगे जाओ । 4-5 बेर अदालत गये हैं । वैसे हमें कोनऊ डर नई हतो लेकिन औरतन की वजह सें हम राजीनामा करन चाहत हैं और वो [वादी] सोऊ राजीनामा करन चाहत है तो साहब ने कई के राजीनामा कर लो, [अब] राजीनामा हो गयो । ठाकुर साहब ने भाई मरोरी लेकिन उनकी एकउन चली । का बतावें साहब नीच जात को सरकार ने सुविधा तो दई है लेकिन आपसी पार्टीबन्दी में उको दुरुपयोग करत हैं । हमाओ मुकद्दमा जबरजस्ती को है । पुलिस वारे अपंई जुगाड़ में रहत हैं और अदालत में कछू नाहीं होत है वकीलन खों भलो होत और दलालन की चांदी होत । साव हमारें गांव को एक दलाल है जीने वकील कराओ तो और सबई कछू कराओ ओईं ने दलाली खाई ।

[स] तथ्य विश्लेषण :- अपराधी अपने द्वारा किये गये कृत्य को अपराध नहीं मानता है बल्कि अपनी परिस्थितियों में उसे औचित्य पूर्ण मानता है । अपराधी के मन में न्यायालयीन कार्यवाही से कोई भय नहीं है । अपने विरुद्ध की गई रिपोर्ट वह अपने विरोधीकी चाल मानता है । अपराधी ने राजीनामा किसी दण्ड की आशंका से नहीं बल्कि अपनी घर की औरतों को न्यायालयीन कार्यवाही से मुक्त करने हेतु किया है । वादी एवं अपराधीगण सभी राजीनामा करना चाहते है । किन्तु अपराधी के विरोधी लोग फिर भी राजीनामा के विरोधी रहे हैं । इस वाद में 4 अपराधी रहे हैं किन्तु घर के प्रमुख एवं दलाल

की निर्णायक भूमिका रही है । शेष तीन सदस्य मौन स्वीकृति वाले थे । आम धारणा यह है कि निम्न वर्ग के व्यक्तियों को राज्य की ओर से जो सुविधायें मिली हैं उनका सदुपयोग नहीं होता है बल्कि चलते-पुर्जे व्यक्ति आपसी रंजिश निभाने के लिये इन सुविधाओं का दुरूपयोग करते हैं । पुलिस वालों के बारें में अपराधी का मत है कि वे कुछ नहीं करते हैं, हां मात्र अपना हित साधन करते हैं । अदालती कार्यवाही को पूर्णतया अप्रभावी मानते हुये उत्तरदाता का मत है कि इससे मात्र वकील तथा दलालों का ही भला होता है । अपराधी से सीधा प्रश्न यह किया गया कि यदि राजीनामा नहीं होता तो उसे सजा हो सकती थी/इस प्रश्न पर अपराधी एकदम पलट कर बोला कि ऐसा कभी संभव नहीं था उसने कहा कि गवाही हम फोड़ लेते तथा हमारा वकील बहुत जुगाडू है । चाहे कितना ही पैसा खर्च हो जाता सजा नहीं हो सकती थी । न्यायालय में सजा होना या न होना अपराधी के विचार से व्यक्ति की आर्थिक स्थिति पर निर्भर करता है । अपराधी यह मानता है कि सभापति उसके खास हैं तथा गवाही उसके ग्राहक थे । अतः उसे मुकद्दमा हारने का कोई कारण नहीं हैं ।

क्रमांक-3 (अ) <u>व्यक्ति का पूर्व इतिहास</u> :- अपराधी प्रवृत्ति का है । अनेकों मुकद्दमें उसके विरूद्ध चल चुके हैं और गवाहों को तोड़कर मुकद्दमें जीतना उसकी आदत बन गई है । गुन्डा अधिनियम में भी उसका चालान किया जा चुका है । क्षेत्र में अच्छा खा-सा आतंक है ।

(ब) <u>वर्तमान अपराध के बारें में मत</u> :- वर्तमान वाद के सम्बन्ध में पूछने पर उसका कहना है कि ये कोई मुकद्दमा है ऐसे सैकड़ों मुकद्दमें लड़ चुका हूं । अदालत को गवाह चाहिये और मेरे खिलाफ गवाही देने की हिम्मत करना आसान बात नहीं है । वादी का नाम लेते हुये, उसने कहा कि ये तो खामोखा मोहरा बन गया है मैंने तो उसके मालिक को संदेशा

भिजवाया था । यह पूछने पर कि आपने गाली व धमकी क्यों दी थी तो उसने कहा कि गाली तो अपने मुंह से अनायास ही निकल जाती है और भैया दादा कह कर बात करें तो कोई गाली देते हुए । कुछ समझता ही नहीं है । फिर हमारे खिलाफ ही मुकद्दमा क्यों चलाया जाता है पुलिस वाले बिना गाली के बात नहीं करते हैं । उनसे कोई कुछ नहीं कहता है वर्तमान अहस्तक्षेपीय अपराध के बारें में उसका मत है कि यह बतौर मेरे खिलाफ कुछ भी करने की हिम्मत नहीं रखता है/इसका मालिक मुझसे जलता है मेरे खिलाफ झूठी गवाहियां भी देता है पुलिस में भी उसकी सांठ-गांठ है, बस उसी के कारण रिपोट लिखी गयी है । वादी एवं साक्षियों द्वारा स्वयं का विरोधी साक्ष्य देने के बारें में पूछने पर उसने बतायाकि" मैंने तो वादी या साक्षी किसी से बात भी नहीं की हाँ गांव में इधर-उधर कह दिया था कि यदि मेरे खिलाफ वादी ने गवाही दी तो भी मेरा तो कुछ नहीं होगा पर उसे अंजाम भुगतना पड़ेगा । मेरे विरोधी ने बहुत कोशिश की किन्तु हिम्मत नहीं पड़ी । न्यायालयीन प्रक्रिया से कोई भय नहीं है पुलिस के बारें में उसका कहना है कि झूठा-सच्चा दोनों तरह से फसाना उसकी आदत है जो सेवा पूजा करता है पुलिस उसकी मीत होती है ।

(स) केस विश्लेषण :- अपराधी जाति दबंग व आत्म विश्वासी प्रतीत होता है । पहनावा एवं शकल-सूरत से भी सम्पन्न प्रतीत होता है अपराध की श्रृंखला उसके व्यक्तित्व से जुड़ी है । अनेकों मुकद्दमे चलने के कारण वह न्यायालयीन कार्यवाही में दक्ष हो गया है । गवाही स्वयं उसके भय के कारण उसके विरुद्ध गवाही गवाह देने की हिम्मत नहीं करते हैं । अपने विरोधियों को भी वह अपने आतंक के बल पर डराना चाहता है । गाली देना वह अपराध नहीं मानता है, रोबदार प्रभाव शाली भाषा मानता है । पुलिस एवं प्रशासन के प्रति उसकी कोई

आस्था नहीं है नहीं है। ग्रामीण क्षेत्रों में गरीब, कृषक एवं मजदूरों को अपने मालिक के बदले की यातनायें भी सहनी पड़ती हैं । यह इस अध्ययन से स्पष्ट होता है कि अभियुक्त को वादी से कोई बुराई नहीं है । वादी को मात्र इसलिये अपराध का शिकार होना पड़ा क्यों कि वह अपराधी के विरोधी का नौकर था । हरिजनों के प्रति अपराधी ने मानवीय दृष्टिकोण नहीं है । वह इन्हें तुच्छ व्यक्ति समझता है । न्यायालयीन कार्यवाही में उसे वकील को भी नकद भुगतान नहीं करना पड़ता है ।

इस अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में प्रशासनिक सुरक्षा की गारन्टी नहीं है और वह व्यक्ति जिस पर पारिवारिक उत्तरदायित्व है वह अपराधिक व्यक्तियों से उलझने की हिम्मत नहीं रखता है । वस्तुतः राजीनामा कानून की भावना के विपरीत है मानसिक यंत्रणा या अप्रत्यक्ष भय के कारण किये जाते हैं । इस अध्ययन से यह भी स्पष्ट होता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में चलते-पुर्जे या अपराधिक प्रवृत्ति के लोगों का प्रभाव है और शांतिप्रिय नागरिक असहाय होकर उनके अनुसार कार्य करने को बाध्य है । वस्तुतः जंगल का कानून की अवधारणा जनपद के ग्रामीण क्षेत्रों में अब भी प्रचलित है ।

क्रमांक-4 अ। <u>व्यक्ति का पूर्व इतिहास</u> :- अच्छे आचरण का व्यक्ति है।। कोई पूर्व अपराधिक गतिविधियाँ नहीं है । उच्च जाति तथा सरकारी सेवा में होने के कारण गांव में रौंब तथा इज्जत है ।

ब। <u>वर्तमान अपराध के बारे में मत</u> :- साफ-सुथरे लिबास में रोबदार व्यक्तित्व का मालिक है । हरिजनों के प्रति रुढ़िवादी दृष्टिकोण नहीं है । वर्तमान अपराध के बारे में पूछने पर उसका कहना है कि थोड़ी कहा-सुनी हो [illegible] और यह कहा-सुनी कोई पहली बार नहीं

हुई है अक्सर हो जाया करती है। किन्तु मैंने कोई अपराधिक कृत्य नहीं किया है जो सामान्य बातचीत हुआ करती थी वही इस दिन भी हुई थी। ऐसा भी नहीं है कि एक पक्षीय बात होती हो जितना मैं कहता था उतनी ही उस तरफ से जवाब मिलता रहा है। सामान्य बात-चीत की रिपोर्ट कराये जाने का कारण वह पुलिस तथा दलालों को मानता है। वादी के हरिजन होने का नाजायज लाभ पुलिस वालों ने उठाया है। उत्तरदाता का कहना है कि मात्र एक बार पुलिस द्वारा मुझे डांटने की फीस वादी ने पुलिस को 100/- रुपया दी है यदि पुलिस ईमानदारी से सरकारी नीतियों को क्रियान्वयन करे तो देश का उद्धार हो सकता है। अपराध से विमुक्त होने का कारण पूछने पर उत्तरदाता ने बताया कि साक्ष्य के अभाव में उसे विमुक्त कर दिया गया है। साक्षी तथा वादी साक्ष्य देने न्यायालय क्यों नहीं आये, इस सम्बन्ध में उसने कुछ भी बताने से इन्कार किया है किन्तु उसका यह कहना है कि सब हुनर का काम है। अपराध के विचारण में उसे अलावा कुछ पैसे खर्च करने के और कोई परेशानी नहीं हुई है। उसका कहना है कि सब कुछ सम्भव है। अपराधी की स्थिति हर प्रकार से पीड़ित से श्रेष्ठ है। घर में कृषि के अतिरिक्त नौकरी से उसे अतिरिक्त आमदनी हो जाती है।

(स) <u>तथ्य विश्लेषण</u> :- घर में अच्छी कृषि जोत के अतिरिक्त अपराधी नौकरी में भी है और जिला मुख्यालय में अनेकों लोगों से उसका परिचय है। आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक तीनों स्तर अपराधी को पीड़ित की अपेक्षा अच्छे हैं। वाद की परिस्थितियों से यह स्पष्ट होता है कि अपनी विशेष स्थिति का लाभ अपराधी ने उठाया है और बिना किसी साक्ष्य के उसे विमुक्त कर दिया गया है। इसके दो कारण सम्भावित हैं कि या तो न्यायालयीन सम्मनवादी या गवाहान को किन्हीं

कारणों से मिले ही नहीं है या फिर वे अभियुक्त के विरुद्ध साक्ष्य देने का साहस नहीं कर सके निश्चित रूप से इसमें न्यायालय तथा प्रशासनिक मशीनरी की अक्षमता या निष्ठा संदिग्ध प्रतीत होती है। अपराधी का यह कथन कि उतनी बातचीत सामान्य प्रक्रिया है। यह दर्शाती है कि अपराधी सामान्य गाली गलौज को अपना अधिकार मानता है और यदि पुलिस वालो ने रिपोर्ट लिखी है तो स्वाभाविक है कि वादी को अतिरिक्त कुछ करना पड़ा है। यह वाद ग्रामीण स्तर पर शोषण तथा अपराधियों के दुस्साहस को उजागर करता है कि किस तरह से प्रभावशाली अपराधी अपने आपको न्यायिक परिणामों से भी मुक्त करा सकते है। और इसका क्या मनोवैज्ञानिक प्रभाव वादी पर हुआ होना इसकी मात्र कल्पना ही जा सकती है। अपराधी वर्तमान युग में पैसे को सब कुछ मानता है और उसको यह मान्यता है कि पैसे क्या नहीं हो सकता है। निश्चित रूप से समाज के लिये चुनौती है।

क्रमांक-5 अ। व्यक्ति का पूर्व इतिहास :- अपराधी गांव का सम्पन्न तथा चलापुदार व्यक्ति है। तीन भाई तथा उनके परिवार सभी संयुक्त रूप में रहते हैं। कोई पूर्व अपराधिक इतिहास नहीं है।

ब। वर्तमान अपराध के बारें में मत :- अपराधी का भाई ग्राम सभा में उपप्रधान है। अपराध के बारें में उसका कहना है कि साब हमारे कुत्ता ने गांव के चमार को काट लिया था और उसका उलाहना उसने हमको दिया तो हमने उसे समझाया कि जो होना था तो हो गया अब चिल्लाने से क्या होता है तथा थोड़ा सा डांट भी दिया बस इस बात का पता विरोधीयों को लग गया और उन्होंने रिपोर्ट करवा दी। गवाहान के विरोधी होने के कारण उसके अनुसार उसकी ईमानदारी है

और उसके अनुसार गवाह भले आदमी थे तथा उन्होंने पुलिस के व्दारा मनगणन्त कहानी का समर्थन नहीं किया है। न्यायालयीन कार्यवाही पर पूरा विश्वास अपराधी को है और उसके अनुसार अदालत ने सही फैसला देकर उसे बरी किया है। अपराधी बड़ी गम्भीरता से यह महसूस करता है कि उच्च कुल में जन्म लेना अभिशाप हो गया है। उसका कहना है कि अगर वहीं बात कोई हरिजन कह देता है तो कोई बात नहीं, किन्तु यदि हमने कह दी तो अपराध् हो गया और सरकार इनकी मदद करती है।

﴾स﴿ तथ्य विश्लेषण :- ग्रामीण क्षेत्रों में साधारण गाली गलौज तथा झिड़कना सामान्य बोल-चाल की भाषा है और कोई अपराधिक भाव इस गाली-गलौज में नहीं रहता है। भारतीय दण्ड विधान का अध्ययन करने से भी धारा 504 एवं 506 की भावना के अनुसार यह अपराध प्रतीत नहीं होता है। पालतू कुत्ता व्दारा काटना स्वयं में एक गम्भीर अपराध है किन्तु विवेचना में इस अपराध को सम्मिलित न करके सामान्य सी धाराओं में आरोप-पत्र प्रेषित किया गया है गया है। यह तथ्य अन्वेषण एजेन्सी की अक्षमता प्रदर्शित करता है। यद्यपि अपराधी ﴾उत्तरदाता﴿ न्यायालयीन प्रक्रिया पर विश्वास प्रकट करता है किन्तु इसका कारण मात्र यह है कि वह दोषमुक्त घोषित किया गया है। अपराधी का ग्रामीण नेतृत्व तथा किसी सीमा तक जिला स्तरीय राजनीति से सम्बन्ध है और आर्थिक स्थिति भी अच्छी है अतः गवाहान व्दारा अपराधी का समर्थन भी स्वाभाविक है। परन्तु अपराधी इसे ईमानदारी मानता है। यह तथ्य यह दर्शाता है कि ग्रामीण समाज में सामाजिक न्याय एवं नैतिक मूल्यों का पतन हो रहा है और अपने हितों के सापेक्ष ही मूल्यों की व्याख्या की जाती है। सत्यता तथा ईमानदारी की जगह अब स्वार्थपरता सर्वोच्च हो रही है।

राज्य सरकार द्वारा हरिजनो के विरुद्ध होने वाले असंज्ञेय वादो में जो विशेष अभियोजन किया जाता है उस नीति के विरुद्ध भी सवर्ण जाति में असन्तोष है और उनकी मान्यता है कि एक ही अपराध के लिये इनका अभियोजन किया जाता है किन्तु यदि वही अपराध हमारे विरुद्ध किया जाता है तो कोई पूछता नहीं है ।

क्रमांक-6 ॥अ॥ व्यक्ति का पूर्व इतिहास :- सामान्य आर्थिक स्तर अपराधिक गतिविधियाँ नहीं हैं ।

॥ब॥ वर्तमान अपराध के बारें में मत :- साधारण किसान की तरह का वेशभूषा एवं रहन-सहन है । सम्पूर्ण गांव में लोधियों का प्रभाव है और अधिकतर कृषि भूमि पर इस जाति का अधिकारहै । अपराधी महसूस करता है कि उसने मारा तो था किन्तु इतना नहीं मारा था कि रिपोर्ट की जाय । गांव की पार्टी बन्दी के कारण रिपोर्ट की गयी है । अपराधी का खानदानी व्यक्ति, गांव के प्रधान का विरोधी है और इसी कारण प्रधान की पार्टीके लोग उसे अपना विरोधी मानते है । उसे न्यायिक प्रक्रिया से कोई भय नहीं है । उसका कहना है कि वादी की पहल पर राजीनामा कर रहा हूँ अन्यथा मुझे अदालत का कोई भय नहीं है । इसके अनुसार वह हर हाल में वादी के जीतने की स्थिति में है । उसके विरुद्ध गवाही चमार जाति के हैं किन्तु इस वर्ष उसने उनको सजधार ॥सौंजिया॥ बना लिया है अतः निश्चित ही वे उसका समर्थन करेंगें । वह मानता है कि सरकार अनावश्यक रूप से हरिजनों को बढ़ावा दे रही है । सरकार द्वारा बढ़ावा दिये जाने के कारण पुरानी सामाजिक-व्यवस्था में उथल-पुथल हो रही है जिससे गाँवों का वातावरण बिगड़ रहा है ।

॥स॥ तथ्य विश्लेषण :- न्यायिक प्रक्रिया का अवमूल्यन इतना हो चुका है कि ग्रामीण जन आर्थिक स्थिति के आधार पर जीत हार का

आंकलन करते हैं । इस उत्तरदाता की यह मान्यता है कि मुकद्दमा उसी के पक्ष में होता जिसके पास रुपया होगा ।

उत्तरदाता हरिजनों को मारने का अधिकारी मानता है और उसका कहना है कि यदि पार्टीबन्दी न होती तो थाने तक बात न पहुंचती । इसके साक्षात्कार से यह स्पष्ट होता है कि अक्सर हरिजनों पर साधारण अत्याचार किये जाते हैं किन्तु इन साधारण घटनाओं को उच्च वर्ग के व्यक्ति अत्याचार नहीं मानते हैं ।

जातिवाद एवं पार्टीबन्दी दो महत्वपूर्ण कारक भारतीय गांवों में विद्यमान हैं और प्रत्येक अपराधिक घटना में कई लोग मिल कर अत्याचार करते हैं किन्तु यह दुर्भाग्यपूर्ण ही है कि पीड़ित पक्ष में विरोध को इतनी सामाजिक चेतना जाग्रत नहीं हुई है या उनमें इतनी सामर्थ नहीं है कि वे सवर्णों का प्रतिरोध कर सकें ।

क्रमांक-7 (अ) व्यक्ति का पूर्व इतिहास :- गरीब निम्न आर्थिक स्थिति का व्यक्ति है । शहर में पल्लेदारी का कार्य करता है । घर में दो भाई तथा वृद्ध पिता है । सामाजिक स्थिति अधिक सम्मानजनक नहीं है । अपराधिक इतिहास नहीं है ।

(ब) वर्तमान अपराध के बारे में मत :- पीड़ित एवं अपराधी दोनों की आर्थिक स्थिति निम्न हैऔर लड़ाई बराबरी की थी । गवाहान अभियुक्त की आर्थिक स्थिति से अच्छे स्तर के थे और उन्होंने पीड़ित के कथन का समर्थन किया है । उसका मानना है कि न्याय कहीं नहीं मिलता है वह कहता है कि यदि मेरे पास पैसा होता तो मैं अच्छा वकील कर लेता किन्तु पैसा न होने के कारण मैं सही ढंग से मुकद्दमा की की पैरवी नहीं कर सका । पुलिस वाले भी मेरे विरुद्ध खूब पैरवी करते थे ।

मेरे सामने गवाहियों को झूठी-झूठी बातें बातें कोर्टसाहब तथा पेशकार ने पढ़ाई और फिर ब्यान कराया । अभियुक्त मानता है कि उसका राजनीति से कोई रिश्ता नहीं है । अभियुक्त को चेतावनी देकर बरी किया गया किन्तु वह समझता है कि उसे बरी किया गया है ।

स। तथ्य विश्लेषण :- उत्तरदाता यह तो स्वीकारता है कि झगड़ा हुआ था किन्तु वो यह नहीं मानता कि उसे अपराध के लिये दण्डित किया गया है । उसका मानना है कि गरीबी के कारण उसके मुकद्दमें की सही पैरवी नहीं हो सकी ।

अज्ञानता की सीमा यह है कि उत्तरदाता नहीं मानता है कि उसे दण्डित किया गया है बल्कि वह समझता है कि उसे छोड़ दिया गया है ।

उत्तरदाता कहता है कि उसे भी पीड़ित ने गाली-गलौज की थी किन्तु उसकी सुनवाई नहीं हुई । अपराधी यद्यपि सवर्ण जाति का है किन्तु उसकी आर्थिक स्थिति पीड़ित से बेहतर नहीं है । इस अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि न्यायिक प्रक्रिया में सामाजिक स्थिति की अपेक्षा आर्थिक स्थिति अधिक महत्वपूर्ण प्रभावशाली भूमिका निर्वाह करती है ।

प्रकरण-8 अ। व्यक्ति का पूर्व इतिहास :- सामान्य आर्थिक स्तर का परिवार है । चार लड़के तथा नाती हैं । सामाजिक प्रतिष्ठा है । कोई अपराधिक इतिहास नहीं है ।

ब। वर्तमान अपराध के बारे में मत :- जानवरों के ऊपर थोड़ा सा वाद-विवाद हुआ जैसा कि अक्सर होता रहता है, किन्तु गांव की रंजिश तथा पुलिस की नाराजी के कारण मुकद्दमा चलाया गया है ।

राजीनामा के कारण की जानकारी करने पर उसका कहना है कि वादी मेरा पड़ौसी है । मेरे उससे अच्छे सम्बन्ध हैं किन्तु सामान्य हित होने के कारण कुछ नोंक-झोंक हो जाती है किन्तु कोई ऐसा विवाद नहीं है कि कोर्ट-कचहरी में मामला जाये । स्वयं वादी ने उपसकर (पहल करके) राजीनामा की इच्छा जाहिर की थी । सच तो यह है कि हम लोगों को मुकदमें का पता ही नहीं था जब सम्मन पहुंचा तब होश आया और राजीनामा कर लिया । गांव के लोगों ने भी राजीनामा अड़ंगा नहीं लगाया । उसका मानना है कि पुलिस वालों की वजह से गलत मुकदमें चलाये जाते हैं ।

(स) तथ्य विश्लेषण :- अपराधी/उत्तरदाता मामूली नोंक-झोंक को अपराध नहीं मानता है जो स्वाभाविक ही है । उत्तरदाता आश्चर्य से कहता है कि मुकदमा की उसको जानकारी नहीं थी और राजीनामा से पूर्व तक उसके वादी से अच्छे सम्बन्ध थे । उसे पहली बार अदालत में पता चला कि उसके विरुद्ध किसने मुकदमा चलाया है ।

इससे स्पष्ट होता है कि इन मुकदमों के पीछे कुछ निहित स्वार्थ होते हैं और कानून का दुरुपयोग होता है । असंज्ञेय अपराध के अपराधियों को आमतौर से गिरफ्तार नहीं जाता है । इससे सम्पूर्ण विवेचना में उन्हें कुछ भी आभाषित नहीं होता है । इसके विपरीत वादी को कई बार जांच के दौर से गुजरना पड़ता है । अच्छा होता कि असंज्ञेय वादों की विवेचना भी संज्ञेय वादों की तरह की जाय इससे गिरफ्तारी के वास्तविक खतरे से अपराधी भी भयभीत होते और असंज्ञेय वादों को सामान्य सी बात नहीं माना जाता । यहां इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि इसका दुरुपयोग न हो ।

क्रमांक-9 ।अ। व्यक्ति का पूर्व इतिहास :- गांव के सभी व्यक्तियों के काम आने वाला परिवार है । अपनी जाति का मुखिया है अपराधी गतिविधियाँ नहीं है ।

।ब। वर्तमान अपराध के बारें में मत :- मिट्टी लेने के ऊपर झगड़ा हुआ है । उसने बड़े दु:खी मन से कहा है कि उसे "छिये को छिनारी" लगा है । मामूली सी नोंक-झोंक हुई थी; किन्तु तमाशबीनों ने तमाशा बना दिया है । पुलिस के व्योपहार से असन्तुष्ट हैं और उत्तरदाता मानता है अपराध ना भी हो तो पुलिस वाले बना देते हैं । वाद के निस्तारण एवं विवेचना में राजनैतिक प्रभाव के प्रति अनभिज्ञता प्रकट करता है । हालांकि यह अपनी जाति तथा गांव में सामान्य से अच्छी सामाजिक स्थिति का व्यक्ति है । राजीनामा कैसे हुआ इसके उत्तर में उसका कहना है कि न कोई झगड़ा हुआ था और न ही मुझसे वादी को कोई द्वेष था/गांव के समझदार व्यक्तियों ने भी राजीनामा करने की सलाह वादी तथा उसे दी थी । पीड़ित स्वयं भी राजीनामा चाहता था ।

।स। तथ्य विश्लेषण :- सामान्य किस्म के अपराधों को ग्रामीण सवर्ण अपराध तो मानते हैं किन्तु ऐसा अपराध नहीं मानते हैं जिसकी सजा दी जायें ।

उत्तरदाता कुछ सिरफिरे किस्म के लोगों तथा पुलिस को अपने अभियोजन के लिये उत्तरदायी मानता है ।

ग्रामीण बुजुर्ग संघर्ष की अपेक्षा समझौतावादी अधिक है और पीड़ित को भी अनेकों प्रकार से समझाकर राजीनामा करने को बाध्य करते है । 50 वर्ष की आयु का अपराधी होने के कारणों की जाँच करने पर ज्ञात होता है कि अपने युवा पुत्रों के साथ मिलकर उत्तरदाता

ने अपराध किया है जिससे वह स्वयं अपराध नहीं मानता है । वर्तमान अध्ययन से स्पष्ट होता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में अहस्तक्षेपीय अपराध गुटबन्दी के कारण नहीं होते हैं बल्कि अपराध होने के बाद की प्रक्रिया में गुटबन्दी/ग्रामीण राजनीति सक्रिय भूमिका अदा करती है और प्रत्येक पक्ष को किसी खास दल में मिलना आवश्यक हो जाता है ।

क्रमांक-10 ॥अ॥ व्यक्ति का पूर्व इतिहास :- दो भाई हैं । मजदूरी/कारीगरी में अच्छी आमदनी हो जाती है । अपराधिक इतिहास नहीं है ।

॥ब॥ वर्तमान अपराध के बारे में मत :- उसने मजदूरी के पैसे माँगे थे और इसी पर तू-तू मैं-मैं हो गयी थी । गालियां दोनों ओर से दी गयीं थीं । उसे सरकार से शिकायत है कि उसे एक चमार गाली दे गया तो कोई बात नहीं किन्तु उसके विपरीत मुकद्दमा चलाया गया । राजीनामा करने के लिये पीड़ित ने तथा दलालों ने उससे पैसे लिये हैं । दुकानदारी के कार्य का नुकसान होने के कारण उसने किसी तरह छुटकारा पाया है । उसकी भाभी तथा पत्नि को भी मुल्जिम बनाया गया है जिन्होंने कुछ भी नहीं किया किन्तु पुलिसवालों ने कोई सुनवाई नहीं की ।

॥स॥ तथ्य विश्लेषण :- प्रस्तुत वाद में उत्तरदाता उसका भाई तथा पत्नि एवं भाभी भी अपराधी थी और उसके अनुसार उसने पैसे देकर छुटकारा पाया है । दुकानदार की प्रवृत्ति स्पष्ट होती है कि वह समय बरबाद नहीं करना चाहता है ।

पुलिस के प्रति उसकी शिकायत से यह स्पष्ट होता है कि

पुलिस की विवेचना सौहार्दपूर्ण नहीं, कपटपूर्ण होती है और पुलिस अपने अधिकारों तथा पद का दुरुपयोग करती है । उत्तरदाता का न्याय व प्रशासन में कोई विश्वास नहीं है ।

यह सामान्य अनुभव है कि आम व्यक्ति का पूर्ण विश्वास पुलिस प्रशासन पर नहीं है । इसके कई कारण है, कुछ तो कानून में कमियां है तथा कुछ सामाजिक मान्यतायें तथा कुछ ब्रिटिशकालीन पुलिस व्यवस्था है । सामान्यतया कोई भी अपराधी सत्य नहीं बोलता है और अपने कार्य को उपयुक्त एवं उचित ठहराने के लिये अपनी व्याख्या करता है । इन परिस्थितियों में पुलिस अधिकारियों को परेड ,ग्राउन्ड के अतिरिक्त सामाजिक/मनोवैज्ञानिक स्कूल में प्रशिक्षण दिया जाना आवश्यक है ।

3- <u>साक्षी</u>

क्रमांक-1 (अ) <u>पूर्व इतिहास</u> :- गांव में प्रभावशाली तथा सम्पन्न व्यक्ति है । ग्रामीण राजनीति में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है । प्रधान पद का दूसरे नम्बर का दावेदार है । सामन्ती युग में दावेदार रहा है ।

(ब) <u>वर्तमान अपराध के बारे में मत</u> :- वास्तविकता की जानकारी करने में बहुत कठिनाई एवं चतुराई का सहारा लेना पड़ा है । उसने बताया कि घटना सही है किन्तु वह प्रत्यक्षदर्शी साक्षी नहीं था किन्तु उसे वादी ने अपने विश्वास के कारण गवाही में लिखा दिया था । उसके अनुसार सरकार की ओर से अनुचित बढ़ावा हरिजनों को दिया जा रहा है । उत्तरदाता का ध्यान शोषण की ओर दिलाने पर उसका कहना है कि सामान्य गाली-गलौज हरिजनों से ही नहीं बल्कि सभी आपस में हो जाता है किन्तु मुकदमा नहीं चलता है ।

न्यायालय में साक्ष्य के बारे में वह कहता है कि उसने सही ब्यान दिया है । अनावश्यक रूप से दरोगा जी ने उसका झूठा प्रत्यक्ष दर्शी साक्षी के रूप में ब्यान, उससे बिना पूछे लिख दिया था जिसका समर्थन उसने नहीं किया है । उसका कहना है कि सरकारी वकील उसे झूठा ब्यान देने को बाध्य कर रहे थे, उचित नहीं है ।

इस सज्जन का अपराधी के प्रति सद्भाव, जातीयता के कारण है क्योंकि जब उससे पूछा गया कि यदि हरिजन अपराधी होता तो क्या वे गवाही देते, इस प्रश्न पर उसने गुस्से में कहा कि यदि कुंवर राव ठाकुर के लड़के से कोई हरिजन बदतमीजी करता तो वे वहीं फैसला सजा कर देते । उसके अनुसार जब हम पुलिसवालों को रोज खाना खिलाते हैं तथा पैसा दिलाते हैं तो उनका झुकाव मेरे प्रति होना स्वाभाविक ही है ।

स तथ्य विश्लेषण :- साक्षी को उससे पूछताछ किये बिना साक्षी बनाना तथा पुलिस की मजबूरी है । उत्तर प्रदेश पुलिस की यह विशेषता है कि वे मात्र साक्ष्य एकत्रित ही नहीं करते हैं बल्कि साक्ष्य को इसतरह से एकत्र करते हैं कि उपलब्ध साक्ष्य भा०द०वि० की धाराओं में पूर्णतया समा जाये । सामान्यतया जिस धारा में प्र०सू० लिखी जाती है सारा साक्ष्य उसी के अनुरूप एकत्रित किया जाता है और आरोप-पत्र भी उसी धारा में बना दिया जाता है । यह एक आम प्रक्रिया है । निश्चित ही यह अस्वाभाविक है प्रत्येक गवाह एक रूप में किसी घटना का वर्णन नहीं कर सकता है किन्तु विवेचक ऐसा करते हैं । पुलिस अधिकारी उसे कानूनी आवश्यकता बताते हैं जबकि न्यायाधीश इसे गलत परम्परा कहते हैं ।

प्रभावशाली वर्ग पुलिस को अपनी ओर झुकाने में स्वयं को समर्थ समझते हैं । इसका कारण उनकी सम्पन्नता तथा उपकृत करने के साधन हैं ।

अभियोजक भी गवाह को पुलिस व्दारा लिखे गये ब्यान का समर्थन करने को बाध्य करते हैं जो भले ही उनके कर्तव्य पालन का तरीका हो किन्तु स्वस्थ्य न्यायिक परम्परा के लिये यह उचित नहीं है जैसा कि साक्ष्य न्यायालय के समक्ष जाये उसमें नीर-क्षीर अलग-अलग करना ही न्यायालय का कार्य है और इसी में वकील तथा अभियोजक का सहायक होना है ।

क्रमांक -2 ॥अ॥ व्यक्ति का पूर्व इतिहास:- निम्न आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति का व्यक्ति है । राजनैतिक सम्बद्धता शून्य है । अपनी जाति के सदस्यों का हित-पोषक है ।

॥ब॥ वर्तमान अपराध के बारे में मत :- प्रत्यक्षदर्शी साक्षी नहीं है और मारपीट के बाद वह मजदूरी के बाद शाम को घर वापिस लौटा तो उसी पीड़ित के समर्थन में गवाही देने की हामी भर दी तथा पूरी मदद रिपोर्ट लिखाने में की है । उसका कहना है कि यदि मैं गवाही नहीं देता तो कौन एक चमार के समर्थन में पण्डितों के विरूद्ध गवाही देता । बिना गवाही के दरोगा जी रिपोर्ट नहीं लिख रहे थे ।

वह 2 बार कचहरी गवाही हेतु आया तब कहीं उसका ब्यान लिखा गया । उसने बताया कि उसे रिपोर्ट के बाद से ही निरन्तर धमकियाँ दी गयीं और अनेकों पण्डितों तथा भले आदमियों ने उसे मजदूरी पर नहीं लगाया । कचहरी परिसर में भी उसे धमकाया गया । उसने बताया कि उसे शाम तक कचहरी के सामने बैठा रहना पड़ा तथा निरन्तर

पुलिस का सिपाही उसे घेरे रहा ताकि वह मुल्जिम से न मिल जाये । बयानों के दौरान जिरह में उससे उट-पटांग सवाल पूछे गये, जिनका उत्तर देने में वह भूल गया । उससे एक घण्टे तक जिरह की गयी । जिरह के दौरान उससे वकील साहब जोर से सवाल पूछ कर उसे डराने की कोशिश करते थे । उत्तरदाता ने बताया कि मैं मजदूर आदमी वकील साहब के सवालों में क्या जानूं । उसे मिलने वाला खर्चा आधा दिया जाता था ।

उसने बताया कि एक गवाही के बदले उसका अनगिनत नुकसान हुआ है और अब भी भले आदमी मुझे संदेह की नजर से देखते हैं । मुकदमा तो छूट गया किन्तु मेरे विरुद्ध षडयन्त्र रचा जा रहा है ।

(स) <u>तथ्य विश्लेषण</u> :- कुशल एवं कुशाग्र बुद्धि के व्यवसायी वकील के प्रश्नों का उत्तर एक अनपढ़ साक्षी व्दारा दिया जाना निश्चित ही जटिल साक्ष्य अधिनियम में सीधे एवं सरल प्रश्न पूछने का प्राविधान है किन्तु व्यवहार में वकील व्दिय अर्थीय तथा उलझे हुये प्रश्न पूछते हैं और अभियोजन की ओर विशेष ध्यान न दिये जाने के कारण साक्षी उट-पटांग उत्तर दे देता है । होना तो यह चाहिये कि पहिले साक्षी से यह पूछा जाये कि क्या वह प्रश्न समझ गया है तब उसका उत्तर लिखा जाना चाहिये किन्तु यह एक कानून का व्यवहारिक दोष है कि वकील साहब किसी तरह अपने शब्द जाल में फंसाकर गवाह से मनमाने उत्तर निकलवा लेते हैं ।

साक्षी की सुरक्षा की हमारे देश में कोई व्यवस्था नहीं है । अहस्तक्षेपीय अपराध जिनमें पीड़ित गरीब तथा निम्नवर्ग का होता है तथा उसी गांव का अपराधी दोनों प्रकार से सम्पन्न होता है ऐसी परिस्थितियों में पीड़ित का समर्थन करना निश्चित ही कठिन कार्य है और ऐसे वादों में साक्षी की सुरक्षा, गम्भीर अपराधी की अपेक्षा अधिक आवश्यक है क्योंकि उन वादों की विवेचना का समाज को नया अनुभव है तथा यह अपराध

करना समाज का परम्परागत अधिकार रहा है । सम्पन्न व्यक्ति के विरुद्ध साक्ष्य देने के कितने गंभीर परिणाम मजदूर को भोगने हो सकते हैं इस तथ्य को प्रशासन को नजर में रखकर नीति निर्धारित करनी चाहिये ।

क्रमांक -3 ﴾अ﴿ व्यक्ति का पूर्व इतिहास :- घर में मां-बाप तथा भाई दुकान करते हैं । सामान्य आर्थिक स्तर का परिवार है । उत्तरदाता कोई स्थाई धन्धा नहीं करता है । थाने के चक्कर लगाना तथा दलाली करना ही काम है । एक मुकद्दमा चल चुका है ।

﴾ब﴿ वर्तमान अपराध के बारे में मत :- न्यायालयीन एवं पुलिस प्रक्रिया से पूर्णतया परिचित है और कोई बात तत्य बताने से इंकार करता है । बहुत विश्वास में लेने पर उसने अपनी कहानी सुनाई । उसने बताया कि वह पूरी तरह फस गया और पुलिस उसका मनचाहा प्रयोग करती है । उसके अनुसार वह अब तक 12 मुकद्दमों में झूठी गवाही दे चुका है और न जाने कितनों में गवाह बनाया गया हूँ । न चाहते हुये भी उसके पास कोई विकल्प नहीं है । उसने बताया कि जब कोई नहीं मिलता है तो दरोगा जी उसे ही दफा 60 में बन्द कर देते हैं । उसने बताया कि घरवाले नाराज हैं और वे नहीं चाहते कि मैं पुलिस की संगत करूं, किन्तु मैं अब निकल नहीं सकता । समाज वाले मुझसे दूर ही रहते हैं और कोई शादी भी नहीं करना चाहता है । हर भला आदमी मुझे संदेह की नजर से देखता है । पुलिस की शह से कभी-कभी अनैतिक कार्य भी कर लेता हूँ ।

उसने बताया कि पुलिस वाले उसे बिना किराया के बस में ले आते हैं तथा ले जाते हैं । कचहरी में वह सभी को जानता है । वकील, न्यायाधीश तथा सभी संबंधित व्यक्ति उसे देखकर ही पहचान लेते हैं । कई बार वह पैसे लेकर पक्षकार के समर्थन में साक्ष्य दे देता है और कभी-कभी बड़ी चतुराई से दोनों पक्षों में संतोष के लिये साक्षी दे देता है ।

॥स॥ तथ्य विश्लेषण :- प्रस्तुत वाद से स्पष्ट होता है कि पेशेवर साक्षी वर्तमान न्यायिक व्यवस्था की देन है और यह साक्षी न्याय व्यवस्था के लिये गंभीर खतरा हैं । साक्षी स्वयं भी मजबूर है और इनका निर्माण करने वाली ऐजेन्सी भी इनको पालने के लिये मजबूर है क्योंकि कोई भी व्यस्त आदमी गवाह देने को तैयार नहीं होता है । पेशेवर साक्षी समाज में अनेकों भ्रष्ट कार्य करते हैं और समाज से तिरस्कृत व्यक्ति हैं । यद्यपि तत्कालीन भय के कारण लोग इनसे डरते रहते हैं ।

साक्ष्य की कीमत लेकर साक्ष्य देना इनका पेशा है और सभी प्रकार की अवांछित चालाकियां इन साक्षियों में पाई जाती है ।

पुलिस इनको जेबी गवाह की तरह हर प्रकार से इस्तेमाल करती है और इनके साक्ष्य का मूल्य कानून की नजर में शून्य होने के कारण मुकद्दमे बरी हो जाया करते हैं । अनुभव से यह देखा गया है कि जिन वादों में एक भी जेबी गवाह होता है उन वादों के प्रति न्यायालय के मन में संदेह पैदा हो जाता है तथा अक्सर उस घटना के अन्य साक्षियों के साक्ष्य को भी पेशेवर गवाह का साक्ष्य ले डूबता है वैसे इनके साक्ष्य को चतुर वकील भी तोड़ नहीं पाते हैं ।

क्रमांक -4 ॥अ॥ व्यक्ति का पूर्व इतिहास :- गांव के प्रभावशाली तथा सम्पन्न परिवार का मुखिया है । भाई ग्राम प्रधान है । कोई पारिवारिक उत्तरदायित्व नहीं है । गांव की पंचायतें करने में माहिर है । जिला स्तरीय राजनीति में योगदान है ।

॥ब॥ वर्तमान अपराध के बारे में मत :- सम्पन्न एवं प्रतिष्ठित परिवार से संबंधित होने के कारण उत्तरदाता को सत्य बोलने में अधिक संकोच नहीं है । उसने बताया कि वादी चमार है और रिपोर्ट करवाने का श्रेय उसे ॥ उत्तरदाता ॥ को जाता है ॥ उसके अनुसार ऐसी गाली-गलौज की आम बात है । पीड़ित स्वयं भी इसे अपराधिक नहीं मानते

है । मुख्तिआन का परिवार हमारा पुराना दुश्मन है अतः इन्हें नीचा दिखाने के लिये मैंने वादी से कह कर रिपोर्ट लिखाई थी । वादी ने मुझे शाम को बताया था कि लम्बरदार के आदमियों ने गाली दी है । मैं वादी के साथ थाने गया था तथा अपने हिसाब से रिपोर्ट लिखवाई थी । थाने दार को गवाही के नाम भी मैंने बताये थे । डाक्टरी मैंने कराई थी और खर्चा उठाया था ।

गांव में बड़ों की पंचायत हुई थी । सबने यह कहा था कि आपस में झगड़े नहीं होना चाहिये । यह सलाह मेरी जाति के लोगों की भी हुई थी । मैंने ही वादी से राजीनामा दाखिल करवाया था । वादी अब भी मेरे यहां बटाई पर खेती का काम करता है ।

उसके अनुसार सरकार हरिजनों को बढ़ावा अवश्य दे रही है किन्तु उसका उपयोग हम लोग अपने हित में करते हैं । हरिजनों को सुविधायें दिलाते तो हम लोग हैं । साहब लोगों से सिफारिशें करना हमारा ही काम है । जब तक हम मदद न करें हरिजन कुछ नहीं कर सकते हैं ।

।स। <u>तथ्य विश्लेषण</u> :- ग्रामीण जीवन में हरिजन स्वतन्त्र व्यक्ति नहीं वे आश्रित रूप से किसी न किसी सम्पन्न व्यक्ति पर निर्भर है । हरिजनों पर जुल्म तो होते ही रहते हैं किन्तु इनका उपयोग ग्रामीण राजनीति में मुखिया करता है । वह अपने हितों के अनुसार इसका दुरूपयोग करता है । अपराधी तथा गवाहान के नाम, घटना का समय, स्थान एवं स्वभाव भी मुखिया व्दारा तय किया जाता है । यह दुर्भाग्य ही है कि हमारी विवेचना की ऐजेन्सीज मेज पर बैठकर गवाहान तथा वादी के ब्यान लिख देते हैं । चतुर व्यक्ति बड़ी शान से चोटें बनवाने की फीस एवं धारा बनवाने की फीस भी बता देता है । यदि विवेचक झूठी रिपोर्ट करने के विरूद्ध कार्यवाही भी करना चाहते हैं या करने की

धमकी दे तो वह भी वादी के विरुद्ध होगा जिसकी भूमिका पिटने एवं अंगूठा लगाने से अधिक कुछ नहीं है ।

अपराध का राजीनामा करना या लड़ने का निर्णय भी बड़े लोग कर लेते हैं और इन्हीं के आदेशानुसार पीड़ितनुमा कठपुतली अंगूठा लगा देते हैं । पीड़ित को लड़ने या राजीनामा करने दोनों स्थितियों में कुछ प्राप्त नहीं होता है यह मेहरबानी ही है कि उत्तरदाता ने खर्चा स्वयं वहन किया है । वरना राज्य की ओर से किया जाने वाला यह अभि-योजन व्यक्तिगत परिवाद से भी मंहगा पड़ता है । उत्तरदाता समझता है कि निजी परिवार में कुछ नहीं होता है । पुलिस केश से शान बढ़ गयी है । अतः इसमें यदि अधिक खर्चा हो तो भी ठीक है ।

सरकार के प्रत्येक विभाग न्याय-पुलिस सभी से काम कराने की महारथ ग्रामीण मुखियाओं में होती है । क्योंकि उनके पास समय तथा साधन होते हैं और हर प्रकार पीड़ित उनके इस खेल का एक पुर्जा मात्र होता है । ऐसे भी पीड़ित होते हैं जिनका उपयोग कोई नहीं करता है या अपराधी इतना प्रभावशाली होता है कि उसका विरोध कोई नहीं कर पाता है तो वह निःसंकोच अपराध करता रहता है और ऐसे पीड़ितों के विरुद्ध अपराधों का पंजीकरण नहीं किया जाता है ।

क्रमांक -5 ﴾अ﴿ <u>व्यक्ति का पूर्व इतिहास</u>:- गांव के साहूकार के यहाँ नौकरी करता है । कोई अपराधिक इतिहास नहीं है । घर में पत्नि 2 लड़के तथा माता-पिता हैं ।

﴾ब﴿ <u>वर्तमान अपराध के बारे में मत</u> :- प्रत्येक सरकारी कार्यवाही से दूर रहना चाहता है उत्तरदाता ने बताया कि वादी ने उसका नाम गवाहों में उससे बिना पूछे लिखा दिया था यदि पूछकर लिखवाता तो

शायद वह गवाही भी दे देता । उसका कहना है कि उसने मारपीट देखी तो नहीं थी किन्तु यह बात सही है कि उसकी पत्नि ने मारपीट देखी थी । उसने वादी की गवाही देने से साफ मना कर दिया था । दरोगा जी ने थाने बुलवाया था वहाँ भी उसने गवाही देने से इंकार किया था दरोगा जी उसे तलाशते हुये साहूकार की दुकान पर आये थे तो साहूकार ने काफी नाक-भौं सिकोड़ी थी और उससे कहा था कि यदि पुलिस के चक्कर में फसे तो नौकरी से निकाल दूंगा ।

न्यायालय में उसने साफ-साफ यह कह दिया था कि उसने कुछ नहीं देखा है । वह कहता है कि पुलिस वालों ने तथा सरकारी वकील ने वादी के इशारे पर मुझे काफी धमकाया । झूठी गवाही देने के धौंस दिलवाई तथा मुकद्दमा चलाने की भी धमकी दी है । उसका मानना है कि सरकार अनावश्यक रूप से हरिजनों को बढ़ावा दे रही है । उन कानूनों से रंजिश बढ़ने के अतिरिक्त और कुछ नहीं मिलता है ।

॥स॥ तथ्य विश्लेषण :- वस्तुतः अपराधिक कार्य एकान्त में किये जाते हैं किन्तु विवेचक उसे इस ढंग से पेश करता है जैसे पूर्व नियोजित योजना के अनुसार गवाह बुलाकर ड्रामा किया जा रहा हो । ग्रामीण जीवन में सभी पुरूष वर्ग अपने खेत-खलिहान पर निकल जाते हैं और स्त्रियां घर पर रहती हैं । चूंकि स्त्रियां न्यायालय में आना अनेक सामाजिक कारणों से पसन्द नहीं करती हैं/अतः झूठे गवाह रखे जाते हैं । गवाहान झूठी गवाही देने को भी तैयार रहते हैं ।

सम्पन्न और व्यापारी वर्ग पुलिस को आदर की दृष्टि से नहीं देखते हैं और पुलिस की छवि इतनी बिगड़ चुकी है कि कोई सभ्य नागरिक पुलिस को अपने दरवाजे पर आना अपशकुन मानते हैं ।

पुलिस अनावश्यक रूप से झूठी गवाही का प्रबन्ध करती है और गवाह से किसी प्रकार अपने समर्थन में गवाही दिलवाना अपने कर्तव्य का निर्वाह समझती है जबकि वास्तव में यह कानून की नजर में अवैधानिक तथा दण्डनीय अपराध है । पुलिस की जनता में छवि तथा झूठे गवाहों का निर्माण यह दोनों स्वच्छ समाज के लिये कलंक है तथा इस दिशा में सुधार की आवश्यकता है ।

क्रमांक -6 ﴾अ﴿ व्यक्ति का पूर्व इतिहास :- सम्पन्न परिवार का प्रतिष्ठित व्यक्ति है । प्रत्यक्ष रूप से अपराधिक इतिहास नहीं है ।

﴾ब﴿ वर्तमान अपराध के बारे में मत :- विश्वास में लेने पर उसने बताया कि वह स्वयं अपराधी था और उसके चचेरे भाईयों को अपराधी बनाया गया है । इसका कारण पूछने पर उसने बताया कि यह सब उसकी हुनर से तथा पुलिस की मेहरबानी से संभव हो सका है । उसने बताया कि साहब, सरकार की इस जातिवाद नीति ने अपनी इज्जत बचाने के लिये यह आवश्यक है वरना मामूली सी सही या झूठी रिपोर्ट पर अच्छे भले आदमी की इज्जत बरबाद हो सकती है । उत्तरदाता कुटिलता से मुस्कराता हुआ बताता है कि मैंने गवाही अपराधियों के समर्थन में दी और मुकद्दमा छूट गया । उत्तर दाता बतलाता है कि कानून को गवाही चाहिये होती है और हम लोग उस पर नियन्त्रण रखते हैं और इसीलिये आज भी अपना चलाया जमींदारों के रूप में कायम रखे हैं । इसे पुलिस से कोई शिकायत नहीं है "कहता है कि यदि सरकारी कर्मचारी हमारी मदद न करे तो इस राज्य में सभी भले आदमी जेल में डाल दिये जायें ।

﴾स﴿ तथ्य विश्लेषण :- शासन की नीतियां और उसके पालन करने वाले विभागों में इतना विरोधाभास है । यह आश्चर्यजनक है ।

इससे स्पष्ट होता है कि अधिकारियों के प्रोत्साहन से न्याय के नाम पर अन्याय होता है तथा सरकार की नीतियों का सही क्रियान्वयन नहीं हो पाता है। ऐसा प्रतीत होता है कि अपराधियों की मदद की उद्देश्य से जानबूझकर गलत साक्षियों का नाम लिख दिया जाता है जिससे कानून का शाब्दिक पालनहो जाता है किन्तु उसकी भावना के विपरीत सरकारी नीतियों का दुरुपयोग होता है। स्वाभाविक रूप से इस विरोधाभास कार्यवाही से निर्बल वर्ग का मनोबल गिरता है तथा पुलिस उच्च वर्ग के मित्र के रूप मे उभर कर आती है।

देश के बड़े-बड़े कानूनविद् तथा न्यायाधीशों, जो साक्ष्य के आधार पर मुकददमों का फैसला करते है वस्तुतः इस साक्ष्य पर ग्रामीण क्षेत्रों के सम्पन्न लोग पूर्ण अधिकार रखते हैं। साक्षी का साक्ष्य कैसा होगा। यह बात ग्रामीण परिस्थितियों पर निर्भर करता है और यदि स्वतन्त्र एवं निष्पक्ष साक्ष्य न्यायालय के समक्ष नही रखा जाता है। न्याय के उद्देश्यों की पूर्ति होना संभव नहीं है। ऐसा स्पष्ट होता है कि स्वच्छ सामाजिक आर्थिक एवं राजनैतिक परम्पराओं केबिना वर्तमान न्याय व्यवस्था की सफलता संदिग्ध है।

क्रमांक-7 ॥अ॥ व्यक्ति का पूर्व इतिहास :- सामान्य आर्थिक स्थिति का व्यक्ति है। जूते जोड़ने एवं बनाने का कार्य करता है।

॥ब॥ वर्तमान अपराध के बारे में मत :- यह बहुत सुलझा हुआ व्यक्ति है। व्यापारिक चातुर्य है। उसकी बातचीत से स्पष्ट होता है कि उत्तरदाता स्पष्ट रूप से कहता है कि वह दुकानदार है और उसका सम्पर्क सभी वर्ग के व्यक्तियों से रहता है। यह वह गवाही के चक्कर मे पड़ता है तो इसका प्रभाव उसकी दुकानदारी पर पड़ेगा। उत्तरदाता

मानता है कि थोड़ी सी बात पर कोर्ट-कचहरी में आना ठीक नहीं है आपस की बात गांव में ही तय हो सकती है ।

उसने प्रयत्न करके पीड़ित तथा अपराधी का राज़ीनामा करवा दिया है और इस कार्य के लिये उसने पीड़ित को कुछ रुपये भी अपराधी से दिलवायें हैं । पुलिस से भयभीत है और वह मानता है कि इस गवाही के लिये उसे पुलिसवालों का काम मुफ़्त में करना पड़ा है तथा अपमानजनक व्यवहार भी उससे किया है ।

§स§ <u>तथ्य विश्लेषण</u> :- दुकानदार व्यक्ति सुलझे व्यक्तित्व का होता है और उसकी यह प्रवृत्ति उसके व्यवसायिक हितों के अनुकूल है । उत्तरदाता की बातों से यह स्पष्ट होता है कि न्यायिक प्रक्रिया से कुछ उपलब्ध नहीं होता है और आम नागरिक अपने प्रत्येक कार्य का मूल्य चाहता है यदि पीड़ित को अपराधी से कुछ आर्थिक लाभ मिल गये तो गरीबी स्तर पर जीने वाले ग्रामीण लोग दण्ड से अधिक महत्वपूर्ण मानते हैं । हमारी न्याय व्यवस्था इतनी उलझीहुई है कि साधनहीन व्यक्ति न्याय पाने में असमर्थ है ।

पुलिस अपने कार्यों से जनता से दूर हो गयी है और जन-विश्वास पुलिस में नहीं है ।

क्रमांक -8 §अ§ <u>व्यक्ति का पूर्व इतिहास</u> :- इससे पूर्व एक गवाही दे चुका है । सामान्य आर्थिक स्तर का व्यक्ति है ।

§ब§ <u>वर्तमान अपराध के बारे में मत</u> :- यह समझदार एवं दूरदर्शी व्यक्ति है । उसने बताया कि घटना उसके सामने की है और उसने वादी को रिपोर्ट लिखाने भेजा था । उत्तरदाता ने बताया कि न्यायालय में उसने पीड़ित का समर्थन इसलिये नहीं किया क्योंकि

वह जानता था कि रंजिश बढ़ने के अतिरिक्त उसे कुछ भी प्राप्त नहीं होना था । उत्तरदाता ने बताया कि उसे पड़ोसी वकील साहब से जानकारी हुई कि यदि सब कुछ ठीक रहा तो भी अपराधी को चेतावनी या थोड़े बहुत रुपये का जुर्माना हो सकता है । अत: उत्तरदाता ने यह उचित समझा कि इस मामूली सजा के बदले क्यों न वह अपराधी पर एहसान कर दे । पुलिस एवं न्याय व्यवस्था दोनों पर ही उसका विश्वास नहीं है ।

॥स॥ तथ्य विश्लेषण :- भा०द०वि० का अवलोकन करने से यह स्पष्ट होता है कि बहुत दण्ड का प्राविधान इन अपराधी के लिये है और व्यवहार में जो सजायें अहस्तक्षेपीय अपराधों में न्यायालयों व्दारा दी जाती है वह नगण्य है । अत: यह उचित ही है कि इन सजायों की अपेक्षा गवाह या पीड़ित अपराधी पर उसके समर्थन में साक्ष्य देकर एहसान कर ले, होना तो यह चाहिये कि प्रत्येक वाद के पीड़ित को अनिवार्य रूप से कुछ राहत दी जाये तभी अभियोजन के प्रति नागरिकों का विश्वास बढ़ेगा और साक्षियों का सक्रिय सहयोग भी अभियोजन को प्राप्त होगा । यह विचारणीय प्रश्न है कि वर्तमान व्यवस्था में कोई क्यों न्यायालय में गवाही देगा । यह कहना भी उचित होगा कि साक्षियों को भी उनकी स्थिति के अनुसार उचित दर से पारिश्रमिक न्यायालय में आने का दिया जावे तथा अपराधी को दी जाने वाली सजायें व्यवहारिक हों ।

क्रमांक -9 ॥अ॥ व्यक्ति का पूर्व इतिहास :- सम्पन्न आर्थिक स्थिति का व्यक्ति है । संयुक्त परिवार का सदस्य है । प्रत्यक्ष रूप से अपराधिक इतिहास नहीं है ।

॥ब॥ वर्तमान अपराध के बारे में मत :- वह स्वीकार करता है

कि उसने स्वयं अपने विरोधी को नीचा दिखाने के लिये पीड़ित की मदद की थी । रिपोर्ट लिखाने का साहस उसके सहारे ही कर सका था । सामान्य घटनायें तो रोजमर्रा की बात हैं । इसने न्यायालय में पीड़ित का समर्थन नहीं किया है । उसका उद्देश्य अपने विरोधी को परेशान करना था जो पूरा हो गया है । अपराधी को पुलिस की धौंस सहनी पड़ी । पैसे देने पड़े और 5 वर्ष मुकद्दमा चला तथा साथ ही अपराधी ने उससे माफी माँगी । पुलिस को भ्रष्ट संस्था मानता है और उसके अनुसार पुलिस दोनों पक्षों से खाती है । न्यायालय के बारे में यह मानता है कि अगर पैसा हो तो सब कुछ हो सकताहै ।

¤स¤ तथ्य विश्लेषण :- सम्पूर्ण प्रक्रिया में पीड़ित की भूमिका एक मोहरे के रूप में रही है । यह पूरा विवाद मानो दो समकार्य व्यक्तियों के बीच का था । ऐसा लगता है कि न्याय की असफलता के कारण पुलिस के अवैधानिक कार्य ही एक मात्र अपराधियों को दण्ड के रूप में स्थापित हो गये हैं । अपराधी ने अपने मुकद्दमे के निबटारे के लिये पीड़ित की अपेक्षा विरोधी से क्षमा-याचना की है । यह स्पष्ट है कि हरिजनों के इस संरक्षण के नाम पर समकार्य व्यक्तियों के ही स्वार्थ सिद्ध हो रहे हैं । न्यायिक व्यवस्था की असफलता के कारण जनता का अपरोक्ष समर्थन ही पुलिस को मिल रहा है । यह समस्या हमारी स्थापित स्वार्थों के अनुरूप प्रत्येक व्यक्ति द्वारा मूल्यांकित की जाती है ।

क्रमांक-10 ¤अ¤ व्यक्ति का पूर्व इतिहास :- ग्राम समाज का सदस्य है । सम्पन्न आर्थिक स्थिति का है । ग्रामीण राजनीति में अच्छा प्रभाव है । प्रत्यक्ष अपराधिक इतिहास नहीं है ।

¤ब¤ वर्तमान अपराध के बारे में मत :- सरकार अनावश्यक

रूप से जाति व्यवस्था को बढ़ावा दे रही है और सरकार की नीति दोहरी है । हरिजनों के मुकद्दमों में अपराधी को गिरफ्तार नहीं किया जाता है और अदालतों में तो कुछ होता ही नहीं है । वह मानता है कि न्यायालयों की अपेक्षा पुलिस कार्यवाही का डर अधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है, अगर दण्ड ही देना है तो अन्य अपराधी की तरह मुल्जिम को जेल में क्यों नहीं रखा जाता है । उत्तरदाता यह भी मानता है कि सरकार हरिजनों को सिर चढ़ा रही है और वे इन अधिकारों का दुरुपयोग भी करते हैं । इन परिस्थितियों में अपनी जाति के लोगों का समर्थन करना स्वाभाविक है । पुलिस और कचहरी में कुछ नहीं होता है । पुलिस द्वारा झूठे चालान अदालत में पेश किये जाते हैं । चर्चा की अवधि में वह यह भी मानता है कि बड़े लोग अपने स्वार्थ के लिये हरिजनों से पूर्व रिपोर्ट लिखाते हैं ।

॥ख॥ <u>तथ्य विश्लेषण</u> :- अहस्तक्षेपीय अपराधों में अपराधी का गिरफ्तार न किया जाना आम नागरिक की नजर में संदेह पैदा करता है । ऐसे अपराध हरिजनों के अपराध माने जाते हैं । क्योंकि सवर्णों के विरुद्ध ऐसे अपराधों की विवेचना नहीं होती है । आम नागरिक के मन में न्याय व्यवस्था का पक्षपात नहीं है और चतुर लोग सरकार की इन नीतियों का दुरुपयोग अपने हित में करते हैं ।

पुलिस की कार्यवाही की श्रेष्ठता न्यायालय के ऊपर अनेकों अवैधानिक कारणों से स्थापित होती है । जाति के प्रति लगाव की भावना ग्रामीण क्षेत्रों में विद्यमान है और ज्यों-ज्यों सरकार हरिजनों को संरक्षण प्रदान कर रही है । इसके विपरीत सवर्णों का सामाजिक वातावरण तैयार हो रहा है और न्यायालय में भी शपथपूर्वक झूठ बोलकर साक्षी अपनी जाति का समर्थन करते हैं ।

वर्तमान अध्ययन के लिये पूर्व वर्णित एवं क्रमानुसार व्यक्तियों का समाजन्यायिक दृष्टि से तुलनात्मक अध्ययन तालिका संख्या : 37 : में प्रदर्शित किया गया है। इस तालिका का अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि अध्ययनक्षेत्रीय वादों के अपराधी उच्च जातीय व्यक्ति होते हैं। इसके सापेक्ष पीड़ितों के वर्ग में अधिकांश व्यक्ति पिछड़ी जातियों एवं निम्न आर्थिक स्तर के हैं।

=:=:=:=:=:=:=:=:=

अध्याय - ८

उपसंहार

१. समीक्षा
२. निरीक्षण
३. संस्तुति

1. समीक्षा

=====

वर्तमानशती के प्रारम्भ में विभिन्न समाज वैज्ञानिकों के मध्य शोध कार्यों के सन्दर्भ में प्रतिस्पर्द्धा बनी रही। इसका कारण यह था कि सामाजिक क्षेत्रों की विभिन्न जटिलताओं का अध्ययन किसी एक विषय का सीमा के अन्तर्गत न रहते हुये विस्तृत होता रहा। इसके फलस्वरूप समाजशास्त्रीय अवधारणाओं के रूप आवश्यकतानुसार परिवर्तित करके प्रस्तुत किये जाते रहे। इसशताब्दी में छटवें दशक में विभिन्न समाज विज्ञानों को सिद्धान्तवादी विचारक आलोचना की दृष्टि से देखते थे। इसका सीधा सा तात्पर्य विभिन्न सामाजिक मूल्यों की अवधारणाओं से इसकी अध्ययन पद्धतियों की विसंगति के कारण था। समाजशास्त्रीय शोध-कार्यों की सीमा निर्धारित करने के लिये उचित आयामों का निर्माण आवश्यक प्रतीत हुआ। इन परिस्थितियों के पूर्व प्रायः प्रथम से द्वितीय विश्वयुद्ध के बीच की अवधि में विकासशील देश शैक्षणिक गतिविधियों में उल्लेखनीय वृद्धि नहीं कर सके। इन विश्व युद्धों की विभीषिका के फलस्वरूप सामाजिक संस्थाएं एवं विशेष रूप से सामाजिक नियंत्रण कीगतिविधियां प्रभावित हुई। सामाजिक सन्दर्भ में मनुष्य के व्यक्तिगत मूल्यों में गिरावट हुई। इसका उपरोक्त रूप से लाभ तथा-कथित आर्थिक सम्पन्न वर्ग को ही प्राप्त हो पाया।

विश्व के विभिन्न देशों में मानव अधिकारों के प्रति संवेदन शीलता विकसित हुई जिसके फलस्वरूप सन् 1948 में संयुक्त राष्ट्र महा सभा ने सार्वभौमिक घोषणा पत्र प्रस्तुत किया। यह वस्तुतः वह समय था जब भारत वर्ष ने स्वतंन्त्रता अर्जित की। उपर्युक्त वर्णित सार्वजनिक घोषणा पत्र के आधार पर यह मान्यता प्रदत्त की गई कि व्यक्तियों को मौलिक अधिकारों से वंचित

नहीं रखना चाहिये । इस प्रक्रिया का स्पष्ट प्रभाव भारतीय संविधान निर्माताओं के मस्तिष्क पर प्रतीत होता है । जिसके कारण निर्मित भारतीय संविधान के अन्तर्गत समाज के सभी सदस्यों को समान अधिकार प्रदत्त किये गये । इसमें किसी प्रकार का भेद-भाव जाति, क्षेत्र, भाषा, लिंग या अन्य कारकों का नहीं था ।

भारतीय मानव समुदाय में सम्पूर्ण विकास के पश्चात इस समय जो सामाजिक व्यवस्था परिलक्षित होती है वह सक्षमता से प्रदर्शित करती है कि एक वर्ग विशेष द्वारा अल्प/कमजोर समुदाय का समाज आर्थिक शोषण होता रहा है। संविधान के प्रावधानों के लागू होने के पश्चात निम्न वर्ग के व्यक्तियों की नागरिकता में वृद्धि दृष्टिगोचर होती है । सामाजिक व्यवस्थाओं के नियंत्रण के लिये विभिन्न न्यायिक प्रक्रियाओं की भी स्थापना की गई है । यह विषय वस्तु विधि के समाजशास्त्र के अन्तंगत अध्ययन की जाती है । पूर्व वर्णित व्याख्याओं एवं विश्लेषण को प्रारम्भ करने की दिशा में यह आवश्यक रूप से सहयोगी हुआ है कि भारतीय न्यायिक प्रक्रिया सामाजिक पर्यावरण से घिरी होने के फलस्वरूप दोषमुक्त नहीं कही जा सकती है । इस आशय की पुर्नस्थापना वर्तमान शोध प्रबंध की परिकल्पना निर्मित करके की गई है । इस परिकल्पना के अन्तंगत विषय के उभयपक्षीय पहलुओं का निरूपण विधि के समाजशास्त्र को सरलीकृत करने की दिशा में किया गया ।

प्राचीन समय से विभिन्न समाज वैज्ञानिकों का ध्यानाकर्षण अपराध जैसी-सामाजिक समस्या के लिये अवश्य रहा है, फिरभी कोई शोध अध्ययन वर्तमान शोध प्रबन्ध के सन्दर्भ में सटीक नहीं कहा जा सकता है । यह सार्वभौमिक सत्य है कि स्थान एवं क्षेत्र के आधार पर

अपराध का वितरण परिवर्तित होता रहता है और अपराध जैसी प्रक्रिया के ऊपर भौगोलिक कारकों का समुचित प्रभाव पड़ता है । स्थानीय से लेकर अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रों तक औद्योगीकरण, शहरीकरण, जनसंख्या, सामाजिक विघटन, नैतिक शिक्षा का अभाव एवं धार्मिक कारकों के फलस्वरूप अपराध के स्वरूपों में परिवर्तन होता रहता है । यद्यपि यह सही है कि अमेरिका, इंग्लैण्ड एवं फ्रांस देशों में अपराधिक प्रतिशत अधिक है फिर भी भारतीय परिधि के अन्तर्गत शनैः शनैः अपराधिक प्रवृत्ति में वृद्धि शिक्षाविदों के लिये चिंता का विषय है ।

भारत वर्ष के उत्तर प्रदेश क्षेत्र के अन्तर्गत विभिन्न अपराधों के प्रतिशत में वृद्धि सरकारी अभिलेखों के माध्यम से स्पष्ट होती है । इसलिये इसका समाजशास्त्रीय अध्ययन आवश्यक एवं सामयिक है । इस अध्ययन के माध्यम से प्राप्त होने वाले तथ्यों के आधार पर समाज-न्यायिक प्रक्रिया के सन्दर्भ में उपयोगी सूचनायें संकलित करने का प्रयास किया गया है । अहस्तक्षेपीय अपराधों के कारण एवं न्यायिक प्रक्रिया के बारे में विश्लेषण करने से यह स्पष्ट होता है कि इन अपराधों का स्वभाव अपराधिक की अपेक्षा सामाजिक अधिक होता है, अतः इनका अध्ययन मात्र विधि विषय के अन्तर्गत सीमित न करते हुये समाजशास्त्रीयों के लिये आवश्यक है ।

वर्तमान शदी के समाजविज्ञानों के अनुसार प्रगतिशील क्षेत्रों में अपराध एक सामाजिक जटिलता समझा जाता है । इस सन्दर्भ में राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रों में महत्वपूर्ण सूचनायें उपलब्ध हैं । अपराधों का सीधा सम्बन्ध व्यक्तित्व में समाजीकरण की प्रक्रिया से है । इसलिये यह कहना तर्क संगत होगा कि अपराध समाज में ही जन्म लेते हैं । जब इस तथ्य का निरूपण उपर्युक्त शब्दों में हुआ है तो अपराध को

समाज की एक महत्वपूर्ण इकाई माना जाना चाहिये । भारतीय विकास के साथ सामाजिक मूल्यों, क्रियाकलापों संस्मृतियों एवं सामाजिक नियंत्रणों के सन्दर्भ में निश्चित रूप से विकास हुआ है । सामाजिक नियंत्रण समाज में सुरक्षा प्रदान करता है और समाज विशेष में रहने वाले व्यक्तियों के बीच, सामन्जस्य स्थापित करता है । सामाजिक नियन्त्रण, न्याय-व्यवस्था सामाजिक विकास की ही देन है । प्रागैतिहासिक युग में जब मनुष्य समुदायों में नहीं रहता था, तब न्याय-व्यवस्था की कोई आवश्यकता नहीं थी और मनुष्य भी आवश्यकताओं के अनुसार समुदायों का विकास हुआ और इसके नियंत्रण के लिये नीति निर्धारण की आवश्यकता हुई ।

मानवीय सभ्यता के इतिहास का अवलोकन करने से यह स्पष्ट होता है कि प्रत्येक युग में न्याय की गरिमा को सर्वोच्च स्थान दिया गया है । क्यों कि सामाजिक मूल्य बदलने से जो सामाजिक समस्यायें उत्पन्न होती हैं । उनका निराकरण न्याय-व्यवस्था द्वारा ही संभव है । सामाजिक मूल्य इस अर्थ में सामाजिक समस्यायें उत्पन्न करते हैं । आज भारतीय समाज की जो प्रमुख समस्यायें हैं, प्राचीन भारत में वह समस्यायें नहीं थी । भारतीय संविधान ने सभी नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक न्याय का अवसर की समानता देने की व्यवस्था की है, एवं इसी के अनुरूप कानून बनाये गये हैं । कानून का पालन सुनिश्चित करने वाले, भारतीय समुदाय के ही सदस्य हैं, तथा कानून का पालन भी समाज में ही होता है। अतः परम्परागत मूल्यों से इनका टकराव होना स्वाभाविक है । ऐसी स्थिति में यह अनुभव किया जा रहा है कि न्याय प्रक्रिया निष्क्रिय सिद्ध हो रही है जैसा कि खान । 1983 । के मतानुसार यह समय है जब सोचा जाना चाहिये कि कानून प्रभावहीन क्यों है तथा कानून का प्रवर्तन असमान क्यों है ? वर्तमान न्याय प्रक्रिया और प्रशासन को समझने से पूर्व यह आवश्यक है कि हम इसके अतीत पर दृष्टिपात करें ।

भगवती । 1984 । के अनुसार भारतीय अपराधिक न्याय प्रशासन के दो मौलिक सिद्धान्त है :- । 1। प्रत्येक व्यक्ति निर्दोष माना जाता है जब तक कि उसे दोषी सिद्ध नहीं कर दिया जाए और यह सिद्धान्त अपराध विधि शास्त्र के सम्पूर्ण ढाँचे में स्वर्णिम धागे की तरह रहता है ;एवं । 2। अपराधी को दोषी सिद्ध करने का भार अभियोजन पर है और अभियोजन को संदेह के परे दोष सिद्ध करना होता है । यह दोनों सिद्धांत भारतीय न्याय प्रशासन को ब्रिटिश परम्पराओं से विरासत में प्राप्त हुये हैं । भारतीय तथा विदेशी विचारकों का मत है कि विकासशील देशों में ब्रिटिश सिद्धान्तों के कारण कानून तथा व्यवस्था की स्थिति बिगड़ी है । वस्तुतः वर्तमान समय में इन दोनों सिद्धान्तों को पूर्ण रूप से भारतीय न्याय व्यवस्था ने स्वीकार किया है । सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों के अनेकों निर्णयों में इन सिद्धान्तों को दोहराया गया है । कल्याणकारी राज्य होने के कारण कानून एवं व्यवस्था को बनाये रखने के लिये अपराधी को दण्डित कराने का भार राज्य का है । भारतीय दण्ड प्रक्रिया संहिता के अनुसार पुलिस का कर्तव्य अपराध की विवेचना करके, अपराधी को न्यायालय के समक्ष विचारण हेतु भेजना तथा अपराधी के विरूद्ध सभी एकत्रित साक्ष्यों को पेश करना है । यदि अपराधी, आरोप स्वीकार नहीं करता है तब अभियोजन को अपने साक्षी परीक्षित करना होता है । इन साक्षियों से अपराधी को स्वयं या अपनी इच्छा के विधि-विशेषज्ञ ।वकील। के द्वारा जिरह करने का अधिकार होता है, तथा अपने बचाव में साक्ष्य देने का अधिकार होता है । इस प्रक्रिया में प्रत्यक्ष-दर्शी साक्षी तथा परिस्थिति जन्य साक्ष्य का विशेष महत्व भारतीय साक्ष्य अधिनियम में है । भारतीय अपराधिक न्याय प्रशासन में मौखिक साक्ष्य का सर्वाधिक प्रचलन है ।

हस्तक्षेपीय अपराधों में पुलिस अपराधी को गिरफ्तार करती है तथा साक्ष्य का संकलन करती है । इसके सापेक्ष अहस्तक्षेपीय अपराधों में पुलिस सक्षम

मजिस्ट्रेट की अनुमति के बिना अपराधी को गिरफ्तार नहीं कर सकती है । यदि सक्षम मजिस्ट्रेट विवेचना की अनुमति दे देते हैं तब विवेचना अधिकारी साक्ष्य एकत्र करके न्यायालय में आरोप पत्र भेजते हैं । असंज्ञेय अपराधों के अपराधी पुलिस के सम्पर्क में नाम मात्र को ही आते हैं । जब कि पीड़ित को निरन्तर पुलिस के सम्पर्क में आना होता है । ऐसे असंज्ञेय अपराधों जिनमें पीड़ित निम्न सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति का है तथा अपराधी उच्च सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक स्थिति का होता है, में स्वाभाविक रूप से साक्षी तथा शासकीय अधिकारियों का परोक्ष या अपरोक्ष समर्थन अपराधी को प्राप्त होता है । स्वभावतया असंज्ञेय अपराध अच्छी सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक स्थिति के व्यक्तियों द्वारा निम्न स्थिति के व्यक्तियों के विरुद्ध किये जाते हैं गम्भीर अपराधों की प्रकृति इन असंज्ञेय अपराधों से पूर्णतः भिन्न होती है । संज्ञेय अपराधों में जैसे - हत्या, डकैती, या लूट आदि के प्रति सम्पूर्ण सामाजिक वातावरण अपराधी का विरोधी हो जाता है । इन अपराधियों के विरोध में साक्ष्य देना भी सम्भव हो जाता है । असंज्ञेय अपराधों में अपराधी सम्पन्न तथा प्रभावशाली होता है, और वह उसी परिवेश में निवास करता है, जिसमें, उसके विरुद्ध साक्ष्य देने वाले रहते हैं ।

घोष (1980) ने कमजोर वर्गों की कठिनाइयों का वर्णन करते हुये कहा है कि निम्न स्तर के कर्मचारियों को वह उतनी रिश्वत नहीं दे सकते हैं, जितनी की अधिक प्रभावशाली व्यक्ति दे सकते हैं । इसीलिए निम्न स्तर के कर्मचारी अधिक धनी व्यक्तियों का पक्ष लेते हैं । इस बात को पूर्ण सत्य तो नहीं माना जा सकता है किन्तु इतना अवश्य है कि अपराधियों की अच्छी सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक स्थिति का प्रभाव निश्चित रूप से सरकारी कर्मचारियों पर पड़ता है । पीड़ित के समर्थन में सामान्यतः साक्षी साक्ष्य

देने को तैयार नहीं होते हैं"। क्योंकि अच्छी आर्थिक एवं राजनीतिक स्थिति के कारण इनके हित प्रभावशाली व्यक्तियों से जुड़े रहते है । थाने पर रिपोर्ट लिखाते समय पीड़ितों से साक्षियों के नाम पूछे जाते हैं, और साक्षियों से साक्ष्य दिलवाने का उत्तरदायित्व पूर्णतः पीड़ित का होता है । यदि पीड़ित साक्षियों को किसी तरह से अपने समर्थन में साक्ष्य दिलवाने में समर्थ हो गया तो विवेचनाधिकारी आरोप पत्र न्यायालय भेज देते हैं । विचारण की प्रक्रिया में अपराधी, पीड़ित की अपेक्षा अधिक अच्छी स्थिति में होता है । जमानती अपराध होने केकारण अपराधी को विचारण के दौरान जेल आने का कोई भय नहीं रहता है । गवाह की अशिक्षा का पूरा लाभ जिरह में उठाया जाता है । शब्दों को तोड़-मरोड़कर तकनीकी ताना-बना बुनकर अर्थ का अनर्थ निकाला जाता है । क्षेत्रीय भाषा के कारण पीठासीन अधिकारी गवाह की भाषा को अच्छी तरह नहीं समझ पाते है । अधिकांशतया गवाह की भाषा का अंग्रेजी अनुवाद बचाव पक्ष के वकील मजिस्ट्रेट को समझाते हैं । वकील की व्यापारिक साख उसके द्वारा वादों के जीतने पर निर्भर करती है । सभी उचित या अनुचित प्रयास मुकद्दमा जीतने के लिये किये जाते हैं । सैद्धांतिक रूप से भी अपराधिक न्याय प्रशासन में सदैव अपराधी के हितों का ध्यान रखा जाता है और अभियोजन की त्रुटि का लाभ अपराधी को दिया जाता है । इन सब स्थितियों में सफल होने के बाद भी न्यायाधीश सभी संभव संदेहों से परे अपराधीको दोषी पाते हैं, तब यह विचार किया जाता है कि क्या कम-से-कम संभव दण्ड दिया जाये । चेतावनी, भर्त्सना, प्रथम अपराधी परिवीक्षा अधिनियम के अन्तर्गत व्यक्तिगतबंध पत्र या बहुत कम धनराशि का जुर्माना आदि ऐसी सजायें हैं जो सम्पन्न अपराधियों को हरिजनों के विरुद्ध किये गये अहस्तक्षेपीय अपराधों में प्रायः दी जाती है ।

वर्तमान शोध प्रबन्ध के अध्ययन का मुख्य लक्ष्य यह देखना है कि

उ0प्र0 के बुन्देलखण्ड क्षेत्र के जनपद झांसी में पिछड़ी जातियों के संदर्भ में सामाजिक कारकों का न्याय प्रक्रिया से क्या सम्बन्ध है । भारतीय संविधान के प्राविधानों के अनुसार केन्द्र सरकार व उत्तर प्रदेश सरकार ने हरिजनों तथा कमजोर वर्ग के व्यक्तियों के उत्थान के लिये अनेकों वैधानिक व्यवस्थायें की हैं । हरिजनों के विरुद्ध अन्य वर्गों द्वारा किये गये अहस्तक्षेपीय अपराधों की विवेचना एवं अपराधी का अभियोजन भी राज्य की ओर से किया जाता है । इस विवेचना एवं अभियोजन में अनेकों कारक बीच में आते हैं, उदाहरणार्थ - साक्षी, दलाल, वकील आदि । कानूनों का सामाजिक प्रक्रियाओं से घनिष्ठ सम्बन्ध होता है । अपराधी की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक स्थिति भी वातावरण को प्रभावित करती है । अतः अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के साथ ही अन्य वर्गों के सामाजीकरण एवं जाति-व्यवस्था, शैक्षिक स्थिति, धार्मिक विश्वास, आर्थिक स्तर एवं राजनीतिक स्थिति का भी न्यायिक प्रक्रिया से सम्बन्ध आवश्यक रूप से समाजशास्त्रीय अध्ययन की विषय वस्तु है ।

वर्तमान शोध प्रबन्ध से उन सामाजिक कारकों पर प्रकाश पड़ेगा जो न्यायिक प्रक्रिया में बाधक हैं । कानूनों के उचित प्रवर्तन को सुनिश्चित करने में क्या बाधायें हैं और उनका क्या निराकरण किया जा सकता है ? कानूनों के प्रवर्तन से सम्बन्धित संस्थाओं की भूमिका को विश्लेषित करने से यह ज्ञात हो सकेगा कि इनमें क्या सुधार की आवश्यकता है ? वर्तमान शोध प्रबन्ध में एकत्रित तथ्यों की समीक्षा करने से भविष्य में किये जाने वाले नीति संशोधन में सहायता मिल सकेगी और यह कहना सुलभ होगा कि भारतवर्ष के संदर्भ में वर्तमान न्याय व्यवस्था कहाँ तक सफलता पूर्वक कार्य कर रही है और इसमें किस स्तर तक संशोधन की आवश्यकता है ।

2. निरीक्षण

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात हरिजनों को समानता का अधिकार मिलने से उनका सामाजिक स्तर ही नहीं अपितु व्यवसायिक स्तर भी उच्च जाति के व्यक्तियों की प्रतिस्पर्धा में आ गया है। अतः असंज्ञेय अपराध सामान्यतया उन व्यक्तियों द्वारा किये जाते हैं जो प्रतिष्ठित सामाजिक एवं आर्थिक स्तर प्राप्त किये हुये हैं। हरिजनों की इन परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुये उत्तर प्रदेश सरकार ने 27 जून 1970 को निर्णय लिया कि हरिजनों के विरुद्ध होने वाले असंज्ञेय अपराधों में भी राज्य की ओर से अपराधियों का विचारण किया जाये। असंज्ञेय अपराधों की विवेचना पुलिस सक्षम मजिस्ट्रेट से अनुमति प्राप्त हो जाने पर करती है। जगन्नाथन (1978) के अनुसार सामाजिक विधायन से तात्पर्य उन साधनों से है जो समाज के कमजोर वर्गों के उत्थान के लिये हैं। इस तरह का विधायन अनुचित शोषण रोकने तथा सभी को समान अवसर-विशेषकर जरूरत मन्द तथा समाज के असहाय व्यक्तियों के उत्थान करने की कोशिश करता है। यह दुहरा कार्य राज्य की गतिविधियों को बहुत बढ़ा देता है। राजनैतिक लोकतंत्र एवं औद्योगिक क्रान्ति इन गतिविधियों को बहुत बढ़ावा देती है। न्यायिक कानूनों का निर्माण हो जाने से उसकी सफलता नहीं आँकी जा सकती है। जब तक कि आम व्यक्ति कानून का पालन नहीं करते हैं, तब तक मात्र शासन की स्वीकृति से कोई सफलता नहीं मिलती है। इस समय कानून तकनीकी भाषा में पढ़ाये जाते हैं। जो कि अशिक्षित जनता के लिये उपयोगी नहीं है। परिणाम स्वरूप नागरिक को या तो शासन करने वाले अधिकारी के निर्णय को मानना होता है या स्वयं को अंतहीन मुकदमेबाजी के लिये समर्पित कर देना होता है। कानून की सफलता व्यक्तियों की स्वैच्छिक सहमति के आधार पर आँकी जा सकती है। यह स्वीकृति वहाँ अधिकतम होती है, जहाँ जनमत को विधायन में

... सही दिशा में कार्यरत रहने के लिये कानून एक सक्षम साधन है। विधायन के लिये ऐच्छिक सहमति की जिस प्रकार आवश्यकता होती है, उसी तरह प्रशासन को भी सक्रिय सहयोग की आवश्यकता होती है। इसकी संस्तुति कैटलिन ॥1978॥ द्वारा भी की गई है। रैकलेस ॥1967॥ के अनुसार अमेरिकी जनता अधिकतर अपराधियों का समर्थन करती है तथा पुलिस एवं अभियोजन का विरोध। इससे अव्यवस्था बढ़ती है यदि सरकार को ही अपराधों में भूमिका निभानी है तो जनता अपनी आजादी तथा अधिकार खो देगी। अमेरिका तथा इंग्लैण्ड दोनों देशों में पुलिस को जनता का इतना सहयोग नहीं मिल रहा है जितना कि अपेक्षित है। भारत वर्ष में हरिजनों के उत्थान का कार्य स्वतंत्रता से पूर्व कभी भी राजकीय स्तर से नहीं किया गया। स्वतंत्रता के बाद यह कार्य समग्र रूप से राजकीय स्तर से हो रहा है तथा इसमें स्वैच्छिक संस्थाओं का सक्रिय सहयोग नहीं मिल रहा है। यही कारण है कि संरक्षण तथा अनेकों कानून के बावजूद भी हरिजन आशातीत उन्नति नहीं कर सके हैं।

पोल ॥1980॥ का मत है कि कानून के समक्ष समानता की गारन्टी संविधान ने दी है, किन्तु कमजोर वर्गों द्वारा न्यायालय की शरण लेने में गरीबी आड़े आती है। यह उनके लिये न्याय से अस्वीकृति है। हरिजनों का बहुसंख्यक वर्ग ग्रामीण भारत में रहता है। खेती तथा मजदूरी इनका सामान्य व्यवसाय है। अशिक्षा तथा गरीबी इनकी सबसे जटिल समस्या है।

सामुदायिक विकास में पंचायत प्रणाली जाति की शक्ति या शक्ति के लिये अन्तर्जातीय संघर्षों की तीव्रता को कम करने में सफल नहीं है। इसके विपरीत इन संस्थाओं ने ग्रामीण संघर्ष को बढ़ावा दिया है। पंचायती राज अभिजात्य ढाँचा बदलने में सफल नहीं हुआ है। शक्ति

का आधार आज की राजनैतिक, आर्थिक श्रेष्ठता बनी हुई है । भारतीय समाज के आदर्शों एवं व्यवहारों में अन्तर है । व्यक्ति जो उपदेश दूसरों को देना है उनका व्यवहार में स्वयं भी पालन नहीं करते हैं।इसी से समस्यायें उत्पन्न होती हैं । चिताम्बर (1973) के अनुसार सामाजिक समस्यायें सामाजिक मूल्यों से सम्बन्धित है । फिशर (1974) का मत है कि सामाजिक समस्या, सामाजिक मूल्यों तथा सामाजिक व्यवहार के मध्य असमानता है । वर्तमान भारतीय न्याय व्यवस्था में अपराधियों को सभी प्रकार की सुविधायें उपलब्ध कराई जा रही हैं तथा समाज का चिंतन भी इसी ओर है । इसके विपरीत पीड़ितों को कानून में न तो उचित संरक्षण है और दुर्भाग्य से समाज का चिंतन भी इस ओर नहीं है । राज्य संरक्षण के नाम पर अपराधियों का अभियोजन मात्र ही करता है । पीड़ित की कोई क्षतिपूर्ति राज्य द्वारा नहीं की जाती है । यदि कोई मानसिक तृप्ति पीड़ितको उपलब्ध भी है तो वह मात्र अपराधी को सजा किन्तु इससे क्या पीड़ित की क्षतिपूर्ति हो सकती है । वेनूगोपाल (1983) का अत्यधिक सक्षम मत इस संदर्भ में इस प्रकार है कि अपराध की रोकथाम के लिये योजना, अपराधियों के सुधार तथा पुर्नवास पर अधिकतम ध्यान नहीं दिया जा रहा है । परिणाम स्वरूप दण्ड की अवधारणा और कठोरता का अवमूल्यन हो गया है । उसका आशय यह नहीं कि दण्ड प्राचीन काल की तरह निर्दयी हो और अपराध न्याय प्रशासन में प्रभाव कम हो गया है । विशेषकर जनसंख्या के एक विशेष भाग के संदर्भ में जिसकी असामाजिक प्रवृत्तियां सीमा पर है और दण्ड के भय के कारण नियंत्रित हैं ।

भारतवर्ष में ब्रिटिश शासन के पूर्व कानून में एक रूपता नहीं थी, विभिन्न राज्यों के अलग-अलग कानून व्यवस्थायें थीं । वैदिक काल, उत्तर वैदिक काल, हिन्दू युग मुस्लिम काल, प्रत्येक युग में पीड़ित की क्षतिपूर्ति

का सिद्धांत न्याय प्रशासन में प्रतिष्ठित रहा है । ब्रिटिश न्याय के सिद्धांत प्रभावी होने से अपराधिक विधि से पीड़ित के अधिकार प्राय: समाप्त हो गए हैं । स्वतंत्रता के पश्चात भारतवर्ष में अंग्रेजी न्याय पद्धति को स्वीकार किया गया है । नागरिकों की सुरक्षा का उत्तर-दायित्व राज्य का है । अत: किसी नागरिक के विरुद्ध अपराध करने वाले अपराधी का अभियोजन प्रभावी प्रक्रिया के अनुसार, राज्य की ओर से किया जाता है और पीड़ित की अपेक्षा इस प्रक्रिया में होती है ।

हरिजनों की कमजोर स्थिति को ध्यान में रखते हुये उत्तर प्रदेश सरकार ने, इनके विरुद्ध होने वाले अहस्तक्षेपीय अपराधों में भी वाद की विवेचना एवं अभियोजन, राज्य की ओर से कराये जाने का निर्णय लिया है । हरिजनों के विरुद्ध होने वाले अहस्तक्षेपीय वादों के अभियोजन में अति-अल्प प्रतिशत अपराधी ही दण्डित होते हैं ।

बहुसंख्यक अपराधी इस अभियोजन से भयभीत नहीं हैं । इसके विपरीत पीड़ित स्वयं इस प्रक्रिया से मुक्ति पाने का उत्सुक रहता है । न्याय के उद्देश्यों के विपरीत इस व्यवहारिक रूप को देखकर वर्तमान शोध समस्या का समाजशास्त्रीय अध्ययन किया गया है । इस दिशा के विषयक पत्र-पत्रिकाओं एवं साहित्य में न्यायिक व्यवस्था के गुण दोषों पर आंशिक चिन्तन ही उपलब्ध हुआ है । ऐतिहासिक ग्रंथों का अध्ययन करने से प्राचीन कालीन न्याय व्यवस्था की जानकारी प्राप्त हुई । किन्तु अहस्तक्षेपीय अपराधों का समाजशास्त्रीय अध्ययन सम्बन्धित साहित्य में उपलब्ध नहीं हो सका है ।

वर्तमान शोध कार्य में पुलिस तथा न्यायालयीन कार्यालयों से प्राप्त जानकारी के आधार पर भा.द.वि. 1860 में 200 ऐसे अहस्तक्षेपीय वादों

जिनमें हरिजन पीड़ित एवं सवर्ण अपराधी था, का समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से अध्ययन किया गया/इन 200 वादों से सम्बन्धित 400 अपराधी, 200 पीड़ित एवं 200 साक्षियों से सूचनायें साक्षात्कार अनुसूची अवलोकन एवं कार्यालयीन अभिलेखों के आधार पर प्राप्त की गई है। इन व्यक्तियों की जाति, शिक्षा, आयु, आर्थिक तथा राजनैतिक स्तरों व न्यायिक प्रक्रिया पर प्रभाव मूल्यांकित किया गया। वर्तमान अध्ययन प्राप्त परिणामों को उचित रूप से वर्गीकृत किया गया एवं तुलनात्मक विश्लेषण कियागया है। अपराधों के कारणों से लेकर न्यायालयीन विचारण तक की सम्पूर्ण प्रक्रिया को अध्ययन की विषयवस्तु बनाया गया है।

वर्तमान अध्ययन के अन्तर्गत जनपद झांसी में अधिकतर असंज्ञेयीय वाद कृषि कार्यों से सम्बन्धित जातियों में पाये गये हैं। ऐसी जातियों के व्यक्ति जो कृषि पर कम निर्भर है, उनका सम्बन्ध असंज्ञेयीय वादों मेंकम पाया गया है। कृषक जातियों के अभियोगी भी अन्य जातियोंकी अपेक्षा अधिक पाये गये हैं। धोबी जातिव के व्यक्ति व्यवसायिक हितों के कारण, उच्च वर्ग के व्यक्तियों का सहयोग करते हुए अधिकतम पाये गए हैं। इस अध्ययन में व्यवसायिक जातियों के व्यक्ति साक्षी केरूप में कम प्राप्त हुए हैं।

वर्तमान अध्ययन से स्पष्ट है कि न्यायालय में अपराधियों को दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति में भी जाति भावना कम पाई गई है। प्रायः हरिजन साक्षियों ने अन्य जातियों के साक्षियों की अपेक्षा, उच्च जाति के अपराधियों को दण्डित कराने हेतु, अधिक साक्ष्य दिया है। सेवक जातियों के अपराधियों के विरोध में सवर्ण साक्षियों में प्रवृत्ति नहीं पाई गई है। उपलब्ध सम्पूर्ण तथ्यों से स्पष्ट है कि व्यवसायिक जाति के

साक्षी, साक्ष्य देने हेतु न्यायालय में नहीं आये हैं । इसके फलस्वरूप अहस्तक्षेपीय वादों के प्रस्तुत अध्ययन में प्राप्त तथ्य पुष्टि करते हैं कि सामाजिक कारकों का प्रतिनिधि यदि जाति व्यवस्था को मान लिया जाये तो न्यायिक प्रक्रिया अवश्य प्रभावित प्रतीत होती है ।

वर्तमान अध्ययन के अहस्तक्षेपीय अपराधों में पीड़ित एवं साक्षियों का अधिकतम प्रतिशत अशिक्षित है । अपराधी अपेक्षाकृत अधिक शिक्षित पाये गये हैं । उपलब्ध तथ्यों से स्पष्ट होता है कि हाई स्कूल में शिक्षित अपराधियों में शिक्षा निर्देशन की कमी के कारण इस शैक्षणिक स्तर में आपराधिकता मिडिल व इण्टर की अपेक्षा अधिक पाई गई है । उच्च शैक्षणिक स्तर के व्यक्तियों की अहस्तक्षेपीय अपराधों से सम्बध्यता नहीं पाई गई है । वर्तमान अध्ययन में अशिक्षित पीड़ितों की अपेक्षा शिक्षित पीड़ितों में दण्ड दिलाने की अधिक प्रवृत्ति पाई गई है । प्राप्त तथ्यों से स्पष्ट है कि समझौता करने की प्रवृत्ति अशिक्षित पीड़ितों में अधिक विद्यमान है । अशिक्षित साक्षियों में भी शिक्षित साक्षियों की अपेक्षा दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति अधिक पाई गई है, किन्तु अशिक्षित साक्षियों का साक्ष्य स्वयं में विरोधाभाषी अधिक रहा है । इन परिणामों से अहस्तक्षेपीय वादों की न्यायिक प्रक्रिया प्रभावित होती है ।

वर्तमान शोध कार्य में प्राप्त तथ्यों से स्पष्ट है कि प्रत्येक आयु समूह से पीड़ितों के विरोध में अधिकतर अपराधी वर्ष 15 से 35 आयु समूह के हैं । अधिक आयु के पीड़ितों के विरुद्ध अपराधी भी अधिक आयु के ही पाये गये हैं । प्रायः सवर्ण जातियों के व्यक्ति

अधिक आयु में स्वयं कृषि का कार्य न करके अपने पुत्रों अथवा सेवकों से यह कार्य करवाते हैं । पारिवारिक एवं सामाजिक उत्तरदायित्वों की आयु में अपराधियों का प्रतिशत बहुत कम पाया गया है । वर्तमान अध्ययन में बालक पीड़ित भी जनपद झांसी में पाएँ गये है जो इनकी गरीबी का द्योतक है । वर्ष 16 से 20 आयु समूह के पीड़ित कम पाये गये है । इसका कारण यह है कि इस आयु समूह में जागृति तथा शारीरिक क्षमता है । वर्ष 20 से 40 की आयु के व्यक्तियों का ही अधिकतर प्रतिशत न्यायालयों से सम्बद्ध रहा है । बुजुर्ग व्यक्तियों का साक्षी के रूप में प्रतिशत पीड़ित एवं अपराधियों की अपेक्षा अधिक पाया गया है ।

वर्तमान शोध कार्य में प्राप्त तथ्यों के निरूपण से स्पष्ट होता है कि 15 से 25 आयु समूह के पीड़ितों में, अपने विरोधी अपराधी को दण्ड दिलाने की इच्छा अधिक पाई गई है । जैसे 2 आयु बढ़ती गई है पीड़ितों में, अपराधी को दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति में कमी होती गई है । व्यवसायिक एवं पारिवारिक स्थायित्व प्राप्त किए हुऐ पीड़ितों में भी दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति कम पाई गई है । इस अध्ययन से स्पष्ट है कि अधिकांश आयु समूहों के पीड़ितों में समझौता करने की प्रवृत्ति अधिक पाई गई है । किशोर एवं बुजुर्ग साक्षियों में, अपराधियों को दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति अपेक्षाकृत अधिक पाई गई है । वर्ष 36 से 45 आयु समूह के साक्षियों में दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति बहुत कम पाई गई है । इससे स्पष्ट होता है कि ऐसे साक्षी जिन पर पारिवारिक या अन्य उत्तरदायित्व अधिक है, अपराधियों के विरुद्ध साक्ष्य नहीं देते है । सामूहिक उत्पीड़न के अपराधियों से पीड़ितों में अधिकांशतया समझौता किया है । प्राप्त तथ्य स्पष्ट करते है कि कम आयु के अपराधियों को दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति अधिक आयु के पीड़ितों में कम पाई गई है ।

वर्तमान शोध विषय के अन्तर्गतअधिकांश पीड़ित, अपराधी एवं साक्षी कृषि व्यवसायी हैं। अपराधियों की तुलना में पीड़ित तथा साक्षी, मजदूर व्यवसायी पाये गए हैं। हड्डी का कार्य, सिलाई, कारीगरी एवं ठेकेदारी व्यवसाय करने वाले व्यक्तियों का अल्प प्रतिशत साक्षी के रूप में उपलब्ध अवश्य हुआ है किन्तु, इन व्यवसायों के व्यक्ति पीड़ित व अपराधी नहीं पाये गये हैं। उससे स्पष्ट होता है कि अहस्तक्षेपीय वाद परम्परागत व्यवसाय के व्यक्तियों के बीच होते हैं। इस अध्ययन का सूक्ष्म विश्लेषण प्राप्त करने के लिये अपराधी एवं पीड़ित के व्यवसायों के सापेक्ष दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति का अध्ययन किया गया है कृषक अपराधी के वाद में अधिकांश तथा पीड़ित कृषक तथा मजदूर पाये गए हैं। अध्ययन में दुकानदारी वाले पीड़ित बहुत कम प्रतिशत में पाये गये हैं। और इन्होंने शतप्रतिशत राजीनामें दिये हैं। मजदूर पीड़ितों में कृषक अपराधियों को कृषक पीड़ितों की अपेक्षा, दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति अधिक पाई गई है। समान व्यवसाय के अपराधियों एवं पीड़ितों में सामान्यतया समझौता की प्रवृत्ति पाई गई है। कृषक अपराधी केअहस्तक्षेपीय वाद में, कृषक साक्षी अधिकतम उपलब्ध हुए हैं। इन अपराधों में कृषक एवं मजदूर साक्षी अपराधी का समर्थन करते हैं। इस जनपद के जो वर्तमान अध्ययन में प्राप्त हुय है सम्पन्न कृषक हैं। अतः कृषक एवं मजदूर दोनों ही इनके पक्ष धर हैं। अपराधी एवं पीड़ित जहां दोनों कृषि व्यवसायी हैं ऐसे वादों में साक्षियों की प्रवृत्ति अपराधी के दण्ड दिलाने की अधिक पाई गई है। तुलनात्मक रूप से पीड़ित के समर्थन की प्रवृत्ति कृषक साक्षी, मजदूर साक्षी एवं व्यापारी साक्षियों के क्रमशः बढ़ती हुई पाई गई है। इन अहस्तक्षेपीय वादों में जिनमें अपराधी कृषक एवं पीड़ित मजदूर रहा है, मजदूर साक्षियों में शत प्रतिशत अपराधियों को दण्ड दिलाने की प्रवृत्ति वर्तमान अध्ययन में पाई गई है।

पीड़ित दुकानदार में कृषक अपराधी से समझौता की पूर्ण प्रवृत्ति पाई गई है। नौकरी वाले पीड़ितों के प्रति साक्षियों में पूरी सहानुभूति

पाई गई है । नौकरी वाले पीड़ितों का प्रतिशत अहस्तक्षेपीय वादों में अत्य अल्पा पाया गया है । मजदूर अपराधी के अधिकांश अहस्तक्षेपीय विवाद मजदूर या घरेलू काम करने वाले पीड़ितों से पाये गए हैं । कृषक एवं व्यवसायी पीड़ित, मजदूर अपराधी से समझौता करने की प्रवृत्ति रखते हैं । मजदूर अपराधी को मजदूर तथा घरेलू काम करने वाले पीड़ित दण्ड दिलाने या न दिलाने की समान प्रवृत्तियाँ वर्तमान अध्ययन में उपलब्ध हुयी हैं ।

मजदूर पीड़ित एवं मजदूर अपराधी के अहस्तक्षेपीय वादों में सभी साक्षियों ने पीड़ित का समर्थन किया है । ऐसे अहस्तक्षेपीय जिनमें अपराधी मजदूर है वर्तमान अध्ययन में बहुत कम पाये गये हैं और इन वादों में भी अधिकांश में समझौते हुए हैं । इससे स्पष्ट होता है कि उच्च जाति का अपराधी, चाहे किसी आर्थिक स्तर का हो, हरिजनों के प्रबल विरोधी का शिकार नहीं हुआ है । दुकानदार अपराधियों के सभी वादों में समझौते हुए है, जो इस वर्ग के व्यवसायिक चातुर्य को स्पष्ट करता है । विद्यार्थियों के विवाद कृषक तथा विद्यार्थियों से पाये गए है और इनमें अधिकांश में समझौते की प्रवृत्ति पाई गई है ।

अपराधी, पीड़ित एवं साक्षियों का आयु एवं व्यवसायों पर आधारित पारस्परिक अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि 56 वर्ष से अधिक की आयु के हरिजन अन्य वर्गों की अपेक्षा अधिक घरेलू कार्यों में संलग्न पाये जाते हैं । सभी आयु वर्गों में पीड़ित हरिजन मजदूरों का प्रतिशत साक्षी व अपराधियों की अपेक्षा अधिक पाया गया है । इससे स्पष्ट है कि जनपद झांसी में हरिजन वर्ग आर्थिक रूप से अन्य वर्गों की अपेक्षा बहुत कमजोर है । इन संबंधित कारकों के प्रभाव में अहस्तक्षेपीय वादों की प्रक्रिया का प्रभावित होनाअपेक्षित है ।

वर्तमान अध्ययन में पीड़ितों की अपेक्षा, अपराधियों तथा साक्षियों में स्थानीय राजनीति (गुटबंदी) से सम्बध्यता अधिक पाई गई है । के अन्य निम्न व्यवसाय करने वाले पीड़ितों के स्थानीय राजनीति से सम्बध्यता कम पाई गई है । हरिजन अपराधियों में शत प्रतिशत सम्बध्यता ग्रामीण दल बंदी से पाई गई है । सामान्यतया साक्षी दलबंदी से मुक्त नहीं पाये गऐं हैं और इनमें, अपराधियों से भी अधिक ग्रामीण गुटबंदी से सम्बध्यता पाई गई है । सेवक जातियाँ, नाई, लुहार, बढ़ई एवं कुम्हार आदि में ग्रामीण गुटबंदी से सम्बध्यता कम पाई गई है ।

वर्तमान अध्ययन में प्राप्त तथ्यों से स्पष्ट है कि शिक्षित व्यक्तियों में स्थानीय राजनीति से सम्बध्यता, अशिक्षितों की अपेक्षा अधिक पाई गई है । अशिक्षित तथा अल्प शिक्षित पीड़ितों में, इसी शैक्षिणिक स्तर के अपराधी तथा साक्षियों की अपेक्षा दलबन्दी से सम्बद्धता कम पाई गयी है । वर्ष 15 से 25 एवं वर्ष 46 से 55 आयुसमूह के पीड़ितों में अन्य आयु के पीड़ितों की अपेक्षा ग्रामीण गुटबन्दी से सम्बद्धता अधिक पाई गई है । सामाजिक उत्तरदायित्वों की आयु में गुटबंन्दी से सम्बद्धता सभी वर्गों में कम पाई गई है । इसका कारण यह है कि व्यक्ति पारिवारिक कार्यों में अधिक व्यस्त हो जाता है । प्रायः व्यवसायिक व्यस्तता, दलबंदी से दूर तथा कम समय लेने वाले व्यवसाय, दलबंन्दी में संलग्नता के कारण होते हैं । अपराधोंकों का क्षेत्र के आधार पर वर्गीकरण करने से यह निष्कर्ष निकला है कि अहस्तक्षेपीय अपराध अधिकतम ग्रामीण क्षेत्रों में होते हैं तथा ग्रामीण क्षेत्रों में घटित होने वाले अहस्तक्षेपीय अपराध अधिकतर प्रातः, दोपहर एवं सायंकाल घटित हुए है इससे निष्कर्ष प्राप्त होता है कि जनपद झाँसी में कृषि कार्य के प्रारम्भ, समाप्ति एवं आराम के समय में ही अधिकांश अहस्तक्षेपीय विवाद होते है ।

वर्तमान शोध कार्य में प्राप्त पीड़ितों में प्रतिशोध की भावना कम पाई गई है । अधिकांश पीड़ितों में यह भावना पाई गई है कि उन्हें प्रतिशोध

से कुछ प्राप्त नहीं होगा । ग्रामीण क्षेत्रों में यह भावना विद्यमान है कि अपराधी को भगवान दण्ड देगा । यह मनोवैज्ञानिक भी न्यायिक प्रक्रिया को प्रभावित करती है । ग्रामीण क्षेत्रों में असमाजक्षेत्रीय अपराध एक सामान्य सी प्रक्रिया है । प्रायः उन घटनाओं की प्र. सू. प्रथम सूचना रिपोर्ट अंकित की जाती है जिनमें अपराधी का कोई विरोधी पीड़ित को प्रोत्साहित करता है । सामान्यतया सभी अपराधी अपने आप को निर्दोष मानते हैं । प्रायः सभी साक्षी अपने हितों का ध्यान रखते हुये साक्ष्य देते हैं । न्यायालयों में बनावटी साक्ष्य देना प्रतिष्ठित धारणा बन गई है । भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों मान्यतायें समाज में समान रूप से विद्यमान हैं । असमाजक्षेत्रीय वादों की कानूनी प्रक्रिया में पीड़ित अपराधी की अपेक्षा अधिक परेशान होता है । पीड़ित द्वारा इन परेशानियों से मुक्ति पाने की चेष्टा का लाभ अभियुक्त को मिल जाता है ।

प्रायः सभी ग्रामों में कुछ कानूनी प्रक्रिया के दलाल होते है जो किसी भी प्रकार से अपने पक्षकार को हित वर्धन करने की कोशिश करते हैं/इन व्यक्तियों को ग्रामीण क्षेत्रों में प्रतिष्ठा प्राप्त है और इनका सहयोग सभी व्यक्ति लेते हैं । यह व्यक्ति अधिकतम शोषण ग्रामीण व्यक्तियों का करते है ग्रामीण दल बंदी तथा आर्थिक प्रतिव्दन्दिता मूल रूप से असमाजक्षेत्रीय अपराधों केकारण है । समझौता का बहुत कम प्रतिशत पीड़ित की स्वेच्छा से होता है । अधिकांश वादों में अनेकों कारणों से पीड़ित समझौता करने को बाध्य हो जाता है ।

3. संस्तुति
=====

वर्तमान शोध कार्य की पृष्ठभूमि में, यह आवश्यक होगा कि निम्न कारकों को समाज एवं न्याय प्रशासन में उचित प्राथमिकता दी जाये

1. शिक्षा, अपराध नियन्त्रण एवं सामाजिक जागृति का महत्वपूर्ण साधन है । अतः समाज के सभी वर्गों में शिक्षा प्रसार की आवश्यकता है । प्रौढ़ पाठशालाऐं इस ओर उपयोगी हो सकती हैं ।

2. हाई स्कूल स्तर पर उचित निर्देशन की आवश्यकता होती है । अतः प्रत्येक हाईस्कूल में नैतिक शिक्षा तथा रोजगारोन्मुख शिक्षा दी जानी चाहिये । इस आयु के बालकों की ऊर्जा का उपयोग रचनात्मक कार्यों में किये जाने की ओर अधिक प्रयासों की आवश्यकता है । खेल-कूद को बढ़ावा दिये जाने की आवश्यकता है ।

3. अनुपयोगी कृषि जोतों को, उपयोगी बनाना राज्य का प्रमुख कार्य हो । पथरीली और अनुपयोगी जमीन को, व्यक्तिगत स्तर से उपयोगी बना सकना सम्भव नहीं होता है । अतः राज्य एक योजनाबद्ध कार्यक्रमों के अन्तर्गत वैज्ञानिक उपकरणों द्वारा जमीन के समतलीकरण की व्यवस्था निश्चित करें । राजकीय सुविधाओं के विस्तार के साथ ही यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि राजकीय योजनाओं का उचित रूप से पालन हो ।

4. कुटीर उद्योगों के विकास की आवश्यकता है । जिससे व्यक्ति अधिकतम व्यस्त हो और आर्थिक-स्तर में भी वृद्धि हो सके ।

5. निःशुल्क कानूनी सलाह का विस्तार गाँवों तक होना चाहिये राज्य की ओर से हरिजनों के हित किये जा रहे है । सरकारी प्रयासों की जानकारी ग्रामीणों को दी जानी चाहिये । इस कार्य हेतु ग्रामीण शिक्षित व्यक्तियों का सहयोग उपयोगी हो सकता है ।

6. समाज के गिरते हुये नैतिक मूल्यों का स्तर सुधारने के लिये, स्वयंसेवी सांस्कृतिक संस्थाओं की सेवायें उपयोगी हो सकती है । विद्यालयों में नैतिक शिक्षा के साथ ही, चरित्रवान छात्रों को प्रोत्साहन देते हुये व्यवस्था की जानी चाहिये एवं पाठ्यक्रम में चारित्रिक विशेषताओं को उभारने वाली विषय सामग्री पढ़ाई जानी चाहिये ।

7. पुलिस की कार्य प्रणाली में परिवर्तन की आवश्यकता है। नैतिक तथा चारित्रिक पाठ्यक्रम को पुलिस प्रशिक्षण में सम्मिलित किया जाना चाहिये। पुलिस कर्मियों को इस बात का विश्वास होना चाहिये कि उनके विरुद्ध होने वाली शिकायतों में भी उनके साथ न्याय होगा।

8. असंज्ञेय-क्षेत्रीय वादों में पुलिस को विवेचना एवं बिना अनुमति गिरफ्तार करने का अधिकार होना चाहिये।

9. अपराधिक न्याय प्रशासन में पीड़ित की क्षति पूर्ति का प्राविधान होना चाहिये। अपराध का विचारण गहराई से होना चाहिये। यदि झूठ वाद पाया जाता है तो सम्बन्धित पक्षकार को दण्ड दिये जाने की व्यवस्था होनी चाहिये। अपराधी के अधिकारों की तरह ही पीड़ित के अधिकारों को भी मान्यता प्राप्त होनी चाहिये। यदि पीड़ित को क्षति हुइ है तब अपराधी के विरुद्ध सन्देह में दोष सिद्ध न होना, प्रशासनिक अक्षमता मानी जाना चाहिये तथा पीड़ित को क्षति पूर्ति राजकोष से होनी चाहिये।

10. पीड़ित एवं साक्षियों को न्यायालयों या थाने कम से कम सम्भव अवसरों पर ही बुलाया जाना चाहिये एवं विवेचना के लिये बुलाये जाने पर व्यक्तियों को आर्थिक स्तर के आधार पर दैनिक भत्ता देय होना चाहिये।

11. समझौता यदि स्वेच्छा से किया जाता है तब यह न्याय की सर्वोत्तम अवस्था है किन्तु पीड़ित की स्वेच्छा का कुछ मापदण्ड भी निश्चित किया जाना चाहिये। विधि के प्राविधान पीड़ित द्वारा समझौता की शर्तों पर प्रकाश नहीं डालते हैं। पीड़ितों को राजीनामा करने का अधिकार वर्तमान की अपेक्षा और विस्तृत होना चाहिये और

धारा 320 दण्ड प्रक्रिया संहिता में यह प्राविधान जोड़ा जाना चाहिए कि पीड़ित व्दारा उचित क्षतिपूर्ति की मांग, समझौता के रूप में मांगने को अवैध नहीं माना जावेगा ।

12. न्यायालयों में पीड़ित व साक्षियों को दोपहर के पूर्व या पश्चात का समय आहूत पत्र [सम्मन] में दिया जाना चाहिये ।

13. पीड़ितों व साक्षियों का न्यायालय में बैठने की सम्मानजनक परिस्थितियों का निर्माण होना चाहिये ।

14. समन निर्गत करने एवं पक्षकार को उसकी सूचना सुनिश्चित करने का दायित्व न्यायालय का है । इसका अनुपालन गम्भीरतापूर्वक होना चाहिये । ऐसा भी प्राविधान होना चाहिये कि सम्मन पंजीकृत डाक व्दारा भेजे जायें । सम्मन की भाषा छोटी तथा समझने योग्य होनी चाहिये । पीड़ितों एवं साक्षियों के विरूद्ध गिरफ्तारी अधिपत्र सामान्यतया निर्गत नहीं किये जाने चाहिये ।

15. पीड़ित एवं साक्षियों की सुरक्षा-शारीरिक, आर्थिक, पारिवारिक एवं सामाजिक सुनिश्चित करने का दायित्व राज्य व्दारा स्पष्ट रूप से निर्धारित होना सुनिश्चित होना चाहिये ।

16. विवेचना में, विवेचनाधिकारी का यह कर्तव्य है कि वह सही तथ्यों को संकलित करके अपने मत के साथ न्यायालय के समक्ष रखे और लोक अभियोजक पूर्ण निष्ठा के साथ उसका अभियोजन करें । इस परम्परा के विकास से आम नागरिकों में पुलिस की विश्वसनीयता बढ़ेगी तथा अभियोजन में सफलता प्राप्त होगी ।

17. विवेचना एवं कानून व्यवस्था के पृथक विभाग होने चाहिये । जिससे कानून एवं व्यवस्था के व्यक्ति विवेचना को गम्भीरता से लें ।

18. विवेचना के लिये कुशल तथा समाजमनोविज्ञान में प्रशिक्षित ऐसे अधिकारी हों जो गुप्त सूचनायें प्राप्त कर सकें।

19. फौजदारी वाद के विचारण में अनिवार्य रूप से पीड़ित को क्षतिपूर्ति का भी निर्धारण किया जाना चाहिये तथा यदि अपराधी को विमुक्त किया जाता है तो उत्तरदायित्व का निर्धारण भी किया जाना चाहिये।

20. कानून की सामान्य जानकारी प्रत्येक नागरिक को कराई जानी चाहिये, इसके लिये सामान्य ज्ञान देने के रूप में कक्षा 8 से यह विषय पढ़ाया जाना चाहिये। हिन्दी एवं क्षेत्रीय भाषाओं में सरलीकृत रूप से पुस्तके उपलब्ध कराई जानी चाहिये।

21. पुलिस का नैतिक स्तर सुधारने के साथ ही पुलिस एवं अभियोजन में आम जनता का विश्वास पैदा करने के लिये कानून में विवेचनाधिकारी के साक्ष्य को सन्देह से परे देखा जाना चाहिये। विवेचनाअधिकारी के किसी निष्कर्ष पर पहुंचने के कारणों के आधार पर निर्णय दिये जाने चाहिये। यदि स्वतंत्र एवं जन साक्ष्य उपलब्ध नहीं हैं तो परिस्थिति जन्य साक्ष्य तथा विवेचनाधिकारी के साक्ष्य पर विश्वास किया जाना चाहिये।

22. सामान्य स्वभाव के वादों का अभियोजन नहीं किया जाना चाहिये।

वर्तमान शोध कार्य "सामाजिक व्यवस्था का न्यायिक प्रक्रिया पर प्रभाव : अहस्तक्षेपीय अपराधों के सन्दर्भ में तुलनात्मक अध्ययन ; समाज वैज्ञानिकी के क्षेत्र में एक विनम्र एवं अत्यधिक उपयोगी कड़ी होगा।

एकत्रित विभिन्न तथ्यों के सापेक्ष पूर्ण या आंशिक समता रखने वाले शोध पत्रों के अभाव में, इस अध्ययन का विस्तृत तुलनात्मक अध्ययन सम्भव नहीं हो सका है । अतः यह अध्ययन प्रारम्भिक सूचनायें प्रदान करने वाला है एवं संबन्धित समाज वैज्ञानिकों को आवाहन देता है कि इस प्रकार की शोध समस्याओं पर गंभीरता से विचार करके विस्तृत रूप रेखा में शोध कार्य करें । जिससे विद्यमान सामाजिक विविधताओं के बारे में समुचित जानकारी बृहद रूप में एकत्र हो सके । ऐसा सृजन विशिष्ट रूप से समाजशास्त्रीय क्षेत्रों के लिये अधिक हितकर होगा ।

वर्तमान शोधकार्य सैद्धान्तिक रूप से, यथा न्यायिक व्यवसाय के तथ्य, कानूनों का स्वभाव, कानून के अध्ययन से सम्बन्धित विभिन्न कारक, एवं बुन्देलखण्ड क्षेत्र के जनपद झाँसी में अहस्तक्षेपीय अपराधों से सम्बन्धित विभिन्न सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं राजनैतिक क्षेत्रों में व्याप्त शिथिलनीय व्यवस्थाओं का चित्रण प्रस्तुत करता है । इन व्यवस्थाओं के अध्ययन से भारत वर्ष के सन्दर्भ में अपरोक्ष धारणायें उत्पन्न होती हैं एवं बुन्देलखण्ड क्षेत्र के जनपद झाँसी के सन्दर्भ में परोक्ष रूप से धारणाओं का निर्माण होता है कि सामाजिकव्यवस्थायें एवं न्यायिक प्रक्रिया एक दूसरे से संलग्न है । इससे प्रस्तावित परिकल्पना की पुष्टि होती है / वर्तमान विषय सामग्री का विश्लेषण करने से प्रतीत होता है कि न्यायिक व्यवस्थायें हर स्तर पर सामाजिक व्यवस्थाओं से जुड़ी हुयी है । किसी एक व्यवस्था का व्यक्तिगत अस्तित्व वर्तमान शोध कार्य में दृष्टिगोचर नहीं होता है । कानूनों का संवैधानिक रूप स्थानीय स्तर पर बिल्कुल परिवर्तित प्रतीत होता है । न्यायिक व्यवस्थाओं एवं सामजिक व्यवस्थाओं के बीच अभिव्यक्तता एक महत्त्वपूर्ण कड़ी के रूप में प्रतीत होते हैं । कानूनों का वास्तविक समाजशास्त्रीय रूप इन अभिव्यक्तताओं के वाक् चातुर्य के माध्यम से निस्संदेह रूप से परिवर्तित होता जा रहा है/जिसके अनुकूल एवं प्रतिकूल प्रभाव ग्रामीण जीवन पर परिलक्षित होते है ।

वर्तमान शोध अध्ययन जो कि विभिन्न कारकों की दृष्टि ते तमाजशास्त्रीय क्षेत्र में व्यापक तूचनायें उपलब्ध कराने में उपयोगी होगा, का पुनर्विलोकन करने ते स्पष्ट रूप ते विदित होता है कि अहस्तक्षेपीय अपराध एक महत्वपूर्ण तमाज-प्रशातनिक तमस्या है। इत तमस्या के निदान के लिए न्यायिक प्रक्रियाओं का उचित योगदान विभिन्न स्तरों परअपेक्षित है। किती तमाज में कानून तामाजिक तंरचना के ताथ ताथ व्यक्तियों वर्तमान अध्ययन में अहस्तक्षेपीय अपराधों के तन्दर्भ में कानूनों को तामाजिक परिवर्तन का तकनीकी माध्यम माना गया है। इतकी वास्तविकता एवं निश्चितता के तन्दर्भ में वर्तमान स्तर कोई टिप्पणी उचित नहीं होगी क्यों-कि यह अध्ययन एकत्रित तथ्यों के आधार पर प्रारम्भिक तूचनायें देने वाला है। यह निश्चितरूप ते तमाजवैज्ञानिकों को आवाहन देता है कि अहस्तक्षेपीय अपराधों या अन्य अपराधों का तमाज न्यायिक दृष्टिकोण ते विस्तृत स्तर पर अध्ययन किया जाये। जितके द्वारा तांस्कृतिक मूल्यों की गरिमाको तुरक्षित रखा जा तके।

=:=:=:=:=:=:=:=:=:=:=

xxxxxxxxxxxxxxxxx

सन्दर्भ ग्रन्थों की सूची

Altmann, J. 1974 Observationnal Study of Behaviour Sampling Methods. Behavior pp.227-267.

Atkinson, E.T. 1874, Statistical description and hisotorical account of N.W. Provinces of India. (Vol.I-BKD.). Govt. Press. Allahabad.

Ahmad, M.B. 1981, The administration of justice in medieval India. Aligarh.

Alaxander, D. 1973, The History of Hindustan. Vol.III (Reprint). Delhi.

Alan,G. 1964, The Republic of India. Delhi.

Andrew, L. 1873, Law of India. Vol. II. Bombay.

Aristttole, 1905, Politics, Oxford University Press, London.

Aherlik, 1913, Sociology of Law, Germany. Bahadu

Bahadur, K.P. 1979-1980, History of Indian Civilization. Vol. I and Vol.II, ESS Publications. New Delhi.

Bhagwati, P.N. 1984, Rights of accused under Indian Constitution. (Ed.) Chaturvedi, A.N. Deep and Deep Publications, New Delhi.

Betle, A. 1979, Six Essays in Corporatiwe Sociology. Oxford University Press. New Delhi.

Barron, M.J. 1967, Crime and the Social Structure. Eebber and Febber Ltd.

Bhargawa, B.S. 1979, Panchayat Raj System and Political Parties. Ashish Publishing House. New Delhi.

Bestra. 1977, The Power and duties of magistrate. Law Book comp. Alhhabad.

Baxi, U. 1982, The Crisis of the Indian Legal System. Vikas Publishing House. New Delhi.

Basu, D.D. 1970 Commentaries on the constitution of India. Calcutta.

Bogardus, E.S. 1964, The development of Social Thought. (Vth Ed.): Allied Pacific Pvt. Ltd. Bombay, pp. 389.

Barnes, H.E. and Tester, W.K. 1951, New Horizon of Criminology. New York Prentice Hall INC.

Chaturvedi, A.N. 1984, Rights of accused under Indian constitution. Deep and Deep Publications. New Delhi.

Chitamber, J.B. 1973, Introductory Rural Sociology. Willey Eastern Ltd. New Delhi.

Chaudhary, P. 1982, The Indian Economy. Vikas Publishing House, New Delhi.

Charless, L. and Black, J.R. 1960 People and the Court. Macmillan, New York.

Cohen, A. and Rudolph, J. 1979, The criminal justice system. and its Psychology. Van Nostrand, Reinhort Comp. New Delhi.

Chowdhery, B.C. 1965, Socio-economic background of disciplined and indisciplined teenagers. The Indian Journal of Social Work. Vol XXV (No. 4) pp. 375-379.

Colley, C.H. 1909, Social Organisation. Charles Scruveners Sons. New York.

Chauhan, B. 1967. A Rajasthan Village, Vir Publishers. New Delhi.

Darwin 1809-82, Origin of Species. Harper Publications.

Davis, K. 1981 Human Society. Surjeet Publications. New Delhi.

Desai, A.R. 1982, Social Background of Indian Nationalism. Popular Prakashan Pvt. Ltd. Bombay.

Deepanker, A. 1968, Kautilya Kalin Bharat. Presg Press. Prayag.

Dube, S. 1971, Samajik Vighatan aur Sudhar. Saraswati

Dube, S.C. 1965, Indian Village. Allied Publishers Pvt. Ltd. Bombay.

Dubis. A.J.A. 1982, Hindu Manners Customs and ceremonies. Oxford University Press.

Drake Brademan, D.L. (1909-1929) Government Publication. India.

Davis, F.J. etal, 1962. Society and the Land. The Free Press of Glasgo. New York.

Darja, A.K. 1966, Socioèconomic Challenges and Laws responses in developing Countries. Journal of the Law. Indian Law Institute. (Bind 7th).

Elliott, M.A. and Merill, F.E. 1950, Social Organisation. Harper and Brothers, New York.

Elliot, H.M. 1972, History of India, Calcutta.

Ficher, J.H. 1974, Sociology. Chicago University Press, Chicago.

Fredrich Le Plenj 1806-1882, The Use of Case data in Social Research. In "Scientific Social Surveys and Research". (Ed.) Young, P.V. Prentice Hall of India, Pvt. Ltd. New Delhi. (1977), pp. 247.

Gautam, C.L. 1982, Manu Smiriti, Sanskrit Sansthan. Barreilly.

Ghosh, S.K. 1980, Protection of Scheduled Caste and Minorities. Ashish Publishing House. New Delhi.

Ghurye, G.S. 1932, Caste class occupation, Asia Publishing House, Bombay.

Grunhut, M. 1948 Penal reform and comparative study, Oxford Press.

Gangrack, K.D. 1966, Building a Village Community Through Economic Aid. The Indian Journal of Social Work, (No. 4) pp. 416-428.

Gurvitch, G. 1942, Sociology of Law. Philosophical Library, New York.

Hussain, M.G. 1983, Psycho-ecological dimensions of India. Manohar Book service, New Delhi.

Hutton, J.H. 1983, Caste in India, Oxford University Press, Bombay.

Hauser, P.M. and Duncan, 1959, The Study of Pupulation. Chicago University Press, Chicago. In " Scientific Social Surveys and Research. (Ed.) Young, P.V. Prentice Hall of India, Pvt. Ltd. New Delhi. pp. 141.

Hobel, E.A. 1924, The Law of Primitive Man. Harvard University Press. Cambridge.

Hobs, T. 1958, Leviathan, Oxford University Press, London.

Jagannathan, V. 1978, Administration and Social Change. Uppal Publishing House, New Delhi.

Jaiswal, K.P. 1927, Manu and Yagyavalkya, Tagore Law Lectures, Calcutta.

Johnson, H.M. 1966, 'Sociology : A Systematic Introduction. (Ed.) Merton, R.K. Allied Publishers Pvt. Ltd. Bombay, Calcutta, New Delhi, Madrass.

Kamble, N.D. 1982, The Scheduled Caste, Ashish Publishing House, New Delhi.

Kuppuswani, B. 1982, Social Change in India, Vikas Publication House, Pvt. Ltd. New Delhi.

Kapoor, J.C. 1982, India an uncommitted Society. Vikas Publishing House. New Delhi.

Katlin 1978, Administration and Social Change. (Ed.) Jagannathan, V. Uppal Publishing House. New Delhi.

Khan, S.A. 1983, Power Police and Public. Vishal Publications, Kurukshetra.

Lowell, A.L. 1937, An example from the evidence of history. "In factors determining human behavior". pp. 119-132, 634.

Marriot, M. 1973, Grameen Bharat, Rajasthan Hindi Grantha Academi. Jaipur.

Max.Mullar, 1977, The Sacred books of East. Vol. 33. Motila Banarsidas. New Delhi.

Mazumdar, R.C. 1920, Cororate life in Incient India. Calcutta.

Mitra, R.C.H. 1969, Bundelkhand Ki Sanskriti and Sahitya. Rajkamal Prakashan, Delhi.

Mohiuddin, 1980, Regional distribution of crimes in Rajasthan. ICSSR Research Abstracts Quarterly Vol IX (No. 1&2). Jan-Jun. pp. 64-72.

Manheim, H. 1949, Criminal Justice and Social Reconstruction, London.

Menon, N.R.M. 1967, A note on the law and practice relating to habitual Criminals in India. Mc. Grew Hill L.J. 13 pp.675.

Mazumdar, D.N. and Madan, T.N. 1955, An Introduction to Social Anthropology. Asia Publishing House, Bombay.

Manu, H. 1861, Ancient Law.

Nadel, S.F. 1965, The Theory of Social Structure. Cohn and West. Longon.

Nigam, M.L. 1983, Cultural History of Bundelkhand. Sandeep Prakashan, Delhi.

Norman, W. 1975, In "Traditional India" (Ed.) Sinzer, M. Rawat Publication, Jaipur.

Parsons, T. 1949, Social Classes and Class Conflict in Light of Recent Sociological Theory.

Parsons, T. 1965, The Social System. Free Press. New York.

Pauranik, K. 1983, Bhartiya Shashkiya Paramparayen. Dharam Singh Prakashan, Meerut.

Pim, A. W. 1903, Final Settlement report of Jhansi. Government of India Publication.

Pathak, S.P. Socio economic history of Bundelkhand region during later half of the 19th century. "A-Ph.D. Thesis." Agra University.

Radcliffe-Brown, A.R. 1957, A Natural Science of Society. Free Press, New York.

Rao, S.

Reckless, W. 1967, The Crime Problem. Meridith Publishing Comp. New York.

Ross, E.A. 1901, Social Control. Mc Millan Company, New York.

Reynold S.Ou 1950, Cour Room. Popular Library.

Russolk, J.S. 1947, Social Control.

Sparana, S.R. 1949, Mughal Government and Administration. Lahore.

Smelsor, N.J. 1970, Sociology. Wiley Eastern. New Delhi.

Sutherland, E.H. 1931, Social attitudes. (Ed.) K.Young. Henry Holt and Coy.New York.

Shamasastry,R. 1961. Kautilya Arthashasthra. Myssore.

Salmini, L. 1981, The Sociology of Political Praxis. London.

Spensor, H. 1820-1903, Cited in "Scientific Social Surveys and Research. (Ed.) Young, P.V. Prentice Hall of India, Pvt. Ltd. New Delhi.

Sriniwas, M.N. 1973, Social Organisation of Village in Mysore. In " Grameen Bharat". (Ed.) Marriot, M.Rajasthan Hindi Grantha Academi.

Singh, K.K. 1967, Pattern of Caste Tension.
Asia Publishing House, Bombay.

Singh, Y. 1980, Social Stratification and changes in India. Manohar Publication, New Delhi.

Sharma, K.L. 1980, Relations between Lawyers and their Clients. ICSSR Research Abstract Quarterly. Vol. IX (No. 1&2) Jan-Jun. pp. 11-15.

Seervai, H.M. 1975-76. Constitutional law of India. Vol. I & II) , Bombay.

Setalvad, M.C. 1960, The common Law in India. Hamlyn Lectures London.

Steel (Jr.), W.W. 1969, The doctrine of right to counsel. Its impact on the administration of justice and legal profession. pp. 23,488.

Sharma, K.M. 1972, Law and order and the protection of the rights of accused in the United States and India-A general framework for comparison. Buffalo L.Rev. 21, 361.

Swaroop, B.B. 1967-68, Vidhi Ka Samajshastra ; Vikas aur Dishayan. Samajshastra Parishad Kashi vidhya pith. Varanasi.

Swaroop, B.B. 1967-68, Samaziki (z) pp. 59-68.

Summer, W.G. 1907, Folkways, Jin and comp. Boston.

Taylor, I. 1981, Law and Order, argument for Socialism. Great Britain.

Tavernier, J.B. 1921, Travels in Indian 1641-47, (Ed.) S.W. Foster, Oxford.

Tripathi, P.K. 1960, Preventive Detention, The Indian Experience. Ame. J. Com. L. (9). pp. 219.

Tripathi, P.K. 1966, Should the Nexus be "Rational or Reasonable". Justice Gajendragadkar and Constitutional interpretations (8), J.I.L.I.

Timsheff, N.S. 1939, Sociological law technics. In "Introduction to the Sociology of Law". Harvard.

Vardhan, S. and Lal, S. 1972, Annihilation of Caste (Originally Edited by B.R. Ambedkar) Quoted John, D. Hindi Translation. Bahujan Kalyan Prakashan, Lucknow.

Venugopal, S.R. 1983, Crime in our Society. Vikash Publishing House. New Delhi.

Verma, B.L. 1969, Bundelkhand K Sanskriti and Sahitya. (Ed.) Mitra, R.L.H. Rajkamal Prakashan. Delhi.

Wilson, J.(Oi), 1983, Police and their problem. Macmillon. New York.

Wrights, S. 1968, The role of supreme court in a democratic society-Judicial activism or restraint, (54). Cornell L.R.I.

Young, P.V. 1977, Scientific Social Surveys and Research. 4th Ed. Prentice Hall of India, Pvt. Ltd. New Delhi.

****

OTHER DOCUMENTS

Law Journals and Books.

Agrawal, O.P. 1966, Specific Relief Act. Metropolitan Book Comp. Ltd. Delhi.

All Indian Reperter 1950-1985, Nagpur. India.

Allahabad Criminal Cases, 1950-1985, L.B.C. Allahabad.

Criminal Law Journal, 1940-1985, L.B.C. Allahabad.

Civil Prodedure Code, 1908, Govt. Publication.

Lucknow Law Timco, 1950-1985, L.B.C. Allahabad.

Prasad, V. 1980, Code of Criminal Procedure, Hindi Publishing House, Allahabad.

Raju, V.B. 1976, Commentaries on Indian Penal Code, Eastern Book Comp. Lucknow.

Singhal, B.R.P. and Das, N. 1981, Woodroffe & Amirali s, Law of Evidence, Vol. 1,2,3&4, Law Book Company Allahabad.

Supreme Court Cases, 1950-1985, L.B.C. Allahabad.

Middleton Population Supervisor-1921, Caste and race in India.(Ed.) G.S. Ghurge. Harper P Publication.

Sharma, L.R. 1982, Maharani Laxmi Bai Janam-Divas Samaroh Patri Ka (19th Nov.) Jhansi.

Bhattacharya, S.L. 1963, Swatantra Sangram Ke Sainik. Jhansi Division, Information Department, Govt. of Uttar Pradesh.

District Gazetteer of United Provinces of Agra and Awadh 1916, Vol. 24, Govt. of India Publication.

Gandhi, M.K. 1927, Young India (14th April).

Ashant, M. 1973, Jhansi Darshan-Laxmi Prakashan, Mauranipur.

Sathi, C.L. 1982, Pichhrey Vargon Ka Arakshan Bahujan Kalyan Printing Press, Lucknow.

Statistical Report, 1981, 82, 83, Government of Uttar Pradesh India.

Nationa- Census Report - 1971, 1981, Government of India.

****

=============

:::::::::::::

परिशिष्ट

साक्षात्कार अनुसूची का प्रारूप

साक्षात्कार अनुसूची

1. सामान्य सूचना

दिनांक :- - - - - - -

शोधकर्ता :- - - - - - - - -

1. नाम :- - - - - - - - - - - - - - - - -
2. जाति :- -
3. आयु :- -
4. व्यवसाय:- -
5. शिक्षा :- -
6. पता :- -

   -
7. वैवाहिक स्तर :- -
8. निवास ।- ग्रामीण/शहरी । - - - - - - - - - - - - - -
9. संबंधित अपराध की धारा :- - - - - - - - - - - - - - - - -
10. कार्य दिवस में अनुमानित कार्य के घण्टे :- - - - - - - - - - - -
11. आपके मुकदमे से कुल कितने व्यक्ति संबंधित हैं ? - - - - - - - - -

    अपराधी :- - - - - - - - - - पीड़ित :- - - - - - - - -

    साक्षी :- - - - - - - - - - - -
12. क्या आपके विरूद्ध इसके पूर्व कोई मुकदमा चला है :- - - - - - - -
13.

2. अपराधी

1. आपने झगड़ा क्यों किया था ? - - - - - - - - - - - - - - -
2. मुकदमा क्यों चला है ? - - - - - - - - - - - - - -
3. आपके विपक्षी को प्रोत्साहन किसने दिया है ? - - - - - - - - -
4. क्या आप गिरफ्तार हुये हैं ? - - - - - - - - - - - - - -
5. पुलिस की भूमिका आपके साथ कैसी रही ? - - - - - - - - - -
6. न्यायालय में क्या निर्णय हुआ है ? ।सजा/बरी/राजीनामा। - - - -

7. राजीनामा कैसे संभव हुआ है ? ------------------
8. क्या आपने गवाहों को तोड़ा है ? ------------------
9. क्या वास्तव में गवाहों ने घटना देखी थी ? ---------
10. गवाहों की भूमिका आपके मुकद्दमे में कैसी रही ? --------
11. क्या आपने किसी प्रभाव का प्रयोग किया है ? --------
12. क्या आप समझते हैं कि आर्थिक सम्पन्नता का न्यायिक प्रक्रिया पर प्रभाव पड़ता है ? ---------------
13. क्या आप समझते हैं कि जाति/धर्म आदि सामाजिक कारकों का न्यायिक प्रक्रिया पर प्रभाव पड़ता है ? ------------
14. न्यायिक प्रक्रिया के बारे में आपका क्या मत है ? -------
15. ग्रामीण नेतृत्व से आपका क्या संबंध है ? ------------
16. हरिजनों के विशेष संरक्षण के बारे में आपका क्या मत है ? ---------------------
17. न्यायिक प्रक्रिया से आपका क्या परिवर्तन हुआ है ? ------

3. पीड़ित

1. झगड़े का क्या कारण था ? ---------------
2. पुलिस की भूमिका आपके प्रति कैसी रही ? ----------
3. आपको न्यायालय कितनी बार जाना पड़ा है ? ---------
4. आपने कैसा ब्यान न्यायालय में दिया है ? ----------
   (समर्थन/विरोध/राजीनामा)
5. इस तरह के ब्यान देने का क्या कारण है ? ----------
6. राजीनामा किस आधार पर हुआ है ? -----------
7. ग्रामीण राजनीति से आपका क्या संबंध है ? ----------
8. न्यायिक प्रक्रिया के बारे में आपका क्या मत है ? --------
9. वर्तमान न्यायिक व्यवस्था के बारे में आपका क्या मत है ?----

4. साक्षी

1. क्या आपने घटना देखी थी ? ----------------
2. दरोगा जी ने आपसे पूछताछ की है या नहीं ? ---------
3. आप साक्षी कैसे बन गये ? स्वेच्छा से, पुलिस के दबाव से पीड़ित की मदद करने या अन्य कारणों से ----------------
4. आपने कैसा साक्ष्य न्यायालय में दिया है ? -----------
5. आपने स्वेच्छा से वास्तविक साक्ष्य दिया है या नहीं तो आपका साक्ष्य किन कारणों से प्रभावित हुआ है ? ------------------
6. आपको क्या परेशानियाँ इस प्रक्रिया में हुईं ? ---------
7. आपका खर्चा कितने बर्दाश्त किया है ? -------------
8. न्यायिक प्रक्रिया के बारे में आपके क्या विचार हैं ? -------

5. अन्य सूचनायें